जादू का मुल्क

राहुल सांकृत्यायन

जादू का मुल्क

लेखक
राहुल सांकृत्यायन

प्रकाशक
आधुनिक पुस्तक भवन
३०।३१ कलाकर स्ट्रीट
कलकत्ता

जादू का मुल्क

बोमा

कुमार नरेन्द्र धीरे से खड़े होते हुए बोले—'फत्यव्रत ! यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मेरे फाथ चल फकते हो । और नहीं तो फंकरफिह के फाथ तुम जार्जटाउन में भी उतर फकते हो । तुम अपने ही फोच लो मेरे बच्चे ! तीन हज़ार मील वायुयान फे अटलांटिक पार । बड़ा भयानक काम है फत्य, किन्तु कुल मिलाकर बहुत थोड़े दिन की यात्रा है, और यदि तुम मेरे फाथ आते हो तो महीनों लगेंगे, और जिफमें प्रतिदिन प्राण जाने का भय है । फोच लो, मैं फंफार के एक बड़े भयानक फ्थान में जा रहा हूँ, जहां नरभक्षक, निफाचर, जंगली जानवर, ज्वर और कीड़े-मच्छर भरे हैं, जहां हम भूख के मारे मर जा फकते हैं, या जंगल में फदा के लिये भूल फकते हैं । जितना ही मैं इफे फोचता हूँ, मुझे तुम्हारा फंकर के फाथ जाना ही ठीक जँचता है ।'

कुमार नरेन्द्र के भाषण का ढंग ठीक-ठीक उतारना बहुत कठिन है । उनके शब्दों के उच्चारण और स्वर में बहुत सी विशेषताएं हैं । सबसे मुख्य तो यह है कि उनकी वर्णमाला में श, ष, स हैं ही नहीं, वह सदा इनकी जगह फ बोलते हैं । वह बात करने में रुक-रुक कर बोलते हैं । वह अच्छी पोशाक में थे । उनका मुलायम फौजी बूट ऐसा पालिश किया हुआ था, कि शीशे की भांति चमकता था । वह घुड़सवारी की ब्रिजिस पहिने हुए थे, उनका बंगला केश बहुत अच्छी तरह कंघी से झाड़कर बीच से फाड़ा हुआ था । किसी भी आदमी के लिये, जो उनसे दस हाथ दूर भी हो, यह जान लेना बिलकुल आसान है कि उनको अतर लगाने का बड़ा शौक है ।

सत्यव्रत बोमा के एकमात्र होटल के बराण्डे में बैठा हुआ था। दस बजने का समय था। शाम ही से पूर्ण चन्द्र उदय हुआ था। बर वह कांगो नदी की शाखा को अच्छी तरह देख सकता था, वही रहस् कांगो, जो क्रूरता और आश्चर्य की नदी है, जो बड़े ही विकट घने व से होती हुई तीन हजार मील तक बहती है। नरेन्द्र लड़के के उत्त प्रतीक्षा में फिर कुर्सी पर बैठ गये।

लड़के ने कहा—'मैं आपके साथ ही चलना पसन्द करता हूँ।'

नरेन्द्र—'बहुत अच्छा फ़्त्य, चलो मेरे फ़ाथ, मुझे कोई उज़्र नहीं है बड़े आफ़्चर्य की बात है कि हम तुम ऐफ़े अजनबी जगह पर एक दूफ़रे फ़े मिले। मुझे फ़्मरण है, जब कि मैंने तुम्हें कुछ महीनों का बच्चा देखा था। तुम्हारे पिता ने एक भयंकर हैजे फ़े मेरे प्राण बचाये थे। वह हमारे बहुत पुराने गृह-चिकित्फ़क थे।'

अब लड़का झट खड़ा हो गया और बोला—'उसका जिक्र मत कीजिये। मुझसे यह सहन नहीं हो सकता। अब भी मुझे विश्वास नहीं होता कि यह सच बात है।'

उसका गला भर आया। वह बराण्डे के छोर पर चला गया, और कटहरे के सहारे झुककर रात्रि की ओर देखने लगा। उसकी अवस्था सोलह वर्ष की थी। उसका दिल बहुत भारी मालूम होता था।

अभी कुछ ही सप्ताह हुए जब कि उसके पिता डाक्टर प्रियव्रत अप पुत्र के साथ बोमा आये थे, जहां कांगो स्वतंत्र राज्य की बेल्जियम गवर्न मेण्ट के मातहत उन्हें एक प्रधान चिकित्सक का पद मिला था। अपने सारे जीवन में डाक्टर प्रियव्रत ने उष्ण प्रदेश सम्बन्धी रोगों का एक विशेष अध्ययन किया था। और उन्होंने अब भी कांगो में काम करना इसी अभि प्राय से स्वीकार किया था। किन्तु बोमा में आने के कुछ ही दिनों बा बहुत जोर से बीमार हो गये। उनकी यात्रा बहुत कष्टप्रद हुई थी वह बम्बई से चले थे, दो ही दिन की यात्रा के बाद सामुद्रिक तूफ़ा उनका जहाज बड़ा विपद्ग्रस्त हो गया था, डाक्टर ने स्वयं कहा था,

सामुद्रिक अस्वस्थता ने (जिससे कि वह बहुत रुग्ण हो गये थे) मेरे हृदय को बड़ी हानि पहुँचाई है। इसके अतिरिक्त जिस समय वह कांगो में तो उस उतरे समय दिन अत्यन्त गरम था। इस प्रकार उनकी बीमारी और भयंकर हो उठी और अन्त में डाक्टर इसी बीमारी में अपने शरीर और अपने एकलौते बेटे--दोनों को अनाथ छोड़ चल बसे।

सत्य का अब कोई नहीं है। उसकी माता का देहान्त कई वर्ष पूर्व ही हो चुका था। संसार के ऐसे आश्रयहीन स्थान में पड़ा अपने बारे में वह कुछ नहीं सोच सकता था। वहां बहुत से आदमी थे जो सत्य के मित्र बनना चाहते थे, वह चाहते थे कि उसको भारत भेजने का प्रबन्ध कर दें। अपने पिता के अन्त्येष्टि संस्कार के बाद ही, सत्य ने जहां तक जल्दी हो सके बोमा छोड़ने का इरादा कर लिया था।

प्रसिद्ध उड़ाका शंकरसिंह, जिसने वायुयान द्वारा समस्त भूमंडल की परिक्रमा अभी ही समाप्त की थी, अब एक दूसरी वायुयात्रा---काशी और जार्जटाउन (बृटिश गायना) के बीच---करने वाला था। रास्ते में उसे बम्बई, मुम्बासा और बोमा में उतरना था। इनमें से पहिले दो स्थानों को वह सकुशल पार कर चुका था, अब बोमा में आया था। भारतीय महासागर को पारकर जब वह मुम्बासा में उतरा तो वहां के सारे भारतबासियों तथा और निवासियों ने उसका बड़ा स्वागत किया। केन्या के ऊपर से कांगो के जंगलों को देखता वह कांगो नदी के मुहाने पर इसी बोमा में उतरा था। शंकर अपने साथ एक और यात्री लाया था, यह थे कुमार नरेन्द्र, वर्त्तमान महाराजा काशी के कनिष्ट भ्राता, जिनका जिक्र ऊपर कुछ आ चुका है। कुमार नरेन्द्र शंकर के साथ दक्षिण अमेरिका के जार्जटाउन (बृटिश गायना) को नहीं उड़ना चाहते थे। उनका इरादा था, कांगो की एक बड़ी शाखा---कसई नदी के ऊपरी भाग के पड़ताल करने का। बोमा में उनका असबाब---जिसमें बन्दूक, पिस्तौल, गोली-बारूद और इनके अतिरिक्त अनगिनत बक्स, ट्रंक थे, जिसमें खाने की चीजें, कपड़े और-और यात्रोपयोगी अनेक चीजें थीं---पहिले ही जहाज से आ चुका था। इस यात्रा

का प्रयोजन कुमार के अपने ही शब्दों में कहना अच्छा होगा, जिसे कि उन्होंने सत्य से बात करते हुए कहा था—'भारतवर्ष, मेरे प्यारे फ़त्य, अब भार-तीयों के रहने के लिये पर्याप्त नहीं है, खाफ़कर उत्तरी भारत, विफ़ेफ़कर युक्तप्रान्त और उत्तर विहार तो इतना घना बफ़ा हुआ है, कि उतने आदमी वहां आदमी की भांति जिन्दगी हर्गिज नहीं बिता फ़कते । जहां देहात में प्रति वर्ग मील आठ फ़ौ और नौ फ़ौ आदमी बफ़ें, वहां फ़ुख की आफ़ा क्या की जा फ़कती है ? काफ़्तकार जमीदारों के जूये ढोते-ढोते तंग आ गये हैं । रेलवे वाले कोयले वाले मजदूरों की फ़हानुभूति में हड़ताल करने जा रहे हैं, और कोयले वाले कारखाने वाले मजदूरों की फ़हानुभूति में । इफ़ प्रकार चारों ओर अफ़न्तोफ़ की बीमारी फैली हुई है । यही वजह है, जब मैंने अखबारों में फ़ुना कि कांगो के भीतरी भाग में अब भी वह महाकाय जन्तु वर्त्तमान हैं, जिन्हें क्या कहते हैं ?—कुछ—फरट । हां, जिफ़की फ़ूरत कांगरू और मगर के बीच की है । मैंने कहा, छोड़ो इफ़ रात-दिन की हैहै पटपट को, चलो चलिये इनका फ़िकार कीजिये । फिर मैंने फ़ुना, फ़ंकर पृथ्वी के उफ़ भाग की ओर उड़ने जा रहा है, तो मैंने कहा कि फिर ऐफ़े विचित्र काम के लिये उफ़की यात्रा भी विचित्र होनी चाहिये । मैं चाहता था, किफ़ी प्रकार उफ़ अफ़ान्तिपूर्ण वातावरण फ़े निकल भागूं । मैं अरुँगा उपत्यका के ऊपरी ओर, अपने विचित्र यात्राक्रम में जा रहा हूँ । मैंने इफ़के विफ़य में बहुत पूछ-ताछ कर ली है, जिफ़ जिला में वह 'कुछ' है, उफ़का भी पता लगा लिया है, हां, उफ़का नाम—? उहँ, अभी जीभ पर था । वह एक छोटे पेड़ के बराबर ऊँचा है, लम्बा इतना, जितनी एक पूरी मालगाड़ी की ट्रेन । किन्तु मेरे पाफ़ खूब जोरदार फ़न्ननेवाली और चिकने फ़िरवाली गोलियां हैं, जो उफ़का काम जरा देर में तमाम कर देंगी । वह एक गोली यदि हाथी के लग जाय, तो आदमी के फ़िर के बराबर छेद कर दे । पहिले मेरी तबियत फ़ान्ति फ़ान्ति चाहती थी, किन्तु इफ़ फ़मय तो मुझे अफ़ान्ति अफ़ान्ति ही पफ़न्द आती है, क्यों ? किफ़ी प्रकार हमें आनन्द फ़े रहना चाहिये । वहां वह फ़ारे किफ़ान मजदूर गोलमाल मचा रहे हैं । वह न

जाने क्या लाना चाहते हैं ? यदि इफ़ कुछ, फरट ने कोई राफ़्ता न निकाला, तो मैं नहीं फ़मझता, मैं क्या करूँगा ? और फ़त्य, यह अफ़ली मतलब है ।'

सत्य को अपने बाल्य के वह दृश्य याद आ रहे थे, जब कि वह अपनी दाई के साथ महाराजा के प्रमोद कुंज में टहलने जाया करता था । स्वर्गीय महाराजा के देहत्याग के बाद, कुमार नरेन्द्र के बड़े भाई महाराजा हुए, जो कि उस समय सवारों की सेना में एक अफ़सर थे । पहिले महाराजा और सत्य के पिता में बड़ी दोस्ती थी, उन्हें गंगा में झिझरी खेलना तब तक पसन्द न आता था, जब तक डाक्टर प्रियव्रत साथ न होते थे । बुढ़वा-मंगल को जब महाराजा का बजरा सज कर निकलता, तो उस समय भी महाराजा के पास डाक्टर बैठे रहते । सत्यव्रत के पिता भी अवध के एक बड़े भारी ताल्लुकेदार के खानदान से थे, किन्तु भाग्यचक्र ने उनके खानदान के उस वैभव को छीन लिया । गदर में उनकी यह ताल्लुकेदारी एक झूठे शक पर जप्त कर ली गयी । लखनऊ के वैभवके जमाने से दोनों राज्यवंशों में बड़ा प्रेम चला आता है । नवाब एत्मादुद्दौला के शासन में कई बार दोनों वंशों के वीरों ने साथ-साथ अपने नवाब के लिये कई लड़ाइयां जीती थीं ।

यह वजह थी कि इन—सोलह वर्ष के लड़के और उससे दस वर्ष के बड़े जवान—के विचार इतने समान थे । दोनों अभी होटल में ठहरे हुए थे, और अब दोनों साथ ही एक ऐसी यात्रा में जा रहे हैं, जहां कष्ट, सर्वनाश के सिवा कुछ नहीं ।

कुमार नरेन्द्र की आकृति देखने में निश्चय प्रभावशाली थी । किन्तु, यह उन आदमियों में थे, जिन्हें कलकत्ता और बम्बई के साधारण चालबाज भी अपनी चाल में फँसा सकते हैं । यद्यपि बड़े भोले-भाले थे, किन्तु वह बेवकूफ होने से कोसों दूर थे । वह किसी भी नीच कर्म और नीच कथन के लिये सर्वथा अयोग्य थे । वह बड़े मधुर-भाषी और भय से पूर्णतया अपरिचित थे ।

इसी समय बराण्डे में एक दूसरा नौजवान भी आकर सम्मिलित हो गया। वह इनसे भिन्न ही ढांचे का आदमी था। उसका रंग गेहुँआं, मूंछ-दाढ़ी साफ़, गोल चेहरा और आंखें विशेष प्रकाशवाली थीं। यह शंकरसिंह था, जो पक्षियों की भांति हवा में विहार करता था। जो अभी बाल्य ही में अपने प्रसिद्ध वायुयान 'हंस' के साथ अपनी उड़ने की चालों और भयंकर तथा लम्बी यात्राओं द्वारा मशहूर हो गया था।

शंकर—'अच्छा? क्या बात तै हो गयी? मैं कल जार्जटाउन के लिये रवाना हो रहा हूँ। तुम तो नरेन्द्र, यहां ठहरोगे, किन्तु यदि यह लड़का मेरे साथ आना चाहे तो मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ ले चलूंगा।'

नरेन्द्र—'नहीं, अब इसके विषय में कुछ कहना सुनना नहीं है, सब बात ठीक हो गयी है। हम अब उस 'कुछ' फरट के लिये अपना समय देना निश्चित कर चुके हैं। अतः अब तुम स्वयं जार्जटाउन जाओ और लोगों की करतलध्वनि और वाह-वाह लूटो। दक्षिणी अमेरिका के समाचार-पत्रों में एक बार फिर अपने चित्र और अपनी प्रशंसा के पुल देखकर तृप्त हो। किन्तु एक बात—फिर वहां से तुम भारत को लौटोगे न?'

शंकर—'आशा तो है।'

नरेन्द्र—'कब?'

शंकर—'मुझे अभी कई महीने दक्षिणी अमेरिका में रहना है। रायो-दि-जेनरो, साओ पाउलो, बहिया, ब्युनस आयरेस, तथा अन्य दक्षिणी अमेरिका के कितने ही नगरों और ब्राजील के अगम्य आन्तरिक जंगलों को देखना है। जमैका और गायना के देश-बन्धुओं ने बड़े आग्रहपूर्वक निमंत्रित किया है। मुझे कई नगरों में वहां अपने वायुयान फ़ैक्टरी के सम्बन्ध में बहुत कुछ करना है। खास-खास शहरों में एजेंसियां खोलनी हैं।'

नरेन्द्र—'यह तो अच्छा है। यदि भाग्यचक्र घूम गया, उसने हमारा साथ न दिया, तो हम सब फिर जंगल में भूल जायँगे। तुम लौटते समय ल्युपाल्ड झील से अरुंगा उपत्यका की ओर घूम जाना, जो कसई नदी से दक्षिण तरफ कहीं है। यदि लाल झंडा या लाल रोशनी वहां कहीं देखना

तो हमारे ऊपर विपत्ति पड़ी फ़मझना और हमें लेने के लिये उतर पड़ना। मैं फ़मझता हूँ, कांगो के जंगलियों को वायुयान का दिखाई देना ही बड़े भय का कारण होगा। क्या फ़मझते हो ?'

शंकर—'यदि मेरी राय चाहते हो, तो उन घने जंगलों में और हजारों कोस के बीच दो आदमियों और उनकी लाल झंडी का खोज पाना असम्भव सा है। यह घास की ढेर में सूई का खोजना होगा। तो भी जैसा तुम कहते हो, मैं करूँगा। यद्यपि इस आशा से नहीं कि मैं तुम्हें पा सकूंगा, बल्कि उन अद्भुत घोर जंगलों को देखने के लिये। मैं इस तरह राष्ट्रीय भौगोलिक समिति के लिये भी कुछ काम कर सकूंगा। यदि इस सफर में मैं किसी प्रकार तुम्हारे कष्ट में सहायक हो सका, तो मुझे बड़ी खुशी होगी।'

नरेन्द्र—'किन्तु पहिले तो ऐफ़ी आफ़ा ही नहीं है। अच्छा, बच्चा फ़त्य, जाओ फ़ो जाओ, फ़वेरे का फ़ोना और मुर्ग की बांग पर उठना मेरा नियम है। किन्तु उफ़ जंगल में मुर्ग कहां मिलेगा ? अच्छा हिप्पोपटमफ़ के फ़ाथ फ़ोना, और मगर के फ़ाथ जागना यह तो है न।'

अब सब लोग बराण्डे से अपने-अपने बिछौने पर गये।

भाग्य-निर्णय

यदि कोई किसी नवीन एटलस पर दृष्टि डाले—तो कांगो की सबसे बड़ी शाखा नदी कसई, कांगो के मुहाने से छ: सौ मील हटकर प्राय: समकोण पर प्रधान धार से मिलती है। इस जगह कांगो नैऋत्य कोण की ओर बहती है, और कसई वायुकोण की ओर। यद्यपि इस शाखा नदी का पता १८८५ ई० में ही लग चुका था, किन्तु उसके विषय में अब भी संसार अन्धकार ही में है। दोनों नदियों के द्वारा बने कोण से आरम्भ हुआ, वह विस्तृत प्रदेश यथार्थ में बिलकुल अज्ञात है। नकशा देखने से यह पता लगेगा कि वहां इतना स्थान कोरा पड़ा हुआ है। किसी भी गांव, नगर या बस्ती का नाम नहीं है। नदियां बिन्दुओं द्वारा प्रदर्शित की गई हैं जो इस बात का पता देती हैं, कि अब भी भौगोलिक उनके यथार्थ प्रवाह स्थान से अपरिचित हैं। यदि चित्र नृतत्वशास्त्र सम्बन्धी है, तो वहां तुम्हें पम्बाला लिखा मिलेगा। अर्थात् उक्त जाति इस प्रदेश में निवास करती है।

यह प्रदेश था, जिसकी खोज के लिये कुमार नरेन्द्र और सत्यव्रत, बीस देशियों के साथ, जिन्हें उन्होंने बोमा में मजदूरी पर ठीक किया था, रवाना हुए। वे लोग म्स्वाता तक अग्निबोट के द्वारा गये। इसके बाद बंगुलू तक एक छोटे स्टीमर में। अब यहां से उन्होंने डेंगियों पर यात्रा आरम्भ की, और तीन सौ मील की यात्रा के लिये उन्हें कई सप्ताह लगाने पड़े, क्योंकि पानी कम और मार्ग में अड़चनें थीं।

अब वे लोग सभ्य जगत् से बहुत दूर, भयानक जंगल के मध्य में थे। इस साहस के लिये अत्युक्ति कहना असम्भव है। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि वह दोनों ही अनुभव-शून्य थे। न नरेन्द्र और न सत्य ही उस देश के विषय में कुछ जानते थे और न वहां की भाषाओं में से एक का भी एक शब्द बोल सकते थे। देशी वाहकों में से सिर्फ एक था, जो हिन्दी बोलता

था। और वह अहंगा उपत्यका तक उन्हें पहुँचा देने के लिये पथ-प्रदर्शक हुआ था।

नरेन्द्र और सत्यव्रत ने अपने जीवन में बहुत काफ़ी सफर किये थे। वे सचमुच पृथ्वी के बहुत से देशों को देख चुके थे। किन्तु अब तक की उनकी सारी यात्रा राजसी हुई थी। बड़े-बड़े जहाजों के फ़र्स्ट क्लास कमरों में चलना, उत्तम से उत्तम होटलों में ठहरना, एक मील जाने के लिये भी टेक्सी और विक्टोरिया का आश्रय लेना, अर्थात् सभ्य जगत् की सभी सुख सामग्रियों से अवंचित रहकर ही उन्होंने अभी तक भूगोल-भ्रमण किया था। ऐसी अवस्था में पता लग सकता है कि उनके लिये यूको हामा का ओरियंटल होटल, और होनोलुलू का अलेक्जेण्डर यंग काशी के राजभवन से कम न थे।

नरेन्द्र और उनके नवयुवक साथी को मच्छरों ने काट-काट कर परेशान ही नहीं किन्तु, कुरूप भी बना दिया। मलेरिया उनके पीछे लग गया। प्रति सूर्यास्त को जूड़ी के मारे वे कांपने लगते थे। अब वे कुनैन की टिकिया पर टिकिया निगलने पर बाध्य थे तथापि वह अपनी यात्रा से अत्यन्त प्रफुल्लित थे। इस यात्रा के आनन्द के उपभोग में नरेन्द्र, सत्यव्रत से कम न थे।

अपने पथ-प्रदर्शक के कहने पर अब उन्होंने कसई की प्रधान धारा को छोड़कर एक पतली बेनाम की धार को पकड़ा। अब उनकी यात्रा दक्षिण की ओर हो रही थी। यह नदी थोड़े दिन की यात्रा के बाद इतनी पतली हो गयी, जितनी कि हरदोई के जिले में गोमती। दोनों तटों पर वृक्ष और बड़ी-बड़ी बहुत घनी घासें उगी हुई थीं। किन्तु कहीं-कहीं जंगल में कुछ दूर तक फांक दिखाई देती थी। ये वे प्रदेश थे, जहां जंगल के रहने वाले जन्तु पानी पीने आया करते थे।

सूर्यास्त और सूर्योदय के समय वे इन स्थानों को देखते रहते थे, और उनकी इस प्रतीक्षा के फलस्वरूप एकाध फैर करने को मिल जाता था।

किनारे पर से खींचते आगे बढ़े। यद्यपि प्रपात दूर नहीं था और वह लोग बड़े जोर से खींचने में लगे हुए थे, किन्तु उस जगह तक पहुँचने में उनका सारा दिन लग गया। वहां पानी ५०-६० फीट की दूरी से बड़े जोर के साथ गिर रहा था।

अब उन्होंने नावों को ख़ाली कर दिया, और चीजों को प्रपात से पाव मील आगे पहुँचाना शुरू किया। कुल्हाड़ियों से रास्ते की डालों और लकड़ियों को काट साफ़ कर, उन्होंने डेंगी को शिर पर उठा आगे पहुँचाया। वहां से आगे पानी ठीक था। यह काम बहुत ही मिहनत का था, और इसके करने में एक दिन लग गया। देशी पहिले ही से असन्तुष्ट थे, अब इस थकावट से उन्होंने दोपहर भर विश्राम करने की छुट्टी मांगी।

दोपहर के बाद फिर दक्षिणाभिमुख यात्रा आरम्भ हुई, किन्तु जल्द ही फिर धार वैसी ही हो पड़ी। किनारे पर जंगल और घास भी बहुत जोर की थी। अब सिर्फ़ एक रास्ता था, रस्सा से बांध कर खूब जोर-जोर से नाव को आगे खींचना। यह राय पथ-प्रदर्शक ने दी थी, अतः इसके द्वारा आगे हुई हानि का जिम्मेवार वह ही था।

रस्सा को नाव से बांध कर एक वृक्ष में एक फेरा लपेटा गया, अब 'रस्सा' खींचने की भांति सभी लग कर रस्से के छोर को वृक्ष रूपी घिर्नी से ऊपर से खींचने लगे। इस प्रकार पहिली नाव सुरक्षित वृक्ष के पास पहुँच गयी वहां उसको बांध दिया गया। अब वही कार्रवाही दूसरी नाव के साथ हुई। यह नाव असबाब वाली थी, और बहुत भारी थी। जोर लगाया जाने लगा, थोड़ी देर में वृक्ष की छाल अलग हो गयी, और थोड़ी ही देर बाद रस्सा दो टुकड़ा हो गया। अब उस तीक्ष्ण धार में नाव तीर की भांति उड़ चली। सौभाग्य से उस पर कोई आदमी न था, अन्यथा वह इस धार में कूद कर तैर भी न सकता था।

कुमार नरेन्द्र विह्वल हो चिल्ला उठे—'फ़त्य, फ़त्य, देखो, हमारा फ़ारा ही फ़ामान बह चला, अब हमारे पाफ़ कोई उपाय नहीं कि उफ़े

बचावें। बन्दूक, कारतूस, कुल्हाड़ियों के अतिरिक्त अब हमारे पाफ़ कुछ न रहा।'

सचमुच कितने ही बुद्धिमान् और धैर्यशील पुरुष के लिये भी उस समय उसकी रक्षा में कुछ करना असम्भव था। रस्सा टूटते ही मांगा घूम गया, पानी की धार ने जो एक बार जोर किया तो, नाव करवट होकर उलट गयी। नाव फिर उड़ चली। भागते-भागते जब वह प्रपात पर आयी, तो ऊपर से पानी के साथ नीचे वाले पत्थर पर गिरी और चूर-चूर हो गयी।

देशी जो कि टूटे रस्से को पकड़े हुए पीछे के बल गिर गये थे, चकित और भयभीत दृष्टि से वहीं किंकर्त्तव्यविमूढ़ हुए पड़े रहे। सत्य एक भी शब्द मुंह से निकालने में असमर्थ था। और नरेन्द्र के विषय में? उन्होंने एक बार देखा, फिर शिर का पसीना पोंछा और कहा—'फ़त्य, अब हम फटकचन्द गिरधारी हैं। हजारों कोफ़ दूर इस निर्जन वन में थोड़ी फ़ी मीठी टिकिया और औफ़धपेटिका के अतिरिक्त हमारे पाफ़ कुछ भी खाने को नहीं है।'

लड़के ने उत्तर दिया—'निश्चय'। किन्तु इस जंगल में हैं। बहुत कुछ उम्मीद है कि यहां हमें मकोय, करौंदा, बेर या और तरह के फल मिलेंगे।'

नरेन्द्र—'मैंने किताबों में पढ़ा है, कि अफ्रीका के जंगलों में कुछ खोज पाने की जगह, भूखों मरना ही आफ़ान है। मेरे खयाल में यहां झरबेरी होती है, यदि हम उफ़े खोज पायें। देफ़ी लोग उफ़का फ़त्तू बनाते हैं। कच्ची दफ़ा में वह कुछ विफ़ैली होती है, यद्यपि इफ़ पर आदमी कुछ दिन तक जी फ़कता है।

लड़के ने कहा—'नहीं, यहां इस जंगल में अवश्य आदमी होंगे। फिर वह क्या खाते हैं?'

नरेन्द्र—'फ़त्य, वह मुझे और तुम्हें खाते हैं—तुमको पहिले क्योंकि तुम लड़के और मुलायम हो। नहीं, अच्छा जैफ़े इच्छा हो, वैफ़े खयाल करो, किन्तु फ़बफ़े अच्छा उपाय यही है, कि जितना जल्दी हो फ़के कांगो लौट चलें।

इसी समय हब्शी आपस में हल्ला-गुल्ला करने लगे। सचमुच वह एक साथ ही बड़े जोर से बोलते, तथा अनेक प्रकार की मुद्रा प्रदर्शित करते थे। नरेन्द्र जल्दी से उधर गये कि पथ-प्रदर्शक से उसका कारण जानें। उनके लिये इस आफ़त के ऊपर गिरते ही उनमें यह बदमस्ती, सबसे भयंकर बात मालूम हुई।

झगड़े का कारण यह था, एक नाव तो बह गयी है, और दूसरी नाव जो बच रही है, उसमें छः मांझी और छः मुसाफिर ही बैठ सकते हैं। किन्तु टोली में इक्कीस देशी, एक पथ-प्रदर्शक और दो भारतीय—कुल चौबीस आदमी हैं। इतने आदमियों को वह किसी तरह भी नहीं ले जा सकती। यदि बहुत ठूंसा-ठांसी की जाय, तो मुश्किल से अठारह या हद बीस आदमी उस पर चल सकते थे, सो भी इसलिये कि उन्हें अब बहाव के रुख जाना था। किन्तु इससे अधिक का ले चलना भयानक ही नहीं, असम्भव था। देशियों ने इसे ताड़ लिया अब कौन-कौन चल सकेंगे, कौन-कौन छोड़ दिये जायंगे, इसी के लिये खून-खराबी होने की नौबत तक आयी थी।

जब पथ-प्रदर्शक ने यह सब समझा दिया, तो नरेन्द्र ने उनसे शान्त रहने के लिये प्रार्थना की। उन्होंने उन्हें विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया कि यहां और भी कोई उपाय निकल आने की पूरी उम्मीद है। किसी प्रकार भी वह हब्शी, जो निर्बुद्धि और उद्दण्ड थे, कोई अकल की बात सुनने को तैयार से न मालूम होते थे। इस समय वह युक्ति और तर्क का व्याख्यान नहीं पसन्द करते थे। वह लोग अपने घरों से बहुत दूर ऐसे घोर जंगल में थे, जिसके बारे में उन्हें कुछ नहीं मालूम था और जिसके बारे में उन्हें विश्वास था कि वह भूतों-पिशाचों से भरा है। वह उन बौनों से भी डरते थे जो उनके विश्वासानुसार कसई के ऊपर की उपत्यका में बसे हुए हैं। उन सबकी सिर्फ एक इच्छा थी, कि जहां तक हो अत्यन्त शीघ्र अपने बन्धु-बान्धवों में लौट जायँ।

निस्सन्देह, यदि उनकी इच्छा में कोई बाधा पहुँचाई जाती, तो वह अपने धनियों को अकेला छोड़ कर भाग जाते। किन्तु नरेन्द्र को यह खतरा

मालूम हो गया था, और उन्होंने सत्यव्रत से कहा, कि आज मुझे नाव के चुराये जाने का डर है। इसी कारण वह रात भरा भरा पिस्तौल हाथ में लिये बैठे रहें।

तीन दिन व्यर्थ और निराशापूर्ण अकर्मण्यता ही में बीत गये, यद्यपि बेकार रहना इस समय मृत्यु को शीघ्र आवाहन करना था, किन्तु आदमी न कोई समझ की बात सुनते थे, न कुछ काम करते थे, उनका एक काम था आपस में बराबर हल्ला-गुल्ला, झगड़ा करना। उनको इस विषय में बहुत ही कम सन्देह था, कि नरेन्द्र उनमें से चार आदमियों को नाव से उस घोर जंगल में उतार कर कहेगा कि तुम पैदल चलकरअ ाओ, जिसके लिये कि उनमें से एक भी तैयार न था। अन्त में तीसरे दिन के सबेरे ही नरेन्द्र ने स्वयं इसका एक ऐसा हल सोच निकाला, जो किसी भी भारतीय के लिये, उसका जातीय गुण होना आवश्यक है। सारे संसार में भारतीयों की यश-पताका, उनकी सत्यता और न्यायप्रियता ही के लिये फैली थी, और रहेगी।

युवक ने सब आदमियों को एक साथ बुलाया और दुभाषिया से कहा कि तुम उन्हें हमारी बात समझा दो। नरेन्द्र ने कहा कि हमारे ऊपर जो यह विपत्ति का पहाड़ टूटा है, वह अफ्रीकीय भाइयों के लिये जैफ़ा है। वैफ़ा ही भारतीयों के लिये भी। परिफ़्थिति बहुत ही भयानक है। भयभीत होना या अकल खो बैठना इफ़ फ़मय हमारे लिये कदापि श्रेयफ़्कर नहीं है। आपफ़ में झगड़ने फ़े कुछ न हाथ आयेगा। उन्होंने अन्त में अपना अभिप्राय प्रकट किया, कि हमें अब भाग्य-निर्णय गोटी डालकर करना चाहिये।

नरेन्द्र ने अपनी फेल्ट की टोपी में चौबीस कांच के मोती रखे, इन्हें वह नदी तट के जंगलियों को सौगात की तरह देने के लिये लाये थे और यह पहिली ही नाव पर रखी थी। यह सभी मोटाई और गोलाई में एक सी थी, सिर्फ फर्क इतना था, कि बीस उनमें से हरी और चार लाल थीं।

कांगो निवासी, जो गोटी डालने की विधि नहीं जानते थे, यह सुनकर बड़े उत्सुक हुए! जब दुभाषिये ने नरेन्द्र के अभिप्राय को स्पष्ट समझा दिया, तो उन लोगों को भारतीय की उस उदारता और सदाशयता पर

बहुत आश्चर्य हुआ। मारे सम्मान के उनका शिर झुक गया और वह शान्त हो गये। गोटी डालने का ढंग बिलकुल सीधा सादा था। टोपी में सभी गोटियां रखी हैं। प्रत्येक आदमी उनमें से एक-एक बिना देखे निकालता जाय, जिन चार आदमियों के हाथ में लाल गोटी पड़ेगी उन्हें नाव पर न जाना होगा। अब नरेन्द्र ने इस तमाशे को और गम्भीर तथा उन आदमियों के लिये प्रभावशाली बनाने के लिये एक वैज्ञानिक पुस्तक निकाली, जिसमें बहुत से रंगीन चित्र थे। वह उसमें से कहीं से कुछ पढ़ते थे, वाक्य का अन्तिम अक्षर जिस व्यक्ति के नाम के आदि में होता था, उसी की निकालने की बारी होती थी। सत्य का नम्बर पांचवां पड़ा और संयोग से नरेन्द्र स्वयं सबसे आखिर में पड़े। गोटियां टोपी में पहिले खूब हिलाकर फेंट-फांट दी गयी थीं और एक के बाद एक निकालने के लिये आगे बढ़ता था। उस समय वह आदमी भय के मारे कांपने लगता था, उसके ऊपर जैसे मृत्यु नाचती थी। वह हिलते हुए हाथ को टोपी में डालता था और एक गोटी बाहर निकाल लेता था। उस समय वह बेहोश सा हो जाता था। उसको स्वयं गोटी की ओर देखने की हिम्मत न पड़ती थी। जब दूसरे आदमी चिल्ला कर कहते थे कि गोटी हरी है तो वह सूखे से हरा, मुर्दे से जिन्दा हो जाता था। वह खुशी के मारे पागलों की भांति कूद-कूद कर नाचने लगता था। किन्तु जिस अभाग्य के मारे ने लाल निकाल ली, उस पर मानो वज्र गिर पड़ता था। गोटी वहीं उसके हाथ से जमीन पर गिर जाती थी, वह भय से चिल्ला उठता था।

सत्य के भाग्य ने उसका साथ दिया। उसे हरी गोटी मिली थी, उसने बिना कुछ हर्ष विस्मय किये उसे नरेन्द्र को दिखाया।

नरेन्द्र ने कहा—'तुम बड़े फ़ौभाग्यफ़ाली हो फ़त्य, फ़च कहता हूँ, मैं तुम्हारे लिये बड़ा उत्फ़ुक था। किन्तु एक बात निफ़फ़न्देह थी, यदि तुमको पीछे रहना पड़ता तो मैं भी तुम्हारे फ़ाथ रह जाता।'

वीच में और कइयों ने भी गोटी निकाली और तीन लाल गोटियां निकल चुकी थीं सिर्फ एक बाकी बची थी। अब सभी लोगों ने गोटियां निका-

लीं, सिर्फ नरेन्द्र और पथ-प्रदर्शक बाकी रहे थे । पहिले बारी पथ-प्रदर्शक की आई । वह आगे बढ़ा, उसके चेहरे पर उसकी मानसिक अवस्था का चित्र स्पष्ट अंकित था । मालूम होता था जैसे उसे लकवा मार गया, जिससे उसके हाथ-पैर बड़ी मुश्किल से उठ रहे हैं । एक बार उसने हाथ को टोपी में डुबाया, निकाल कर गोटी को देखा और देखते ही खुशी के मारे उछल पड़ा, उसके हाथ में हरी गोटी थी । अतः कांगो को नाव पर लौट सकता था । अकेली बची हुई लाल गोटी कुमार नरेन्द्र के हिस्से में पड़ी । नरेन्द्र ने कुछ न कहा । उनके चेहरे पर भय का कुछ भी चिह्न न था । वहां न आश्चर्य था न आतंक, न विह्वलता थी न विषाद । उन्होंने टोपी को शिर पर रख लिया और गोटी को नदी में फेंक दिया । एक बार गोटी को देख भी न लिया । उन्होंने कहा—

'हां, फ़त्य मैं फ़मझता हूँ, हम दोनों का इतने ही दिनों के लिये फ़ाथ था । अब इन बुजदिल हब्फ़ियों को फ़म्हालो । इन पर जितनी ही कड़ाई रखोगे उतने ही यह ठीक रहेंगे । मैं तुम्हारा मंगल चाहता हूँ ।'

सत्य—'क्या ? मैं आपको छोड़ने नहीं जा रहा हूँ । आपने कहा था कि यदि आपवाली किस्मत मेरे भाग्य में पड़ती तो आप मुझे छोड़कर न जाते । मैं भी अब आप ही के दिखाये रास्ते पर चलने जा रहा हूँ । आपको इसके बारे में कुछ न कहना होगा । अब हम लोगों को देखना है किस्मत कहां ले जाती है ?'

इस पर नरेन्द्र हँस पड़े ।

'फाबाफ़ ! फ़त्य, मेरे बच्चे फ़चमुच यह योग्य ही है । पुराने जमाने-में तुम्हारे और हमारे बाप-दादा अपने बादफ़ाह के लिये एक पंक्ति में लड़े थे । और उनकी फ़न्तान हम दोनों भी अब वही करने जा रहे हैं ।'

कान्तार

चूंकि उनके पास रसद न थी, इसलिये वहां और ठहरना बुद्धिमानी का काम न था। उसी दिन दोपहर में सारे आदमी नाव को उठाकर प्रपात से नीचे ले गये। सत्यव्रत ने अपना स्थान एक हब्शी लड़के को दे दिया, जो कि बिलकुल उसकी ही उम्र का था। जब सभी लोग चले गये, तो वहां अब चार आदमी बाकी रह गये। सत्य और नरेन्द्र के अतिरिक्त जो दो आदमी और रह गये थे, वह एक दूसरे से विलक्षण थे। उनमें एक चौड़े सीने का बड़ा हट्ठा कट्ठा पच्चीस वर्ष का जवान था। उसने अपने कष्ट को बड़े धैर्यपूर्वक सहन किया, जब उसके साथी विदा होने लगे तो एक बार जरा सा उसके चेहरे पर मलाल आया, किन्तु उसने झट अपने को रोक लिया, और बड़ी दृढ़तापूर्वक बैठा रहा। दूसरा नाटे कद का एक अधेड़ आदमी था, वह पहिले ही से बच्चे की भांति रो रहा था, नाव के ले चलते ही वह पछाड़ खाकर गिर गया। कितनी ही देर तक वह वहां पड़ा-पड़ा सिसकता रहा।

वे लोग, जो नाव को लेकर लौट रहे थे, इन दोनों भारतीयों के न्यायपूर्ण, तथा असाधारण वीरतापूर्ण व्यवहार को देखकर बड़े प्रभावित हुए। संसार में स्वार्थत्याग, आत्मविस्मरण, यह एक ऐसी चीज है कि जिसका प्रभाव सभ्य असभ्य मानव जगत ही क्यों, पशु पक्षी तक पर पड़े बिना नहीं रहता। यह एक सभ्य मनुष्य के लिये परमावश्यक है कि वह अपने जीवन से स्वार्थत्याग का सबक सिखावे। नरेन्द्र ने उन लोगों को न्याय से बढ़कर भी कोई चीज दिखलाई। उन अर्द्धसभ्य कांगोवासियों ने इसे भली प्रकार अनुभव किया कि हमने किसी महापुरुष की सेवा की है, जिसने अपने, प्राण अपने सर्वस्व को हम लोगों के लिये अर्पण कर दिया। किनके लिये ?—जो कि संसारिक दृष्टि तथा मानसिक एवं आत्मिक विकास में उससे बहुत निम्नश्रेणी के हैं।

नरेन्द्र इस सारे समय बड़े शान्त, धैर्ययुक्त रहे। नाव नीचे उतार कर पानी पर रखी गई, और कुछ मिनटों के बाद आंखों से ओझल हो गई। अब उन्होंने सत्य की ओर मुंह करके कहा– 'अच्छा, जो होना था फ़ो हो गया। अब, फ़त्य, हम चार यहां रह गये–तुम, मैं, वह जो भूखे कुत्ते की तरह कोंयँ कोंयँ कर रहा है, और वह धीर और फ़ाहफ़ी जिफ़का नाम मैं रखता हूँ–'नरफ़िह।'

जब उन्होंने पिछला शब्द कहा उसी समय उस युवक पुरुष के नग्न स्कन्ध पर अपना हाथ रखा–वह इनके भाषण का एक शब्द भी न जानता था। तो भी उस आदमी ने इस बात का अनुमान अपने दिल में अवश्य कर लिया कि कोई बात मेरे सम्बन्ध की हुई है, और शायद वह मेरे धैर्य के सम्बन्ध में थी, क्योंकि उसी समय उसकी आन्तरिक प्रसन्नता ने उसके ओष्ठ-तन्तुओं को ऐसा खींचा कि वह ऊपर-नीचे उठ गये, और बीचसे दूध से चमकते दांत दिखलाई देने लगे, जो कि उसके ताम्रवर्ण स्थूल अधरों पर एक विशेष प्रकार की शोभा दिखला रहे थे।

सत्य ने पूछा–'नरसिंह, क्यों ?'

नरेन्द्र–'क्योंकि, अब उफ़को पुकारने के लिये कोई नाम चाहिये, और यह उफ़के धैर्य और फ़ाहफ के उपयुक्त भी है। लेकिन फ़त्य, अब हमें अपनी वाफ़्तविक फ़्थिति पर ध्यान देना चाहिये। यदि हम इफ़ जगह ठहरे, तो हमें भूखों मरना होगा। हमें नदी के किनारे-किनारे नीचे की ओर चलना चाहिये, यद्यपि यह अफ़म्भव फ़ा मालूम होता है, किन्तु हमें यत्नफ़ील होना होगा। नरफ़िह हमारे काम में फ़हायक होगा। फ़ायद वह झरबेरी का भी पता लगा ले। यह फ़ायद अच्छा होगा, यदि हम किफ़ी गांव का पता लगा पायें। वह हमें मार डालने फ़े अधिक क्या कर फ़कते हैं। जंगल के रहने वाले आदमी बहुधा क्रूर होते हैं। उन्हें फ़भ्य जगत् का कुछ पता नहीं, उन्हें फ़िर्फ़ एक बात मालूम है, कि फ़भी विजातीय मनुफ़्य उनके फ़त्रु हैं। पहिले जमाने में गुलामों का व्यापार करने वाले अरब और यूरोपियन लोग जंगलों और गांवों को घेर लेते थे। वह मर्द, फ़्त्री, बच्चों को जानवरों की

तरह बझाते थे, भागने और बचने की कोशिश करने वाले उनके हाथों हलाक होते थे। सचमुच वह लोग इनके साथ ऐसा पाशविक व्यवहार करते थे, कि उसको सुनकर खून खौलने लगता है। यही कारण है कि यह लोग अब किसी भी विजातीय मनुष्य को उसी नजर से देखते हैं। अच्छा सत्य, अब आज की रात तो यहां बितानी होगी, कल यहां से चलेंगे। मैं बड़ा भखा हूँ। मैं नहीं समझता, एक सप्ताह बाद हमारी क्या दशा होगी।'

सत्य ने कहा कि इसकी चिन्ता न करना ही अच्छा है। कौमार्य सचमुच आशामय है। यद्यपि उनकी परिस्थिति बड़ी भयानक प्रतीत होती है, किन्तु कौन जानता है कि एक क्षण में क्या से क्या हो जाय।

उस रात को नदी किनारे वाले विस्तृत चिकने बालू के फर्श पर वे लोग सो गये, वह बालू मुलायम तोषक से कम नर्म न था। वह तबतक सोते ही रहे, जबतक कि उषा ने उन्हें जगाने की सिसकारी न दी। उसने मध्यवयस्क हब्शी तक के शरीर में अभिनव शक्ति और आशा का संचार किया। सूर्य किरणों के प्रखर होने से पूर्व वातावरण ठंढा और ताजा था। वन के विशाल वृक्ष की शाखाएं अनेक सुन्दर वर्णरंजित पक्षियों से सजीव सी मालूम होने लगीं। यह पक्षी यद्यपि उस प्रकार के मनो मुग्धकर संगीत न आलाप सकते थे, जैसे कि हिमालय और आसाम के, किन्तु इसकी कमी उनके सुनहले रुपहले नानावर्ण के कोमल कोमल पंख पूरा कर रहे थे।

नरेन्द्र ने अपना बोझा उठाया। उन्होंने अपने ले चलने के लिये निश्चित किया था—औषध-पेटिका, पिस्तौल और कुछ कारतूसों का एक थैला। प्रातः-काल आठ बजे चारों आदमी आगे पीछे एक पंक्ति में वहां से रवाना हुए। नरसिंह उनके आगे-आगे था। वह लोग नीचे की ओर मुंह करके नदी के किनारे आदमियों द्वारा बनाये राह से चलने लगे। तीसरे पहर वह उस जगह आगये जहां डेंगी पानी में डाली गई थी। अब इससे आगे गहन वन में उन्हें स्वयं रास्ता बनाना और आगे बढ़ना था। सौभाग्य से उनके पास चार तेज कुल्हाड़ियां थीं। फैली हुई बड़ी बड़ी बेलों और दूसरी अड़चनों के साफ करने के लिये इनकी आवश्यकता अनिवार्य थी।

आगे बढ़ना बहुत धीरे-धीरे हो रहा था। एक मील के लिये घंटों लगाने पड़ते थे। दिन के अन्त में अत्यन्त थके और भयंकर गरमी से परेशान वह रात्रि विश्राम के लिये ठहर गये। भोजन सामग्री सत्यव्रत के पास थी। यह एक छोटा सा डिब्बा मामूली मीठी टिकियों का था, जो कि दांत से काटने में कठिन मालूम होती थीं, किन्तु थीं बहुत पुष्टिकारक। नरेन्द्र ने जो इस टोली के सर्वमान्य नेता थे, उसमें से दस २ टिकियां एक-एक आदमी को दीं। उसी समय संकेत द्वारा उन्होंने नरसिंह से कहा कि कल जंगल से खोज-कर झरबेरी या और कोई फल मूल लाना चाहिये, नहीं तो हमारा भोजन दो ही तीन दिन में समाप्त हो जायगा।

नरसिंह अपने साथी के साथ दूसरे दिन सूर्योदय से थोड़ी ही देर बाद जंगल में घुस गया, और कुछ देर के बाद दो सेर जंगली अरारोट की जड़ ले आया। उसको उन्होंने मीठी-टिकियों के साथ मिला-मिला कर खाया और फिर नदी में जाकर पानी पी लिया। यह अरारोट यद्यपि बहुत ही दुस्वादु और कटु था, किन्तु वह इसके अलावा जीवन-रक्षा ही कैसे कर सकते थे। कुछ क्षण के बाद फिर अग्रसर होने का काम शुरू हुआ।

इसके बाद, एक के बाद दूसरा, फिर तीसरा दिन बीतता गया। उनके काम में कोई नवीनता न थी। वही कुल्हाड़ियों से रास्ता बनाना और रास्ता नापना, वही अरारोट का कड़ुवा कन्द खाना। दिन के बाद सप्ताह बीत चले किन्तु प्रति दिन प्रति घंटा वही बात। झौआ और लगी हुई झाड़ियों को कुल्हाड़ियों से काटते काटते उनका सारा बदन पसीने से तर हो जाता था। ललाट के स्वेद बिन्दु नाक से होकर टपटप चूने लगते थे। कँटीली झाड़ियों ने उनके कपड़ों को चीथड़े-चीथड़े उड़ा दिया था। कभी-कभी उन्हें घुटनों गहरे कीचड़ में से चलना पड़ता था। यह कीचड़ बहुत भारी और काला था, घास-पत्तियों की सड़ाइंद ने हवा को नाक देने के लायक न रक्खा था। इन स्थानों पर छोटी-छोटी जोंक उनके ऊपर धावा करती थीं। वह बूट के छोटे-छोटे सूराखों से भीतर घुसकर पैर का खून चूसने लगती थीं। उनमें एक प्रकार का जहर था जिससे पैर फूल आता

था। वह ऐसी बुरी तरह से चिपक जाती थीं कि उनका छुड़ाना मुश्किल होता था।

जंगल, कीड़ों और पक्षियों से सजीव था। किन्तु कहीं पर भी बड़े जन्तु का कोई चिह्न न दिखाई पड़ता था। वह नदी के साथ बढ़ रहे थे, यदि ऐसे जानवर होते तो वह अवश्य उन्हें पानी पीने के लिये जाते वक्त कभी दिखाई पड़े होते। यह बड़ी विचित्र बात है कि अधिकांश जंगली जानवर उसी पनघट पर पानी पिया करते हैं। यद्यपि वह एक दूसरे के प्राण के भूखे होते हैं। चीता और साम्हर, गैंडा और हिरन सभी उसी मार्ग से पानी पीने के लिये जाते हैं, जहां मगर अक्सर अपने शिकार की ताक में रहता है।

उन्होंने कहीं मनुष्य की गंध न पाई। नदी के तटपर कहीं भी कोई गांव या डेरा न था। उन्हें कहीं भी बौने न मिले। यह बौना जाति वहां सबसे बड़ी आफत थी। इनसे जान बचाना असम्भव था। थोड़े ही दिनों बाद उनकी टिकिया समाप्त हो गई और अब जंगली अरारोट ही उनका एकमात्र अवलम्ब था। एक बार नरसिंह कहीं से जंगली जामुन भी लाया था जो उतना दुःस्वादु न थी।

और तब? अन्त में वह एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहां से नदी के किनारे-किनारे और आगे बढ़ना असम्भव था। यही नहीं कि महारण्य वहां अत्यन्त सघन था, झाड़ियां दुस्तर थीं, प्रत्युत वृक्षों की जड़ें एक ऐसे दलदल में दबी थीं जिसकी गहराई का पता न लगता था। यह पहिला अवसर था जब कि नरेन्द्र को कर्त्तव्य निर्णय के लिये कहा गया। अब उनके लिये दो रास्ते थे एक तो दलदल की परिक्रमा करके जंगल में से होकर फिर आगे नदी तट पकड़ना या अपनी कुल्हाड़ियों द्वारा एक भद्दी सद्दी डेंगी बनाकर नदी में कूद पड़ना।

सत्य के साथ सलाह करने के बाद नरेन्द्र ने पहिली ही बात का निर्णय किया। कुल्हाड़ी द्वारा खोखलाई हुई एक छोटी डेंगी से उस तीक्ष्ण धार में चलने की हिम्मत करना एक मूर्खतापूर्ण प्रयास होता। धार इतनी

तेज थी कि ऐसी डेंगी के लिये वहां अणुमात्र भी सफलता की आशा न थी। यह निश्चय ही था, जल्दी या देर में उनकी डेंगी उन असंख्य चट्टानों में से किसी से टकरा कर टूट जाती जो कि प्रपात से कसई-संगम तक लगातार दोनों ओर चले गये थे। इस तेज धार में चतुर से चतुर तैराक के लिये भी तैरना असम्भव था और उन स्थानों में जहां नदी चौड़ी होकर चौड़े जलाशय या झील की भांति हो गई थी वहां तो पानी में मगरों के झुंड से सजीव सा मालूम होता था, भला, वहां कोई मगरों के मुंह में जाये बिना कैसे रह सकता था ?

इन्हीं कारणों से नरेन्द्र ने परिक्रमा देना ही अच्छा समझा। तदनुसार, नदी से मुंह फेर कर वह जंगल में अपने लिये मार्ग तैयार करते आगे बढ़े।

पहिली विशेषता इन उष्ण प्रदेशों की यह है—अचिरस्थायिनी उषा। सूर्योदयसे सूर्योदय तक उन्हें धूप में ही रहना पड़ता था। इसके बाद अन्धकार—घोर कृष्ण, जिसमें अपना हाथ देखना भी मुश्किल था। विशाल वृक्ष अपनी बड़ी-बड़ी शाखाओं और पत्तियों से सूर्य, चन्द्र और तारों को दिखाई पड़ने नहीं देते थे। स्वयं वृक्ष ही ऐसे थे कि उनकी छाया के अन्धकार में नीचे की कोई चीज न देखी जा सकती, किन्तु इन सैकड़ों हाथ लम्बे वृक्षों के अतिरिक्त उनकी छाया में उगी हुई घनी झाड़ियां थीं जो स्थान स्थान पर पन्द्रह-पन्द्रह बीस-बीस हाथ ऊँची थीं। यह नीचे की झाड़ियां इतनी घनी थीं कि वृक्ष से किसी प्रकार निकल कर नीचे आई हुई सूर्य की किरणें उन्हें पार कर आगे न बढ़ सकती थीं।

अगले तीन सप्ताह भी उन्होंने आगे बढ़ने के लिये युद्ध जारी रक्खा। अब दलदल शायद उनके दक्षिण ओर किसी जगह छूट गया था। उनके पास दिग्दर्शक न था, अतः वह यह न जान सकते थे कि हम किधर जारहे हैं। कभी-कभी उन्होंने एक दिन में पांच मील का भी सफर था, किन्तु औसतन् वह प्रति दिन तीन ही मील चल पाते थे, और यह भी पूरे दस या ग्यारह घंटे के घोर परिश्रम के बाद। इस सारे समय में उनका खाद्य वही जंगली अरारोट था। पहिले पहिल सत्यव्रत पर उसके जहर का असर

दिखाई पड़ा। उसका चेहरा पीला और शरीर खरखरा हो गया। दोनों भारतीयों के कपड़े चीथड़े-चीथड़े होकर गिर पड़े, सिर्फ मोटे-मोटे जीन के जांघिये बच रहे थे। बाकी दो तो पहिले ही से नंगे मादरजाद थे। भूख से वह लोग इतने सूख गये थे, कि ठठरी-ठठरी निकल आयी थी।

एक दिन बड़ा हब्शी सूर्यास्त से थोड़ा ही पहिले अपने बोझ को जमीन पर फेंक बेहोश हो गिर पड़ा। जान पड़ा जैसे उसके पैरों ने जबाब दे दिया। वह मुंह के बल जमीन पर गिरा, और कुछ देर तक बिना एक शब्द बोले, लम्बी सांस लेता रहा। थोड़ी देर के बाद वह पेट के बल हुआ, और साथ ही उसके प्राण-पखेरू उड़ गये। निस्सन्देह उसकी यह मृत्यु हृदय की गति के रुक जाने से हुई। उसकी मृत्यु तड़ाक फड़ाक और पीड़ा रहित हुई।

उन्होंने उसे वहीं कुल्हाड़ी की धार से मिट्टी हटाकर गाड़ दिया। दूसरे दिन फिर उसी अज्ञात, रहस्यमय और मृत्यु के अन्धकारमय साम्राज्य में आगे बढ़नेका प्रयत्न आरम्भ हुआ। एक पक्ष के बाद अर्द्धमृत तीनों आदमियों ने उस अन्धकार से प्रकाश में पैर रखा। पहिले उन्हें सूर्य असह्य से जान पड़े। धूप ने चमड़ा जलाकर काला स्याह कर दिया; सूर्य की किरणें इतनी तीक्ष्ण थीं कि शिर पर से टोपी उतारना असह्य था। अब जब कि जांघिया के अतिरिक्त कोई पहिनने का कपड़ा न था, वह कितने दिनों के अन्धकार के बाद प्रकाश में आये, तो सूर्य उनके लिये मंगलमय, जीवन और शक्ति का स्रोत जान पड़ने लगा। प्रथम तो वह प्रकाश से अन्धे हो गये। एक दूसरे की बगल में आंख मूंद कर पड़ गये। उस समय वह अशक्त और थकावट से चूर थे।

फिर थोड़ी देर के बाद अपनी चारों ओर नजर दौड़ाई, तो अपने आपको जंगल से बाहर पाया। वह एक बड़ी नदी के तट पर थे, जिसके किनारों पर दस दस हाथ लम्बी एक तरह की कास उगी थी। वह एक लम्बे टीले पर थे, जहां से नीचे की चीजें अच्छी तरह देख सकते थे। नदी के दूसरे पार एक पतला सा मैदान था जिस पर की मिट्टी सूर्य के ताप से दग्ध होकर कठिन हो गई थी, और जिस पर वृक्ष या किसी प्रकार की घास न थी।

उस मैदान के आगे पहाड़ियों का सिलसिला था, जिनके ऊपर उसी प्रकार का घोर वन था, जैसा कि उनके चारों ओर था।

जब वे लोग खड़े हो अपने सामने की उपत्यका का निरीक्षण कर रहे थे, उसी समय नरसिंह चिल्ला उठा; और अत्यन्त निर्बल होने पर भी टीले के नीचे की ओर चल पड़ा। फिर बदहवास की तरह चिल्ला कर उसने उन्हें भी बुलाया। यद्यपि वह उसकी बात का एक शब्द भी न समझ सके, किन्तु उसके अभिप्राय समझने में उन्होंने गलती न की। वहां केले का वृक्ष था।

अब वह भी पागलों की भांति दौड़ पड़े, और दो मिनट के बाद, वह भूख से व्याकुल मनुष्य उन्हें तोड़-तोड़ भकोसने लगे। इसी समय वह एक आवाज को सुनकर चकित हो गये। ऊपर की ओर नजर करने पर उन्हें एक मनुष्य दिखाई पड़ा, जिसका प्रकाशमान, मुखमंडल श्वेत दाढ़ी और केशों से आच्छादित था। उसने शुद्ध हिन्दी में कहा–

'तुम हमारी खेती लूट रहे हो।'

कुमार नरेन्द्र इस असाधारण आकृति वाले पुरुष के मुंह से इस घोर जंगल में हिन्दी निकलते देख, आश्चर्यान्वित हो बोले–

'हां' मैं इसके लिये क्षमाप्रार्थी हूँ। धृष्टता माफ़ हो, आप कहां से यहां प्रादुर्भूत हुए ?'

आदमी जो चार हाथ से अधिक ऊँचा था, जिसके हाथ में एक बन्दूक थी, और बाघम्बर जिसका परिधान था, एक ठंडी सांस लेने के बाद बोला–

'आह ! एक वर्ष बीत गया, जब से मैंने अपनी भाषा न सुनी थी। मेरे लिये यह मधुर संगीत है। तीन वर्ष हो गया मुझे सभ्य जगत् छोड़े।'

नरेन्द्र ने आश्चर्य के साथ कहा—'तीन वर्ष ! क्या आप तीन वर्ष से इस घोर अरण्य में भूल गये हैं ?'

आगन्तुक—'हां, प्रायः इतने ही समय से। तारीख जानने का यहां मेरे पास कोई साधन नहीं है। और इस प्रदेश में—जैसा कि तुम्हें मालूम होगा, गरमी और सर्दी—ऋतुभेद है ही नहीं। मेरे पास इसके लिये एक ही साधन है, वह यही पूर्णमासी का चन्द्र। मैं तुम्हें निश्चित कहता हूँ कि मुझे इन जंगलों में आये सैंतीस पूर्णचन्द्र हुए, जो कि तीन वर्ष होते हैं।'

नरेन्द्र ने एक बार तेजस्वी पुरुष के मुख की ओर देखा। वह चार हाथ ऊँचे थे, किन्तु यह उनका सुसंगठित शरीर, विशाल वक्षस्थल और आंखों का विचित्र तेज था, जिसने नरेन्द्र और उनके साथियों को अपनी ओर आकर्षित कर लिया। शरीर से वह दूसरे भीम मालूम होते थे। मालूम होता है, उन्हें कुर्त्ता, कोट आदि कपड़े पहिने बहुत दिन हो गये, धूप से दग्ध उनका चर्म इसका पूरा परिचय दे रहा था। उनका श्वेत श्मश्रु दोनों ओर श्वेत कूर्चजाल से मिल गया था। यह श्वेत कच उन्हें पचास वर्ष से ऊपर की अवस्था के बता रहे थे।

नरेन्द्र—'मुझे मालूम होता है, आप भी उसी मर्ज के शिकार हैं, जिसके कि हम सब। हम सब भी पथभ्रष्ट हैं। हफ्तों जंगल में भटकते हो गया, नहीं मालूम कि कहां जा रहे हैं और किधर से आये। असल बात यह है कि महात्मन्! आपके दर्शन से हम प्रसन्न से भी कुछ अधिक हुए। मेरा नवयुवक साथी और मैं दोनों ही अफ्रीका से अनभिज्ञ हैं। यह जवान (आश्चर्य और आतंक से चकित, पीछे हट कर खड़े हुए नरसिंह की ओर इशारा करके) यह मेरा प्यारा भाई, आफ़त के समय भी हमारा साथी रहा। इसके हम बड़े आभारी हैं; किन्तु शोक, हम दोनों में से कोई भी

उफ़की भाफ़ा का एक भी फ़ब्द बोल नहीं फ़कता। हमें फ़ंकेत द्वारा ही अपने अभिप्राय को प्रकट करना होता है।'

वृद्ध पुरुष ने एक बार नरसिंह की ओर फिर कर उसे शिर से पैर तक देखा, फिर एक-ब-एक बकुंगो भाषा—जो कि स्टेन्लीपल के दक्षिण भाग के निवासियों की भाषा है—में बात करना शुरू किया। तुरन्त ही नरसिंह के मुख पर प्रसन्नता और हास की रेखा दिखाई पड़ी। खुशी के मारे वह जोर से चिल्ला उठा। थोड़ी देर तक वृद्ध और हब्शी की आपस में बात होती रही, फिर वृद्ध नरेन्द्र की ओर फिरा—

'कांगो-निवासी का पहिचानना कुछ भी कठिन नहीं है, खासकर जो ल्युपाल्डविल्ले के आसपास रहता है। उसका चमड़ा उतना काला नहीं होता, जैसा समुद्रतट वाली जातियों का, वह दक्षिणी अफ्रीका की उन थोड़ी सी बन्तू जातियों में से है, जो गोदना गोदा कर अपने शरीर को कुरूप नहीं बनातीं और न रंग लपेटती हैं। इसके अतिरिक्त, इसे जो अभी अपेक्षाकृत अल्पवयस्क है, दाढ़ी निकलेगी; किन्तु सबसे अधिक जो बात मुझे इसकी जाति की परिचायक मालूम हुई, वह इसके तीक्ष्ण किये हुए अगले दांत हैं जो देखने में कुत्ते के नोकीले दांतों के सदृश हैं। मुझे यह सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि इसने ईमानदारी के साथ तुम्हारी सेवा की है; नहीं तो अधिकतर इसकी जाति वाले आलसी और बदमाश होते हैं। इनके लिये मुझे मेरा अनुभव कहता है कि उन पर विश्वास करना अच्छा नहीं।'

नरेन्द्र—'यही हमारा भी अनुभव है। आरम्भ में हमारे पाफ़ इफ़ जाति के बाईफ़ आदमी मोटिया और माझी थे; यदि हमने उन्हें वैफ़ा मौका दिया होता तो वह फ़ारे अवफ़्य हमें छोड़कर भग जाते।'

वृद्ध—'मैं इस पर पूरा विश्वास करता हूँ कि अधिकांश में ये बुजदिल होते हैं और इन पर तांत्रिकों और सयानों का शासन चलता है। यदि तुम किसी बहादुर और विश्वासपात्र जंगली को नौकर रखना चाहते हो तो मैं कहूँगा किसी फान को रक्खो। यद्यपि वह लड़ाकू होते हैं, किन्तु होते

हैं एक नम्बर के ईमानदार। यह एक ऐसे आदमी का कहना है, जिसका वंश शताब्दियों से जेम्बसी और सहरा के बीच में रहता रहा है।'

नरेन्द्र—'मेरी फ़मझ में आप इफ़ विफ़य में बहुत जानते हैं। ज्ञात होता है, आपको इफ़ देफ़ का बहुत अनुभव है।'

वृद्ध—'मेरा नाम बृहस्पति है।'

इन शब्दों में नरेन्द्र के लिये कोई अर्थ न था, किन्तु सत्यव्रत 'ओहो' कह उठा। उसने अपने पिता के मुख से अनेक बार अफ्रीकीय यात्री बृहस्पति मिश्र का नाम सुना था। उसने कहा 'मुझे अच्छी तरह स्मरण है जब कि मेरे पिता ने राजा रुद्रदेव की स्टेन्लीपूल से रोडेशिया तक की यात्रा का पूर्ण विवरण मुझे सुनाया था। जब उनकी रसद खतम हो गई तो वह दो टोली में बिभक्त हो गये। एक टोली जिसमें पांच भारतीय राजा रुद्रदेव के नेतृत्व में थे, दक्षिण की ओर चली और अन्त में पोर्तुगीज इलाके में पहुँच गई। और दूसरी टोली बृहस्पति मिश्र के नेतृत्व में उत्तर की ओर, कांगो की आशा से गई। लेकिन उस टोली के बारे में तब से कुछ नहीं सुना गया।'

वृद्ध बिलकुल निश्चल थोड़ी देर अपनी बन्दूक के मुंह पर हाथ रख; उसके सहारे झुक कर खड़े रहे, फिर बोले—

'मुझे सुनकर बड़ी खुशी हुई कि रुद्र सकुशल निकल गये। लेकिन मेरे और मेरे साथियों के भाग्य में वह न बदा था। माणिक्चन्द भूख प्यास के मारे बिलकुल दुबला पतला हो गया था, एक दिन वह नदी में नहाने गया था, उसी समय उसे मगर ने पकड़ लिया। उसमें कुछ भी शक्ति अपने बचाव के लिये न थी। और वह मगर के पेट में चला गया। रमेश को मलेरिया से मरे एक वर्ष हो गया। वह और मैं बहुत दिन तक एक साथ रहे, उसी समय बटवा के बौनों के एक झुंड ने हम पर चढ़ाई की थी। हमारे देशी साथियों में से कितने ही मारे गये और घायल हुए, और बाकी घबड़ा कर हमें छोड़ भागे। यदि हमारे साथ वह रह जाते तो उनके हक में बहुत अच्छा होता, मुझे आशा नहीं कि एक भी उनमें से बचकर कांगो गया होगा। लेकिन हमें अब यहां खड़े होकर बात करने की आवश्य-

कता नहीं है । यदि कहो तो मैं अपने घर को—सचमुच घर ही है—ले चलूं । तुम्हें बड़ा आश्चर्य होगा, जब तुम देखोगे कि मैं कैसे आराम से रहता हूँ ।'

वह उन्हें नदी के किनारे किनारे ले चले । अन्त में एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहां जंगल पानी के किनारे तक लगा चला गया था । यहां कुछ महाकाय वृक्षों का एक झुरमुट था । सत्य और उसके साथी बड़े आश्चर्य में पड़ गये, जब उन्होंने वृक्ष की एक शाखा से नीचे तक एक रस्से की एक सीढ़ी लटकती देखी । वह उसी जंगल की एक लता से बनाए गए मोटे-मोटे रस्सों में जगह-जगह लकड़ी बांधकर बनाई गई थी ।

भूमि से प्रायः ३० हाथ ऊपर वृक्ष की बड़ी बड़ी शाखाएं फूट कर अपने बीच में कटोरा-सा अवकाश बनाती ऊपर गई थीं । इनके बीच के छः वर्गगज अवकाश में एक झोपड़ा था, जो ताड़ की सूखी पत्तियों से बना हुआ था । रस्से की सीढ़ी द्वारा चढ़कर वह उस कोठरी में गये । वहां चार आदमियों के लिये काफी जगह थी । उसकी बनावट से पता लगता था, कि उस परिमित अवकाश का जिसमें जरा भी अपव्यय न हो, इसका पूरा प्रयत्न किया गया है । दीवारों में चारों ओर चीजों के रखने के लिये खाने बने हुए थे, एक ओर बन्दूक टांगने के लिये खूंटी थी । फर्श पर हाथी या गैंडे का बिना सिझाया चमड़ा बिछा हुआ था । बिस्तरे के लिये कुछ मुलायम चमड़े, मृगछाला और बाघम्बर थे । खानों में कारतूस—गोली बारूद रखे हुए थे । वहां और भी कई वस्तुएं थीं, जिनका इस जंगल में प्राप्त होना अत्यन्त आश्चर्यजनक था, जैसे त्रिपार्श्वीय दिग्दर्शक, उष्णकटिबन्धीय वनस्पति शास्त्र की कुछ पुस्तकें और कुछ बढ़ई के औजार, जिन्हें बृहस्पति अपनी यात्रा में बचा सके थे ।

नरेन्द्र—'यह लाजवाब है ! फ़र की कफ़म मुझे नहीं आफ़ा थी, कि मैं एक ऐफ़े आदमी फ़े मिलूंगा जो दरख्त पर रहता है !'

बृहस्पति—' ऐसा क्यों करता हूँ, इसका बड़ा भारी कारण है । भूमि पर रहने से रात भर बौनों और मनुजादों का भय हर वक्त लगा रहता है । लेकिन यहां रात को सोने के समय मैं सीढ़ी को ऊपर

खींच लेता हूँ, फिर हमारे इस वृक्ष के तने पर न आदमी चढ़ सकता और न जानवर ही।'

सत्य—'लेकिन भोजन के लिये क्या करते हैं ?'

वृहस्पति ने मुस्कराते हुए कहा—'कई महीनें पूर्व यहां मेरे सौभाग्य से एक जंगली केले का पेड़ मिल गया था -'

सत्य—'किन्तु एक वृक्ष के फल पर तो आप महीनों गुजारा नहीं कर सकते ?'

वृहस्पति—'नहीं, किन्तु उसे लगाकर बढ़ा सकता था, और इस उपत्यका की तेज धूप और उपजाऊ भूमि में बीज किसी समय भी लग सकता है, पौधा बहुत जल्द बढ़ जाता है। वह एक वृक्ष ही पर्याप्त था। थोड़े ही समय में मेरे पास एक बगीचा तैयार हो गया। उसी समय बटवा लोगों ने मेरे ऊपर हमला किया, सौभाग्य से मैंने उन्हें मैदान में लड़ने के लिये मजबूर किया। वहां मैं अपनी बन्दूक को भली प्रकार इस्तेमाल कर सकता था। जब वह वहां से भगे तो उन्होंने अपने छः मुर्दे यहीं छोड़ दिये। और मैं अपनी नीचता तुमसे बताना चाहता हूँ, मैंने उन्हें लूटा।'

नरेन्द्र—'लूटा ! विफ़ैले भालों और तीरों के अतिरिक्त उनके पास धरा ही क्या था ?'

वृहस्पति—'तुम्हें जानना चाहिये कि बटवा शिकार पर जीवन बसर करते हैं। वह कृषक नहीं हैं। भूमि जोतने और बोने के लिये वह बड़े आलसी हैं। वह नदी के किनारे वाले गांवों से चौथ उगाहते हैं तथा वहां के निवासियों को बहुत तंग करते हैं, यद्यपि नदीवाले कद्दावर होते हैं, और बटवा बौनें। लेकिन बटवा उनसे बराबर कर उगाहते हैं, जो कि केला, चिरौंजी, बेर, कटहल तथा कुछ और अनाजों के रूप में होता है। मैंने उनसे बहुत सी बेर, अमरूद, कटहल आदि की राशि पाई। यहां से थोड़ी ही दूर पर मैंने शकरकन्द, रतालू, मूली आदि के साथ इनकी एक फुलवारी तैयार की है। यही सब खाने के मेरे प्रधान द्रव्य हैं। कभी-कभी स्वाद बदलने के लिये जामुन और अरारोट भी मिल जाता है।'

नरेन्द्र–'क्या आपने जिन्दगी भर यहां रहने का इरादा कर लिया है !'

बृहस्पति—तुम्हारे आने तक मेरे लिये दूसरा कोई उपाय न था। यह पागलपन होता, यदि मैं इस घोर जंगल को पार करने का प्रयत्न करता। मेरे पास यद्यपि दिग्दर्शक है, किन्तु बौने मेरे ऊपर बराबर निगाह रखते हैं, वह मुझे अपना जन्म शत्रु मानते हैं।'

सत्य–'किन्तु, हम तो हफ्तों-महीनों से जंगल में घूम रहे हैं, और हमें उनमें से कोई न मिला। हमने उनका पद-चिह्न भी कहीं न पाया।'

बृहस्पति–'यह बिलकुल सम्भव है। बटवों के रास्ते का पता लगाना हाथी के रास्ते के पता लगाने से भी कठिन है। यह नाटे आदमी बड़े चतुर वनचर हैं। यह बाघ की भांति चतुर और सांप की तरह जहरीले और धूर्त होते हैं। लेकिन अब हम चार हैं, अतः जैसे ही तुम लोग कुछ दिन के विश्राम से ताजा हो लेते हो, हम निकल भागने का प्रयत्न करेंगे।'

नरेन्द्र–'आपको कुछ जान पड़ता है कि हम कहां हैं ?'

बृहस्पति–'मैं समझता हूँ, यद्यपि अनुमान से ही, यह नदी असंगा है। मैं आशा करता हूँ, तुमने इसका नाम न सुना होगा।'

नरेन्द्र–'नहीं ! यही जगह है, जिसके लिये हमने यह यात्रा की थी।'

बृहस्पति (आश्चर्य)–'सचमुच ! तो अच्छा, तुम शायद इसके लिये उत्सुक न होते, यदि तुम्हें इस जगह की प्रकृति का पता होता। मैं अपना बड़ा सौभाग्य समझूंगा, यदि किसी प्रकार यहां से निकल पाऊँ। मैं इसका बहुत कुछ ज्ञान रखता हूँ।'

सत्य–'आपका अभिप्राय बौनों से है ?'

बृहस्पति–'नहीं, मेरे बेटे। मैं उनके बारे में नहीं कह रहा हूँ। पम्बाला निवासी तुम्हें बतलायेंगे, कि असंगा उपत्यका जादू से भरी है। वह अपने सयानों के हाथ, खुले मैदान जहर खा मरने के लिए, अपने आपको अर्पण कर सकते हैं, किन्तु इस प्रदेश में कदम रखने की हिम्मत नहीं कर सकते।'

नरेन्द्र ने बड़ी उत्सुकता और आश्चर्य से कहा–'आपने मेरी जिज्ञासा को और भी तीव्र कर दिया। कृपया अपने तात्पर्य को और स्फुट कीजिये।'

अब सब लोग झोंपड़े के फर्श पर बैठ गये। वृद्ध किसी विचार में मग्न थे। जब उन्होंने ज़बान खोली, तो उनका स्वर बहुत ही गम्भीर था—

'मैं इसे उस आदमी की भांति कह रहा हूँ जो इस अँधेरे महाद्वीप में तीस वर्ष से रह रहा है। यह महाद्वीप जो केपटाउन से काहिरा, और सीरा-ल्योनी से जंजीबार तक बहुत दूर में फैला हुआ है। जो जंगलीपन, अज्ञान, क्रूरता और अपराध से अन्धकारमय है। इन तीस वर्षों में मैंने बहुत सीखा है, और खासकर पिछले तीन वर्षों में तो पहिले सत्ताईस वर्षों से भी अधिक ज्ञान अर्जित किया है। मैं कई एक देशी भाषायें बोल सकता हूँ। अपनी अवस्था में मुझे डाक्टर मुहम्मद करीम, कप्तान नौरोजी तथा राजा रुद्रदेव के साथ काम करने का मौका मिला है। जिनमें पिछले महाशय के साथ तो मैं सहायक-नेतृत्व पर था। मैंने अक्सर यहां के निवासियों को कहते सुना है कि जंगलों में एक बूटी होती है जो सचमुच मृत-संजीवनी है। जो उसे खा लेता है, वह नहीं मरता। किन्तु हमारे अभाग्य से इस बूटी का रहस्य कुछ सयानों, जादूगरों को छोड़कर और किसी को नहीं मालूम है। वह उसके प्रभाव से सुदीर्घ काल तक जीते हैं। उदाहरणार्थ, इस उपत्यका से कई सौ कोस पर एक आदमी है जो फान लोगों की तरह की एक असभ्य जाति पर शासन करता है, और सारे जंगल में वह जादूगर बादशाह के नाम से प्रसिद्ध है। इस आदमी के लिये कहा जाता है कि वह सौ वर्ष से अधिक उमर का है तथा यह भी कि वह जादू और मंत्र के जोर से राज्य करता है। राजा और सयाना (ओझा) दोनों की शक्ति उसने अपने में रखी है। उसका आतंक केवल अपने ही लोगों पर नहीं है, बल्कि बटवा भी उससे भय खाते हैं। अफ्रीका के दंडकाराण्य में इस मनुष्य के व्यक्तित्व और शक्ति के सम्बन्ध में बहुत सी कथायें प्रचलित हैं।'

बृहस्पति तुरन्त अपनी बात को बीच ही में छोड़, छोटे से जँगले पर गये और वहां से झांककर फिर अपनी जगह आ बैठे।

नरेन्द्र ने पूछा—'लेकिन आप क्यों इस जादूगर बादशाह से डरते हैं?'

बृहस्पति—'जब तक मैं यहां हूँ, मुझे डरने की कोई जरूरत नहीं।

इस अपने छोटे किले में मैं सुरक्षित हूँ। किन्तु उस भयंकर राक्षस के हाथ में अपने जीवन को डाले बिना मैं सभ्य जगत में नहीं लौट सकता। यद्यपि अपने चारों ओर के प्रदेशों का मुझे पूर्ण परिचय नहीं है किन्तु इसे मैं खूब जानता हूँ कि हमारे तीन तरफ–उत्तर, दक्षिण और पूर्व–दुस्तर अरण्य है। जंगल से होकर निकल पाने का प्रयत्न पागलपन के सिवा कुछ नहीं है। हम भूखे मर जायँगे। अरारोट के भी मिलने का वहां भरोसा नहीं। हमारे बचकर पहुँचने का एक ही रास्ता है–पच्छिम का। मेरे दिल में एक खयाल है कि यदि हम इस नदी को पार कर, ऊपर के इसके उद्गम स्थान को पार करें जिसमें कि इसकी समानान्तर बहनेवाली कसई की दूसरी शाखा हमें न पार करनी पड़े तो हम उस झील को पार कर सकेंगे जो कि बम्बू नदी और अंगोला के उत्तरी भाग के बीच में है और जिसकी एक ओर कम्बो है। वहां से फिर सभ्य जगत् में पहुँचना आसान है। किन्तु प्रश्न है इस स्थान और फ्रंजजोजफ प्रपात के बीच में क्या है? यह ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर कोई भी जीवित मनुष्य नहीं दे सकता।'

नरेन्द्र–'लेकिन इफ़ प्रश्न के उत्तर के लिये हम आपकी आज्ञानुफ़ार आपकी फ़हायता करने के लिये तैयार हैं। और रहा जादूगर बादफ़ाह, फ़ो तो वह जंगलियों के लिये है।'

बृहस्पति ठठाकर हँस पड़े और बोले–'किन्तु यह तो बताओ, तुम क्यों यहाँ आये। वह क्या चीज थी जिसके लिये तुमने समझा कि वह अङँगा उपत्यका में मिलेगी?'

नरेन्द्र (गम्भीरतापूर्वक)–'मैं उफ़ पुरानी चीज–क्या कुछ फ़रट की खोज में हूँ। फ़र की कफ़म मैं याद करते करते मर गया, लेकिन उफ़का नाम याद नहीं हुआ, नहीं ही हुआ। वह प्राग्ऐतिहाफ़िक कालीन जन्तु है और कहा जाता है कि उफ़े फ्वीजलैण्ड के एक प्रकृति फ़ाफ्त्री और बेल्जियम के एक रबर के फ़ौदागर ने देखा था।'

बृहस्पति ने कुमार नरेन्द्र को एक बार निश्चल दृष्टि से देखा फिर कहा–'यदि तुमने पूरा विश्राम कर लिया हो तो मेरे साथ आओ।'

एक के बाद एक वह रस्से की सीढ़ी से नीचे उतरे। वहां से आगे आगे बृहस्पति और पीछे, आगे पीछे और लोग चले। वह नदी के किनारे किनारे सूर्य की धूप से ठोस हो गये उस कीचड़ के पास आये, जहां कोई घास, वृक्ष न था। इस प्रकार वह छः सौ गज चले गये होंगे जब कि उन्हें मिट्टी कुछ मुलायम जान पड़ी। वहां पर बृहस्पति ने जमीन पर कई सूराख़ दिखलाये जिनमें पानी निकल आया था।

बृहस्पति–'तुम देख रहे हो इन्हें ?'

सत्य–'यह क्या है ?'

बृहस्पति–'इनकी परीक्षा करो, तुम्हें मालूम होगा कि वह एक ऐसे पंचनख जन्तु के पद-चिह्न हैं जिसके सामने हाथी चींटी सी मालूम होगी। उसके पैर का जमीन पर पड़नेवाला भाग मुझसे दूना लम्बा है।

नरेन्द्र चकित हो बोल उठे–'हाय रे किस्मत !'

सत्यव्रत ने वृद्ध से पूछा–'आप जानते हैं, यह क्या है ?'

बृहस्पति–'हां, मैं जानता हूँ। यह एक जुरासीय दीनोशरट, स्टेगोशरट (Stegosaurus) के पिछले पैर का निशान है। जो प्रागैतिहासिक काल के सभी जन्तुओं से अत्यन्त विलक्षण और भीमकाय है। अपने पैर से छाती के उपरले भाग तक यह चौदह हाथ ऊँचा है। इसके चोंच-सदृश मुंह से पूंछ तक की लम्बाई कम से कम बीस हाथ है। इसकी पूंछ पर गैंड़ा की सींग की भांति एक गजसे भी बड़े बड़े कांटे होते हैं। भू तल पर आजकल कोई ऐसा जन्तु नहीं है जो इस महाकाय प्राणी के समान देखने में भयंकर तथा आश्चर्यंकर हो। और यह इसी उपत्यका में रहता है, मैंने स्वयं अपनी आंखों से उसे देखा है !'

तिलस्मी घाटी

पहिली ही मुलाकात में वृहस्पति के साथ यह निश्चय हो गया, कि अब साथ ही इस दुरूह वन से निकल कर अंगोला के उत्तर वाले अर्द्धसभ्य प्रदेश की ओर चलना चाहिये। इतने दिनों के भूख-प्यास और अन्य कष्टों से उनका शरीर सूख गया था। वह कुछ दिनों में सुधरनेवाला न था। सत्यव्रत सूखकर बिल्कुल अधमरा हो गया था। अरारोट के जहर के प्रभाव से मुक्त होने में उसे कुछ सप्ताह लगे। वृहस्पति ने, जो अब इस टोली के नेता थे, कहा—जब तक शरीर फिर से खूब पुष्ट और आगामी कष्ट के सहन करने योग्य न हो जाय, आगे कदम बढ़ाना बिलकुल अनिष्टकर होगा।

वृहस्पति—'आखिरकार मैं इतने दिनों तक मुक्ति की प्रत्याशा में बैठा था, क्या परवाह है, यदि कुछ सप्ताह और ठहर जाना पड़े। यह उपत्यका भी अस्वास्थ्यकर नहीं है। किन्हीं कारणों से मच्छर भी यहां बहुत कम हैं, और बगीचा ताजा और पुष्टकर फल देने के लिये तैयार है। यद्यपि यहां खरगोश और मछलियां भी मिल सकती हैं, किन्तु मेरी समझ में वह खाने योग्य न होंगी। प्रोटीन—तुम्हें मालूम है—मनुष्य के खाद्य पदार्थ में आवश्यक वस्तु है, उसे मैं अपने फलों में पर्याप्त परिमाण में पाता हूँ। मेरा विश्वास है कि फल-मूल का प्रोटीन आमिष के प्रोटीन से कहीं अधिक स्वास्थ्यकर और पुष्टिकर है। कुछ भी हो, मुझे तीन वर्ष इस अत्यन्त उष्ण प्रदेश में रहते हो गया, किन्तु मैंने जीवन भर में कभी अपने को इतना पुष्ट और स्वस्थ न पाया। इतने दिनों में मैं सिर्फ एक बार रुग्ण हुआ था, और सो भी अपनी बेवकूफी से। मुझे जंगल में एक तरह का लाल फल मिला, मैंने उसे खाना आरम्भ किया। कुछ दिनों तक मुझे पता न लगा, कि यह रक्त को विषाक्त कर रहा है।'

वह पांच सप्ताह—जिन्हें उन्होंने कांगो के महारण्य में वृहस्पति के

विश्राम कुटी पर बिताया—बीतते मालूम न हुए। वृहस्पति के पास जो पढ़ने की पुस्तकें थीं, वह सभी वनस्पति शास्त्र पर थीं। यह सब अभागे रमेश की थीं जो रुद्रदेव के साथ वनस्पति-शास्त्र के विशेषज्ञ के तौर पर आया था। सत्यव्रत और नरेन्द्र दोनों ने समय को सुगमता से बिताने और दिल बहलाने के लिये उन्हें पढ़ना आरम्भ कर दिया किन्तु वह इस बात पर एकमत थे कि महान् का वार्त्तालाप किसी भी मुद्रित पुस्तक से कहीं अधिक मनोरंजक होता है।

उस मनुष्य के पास ज्ञान का एक महान् कोष था। अफ्रीका को जितना वह जानता था, उतना शायद ही कोई जानता हो। वह एक अच्छा वैज्ञानिक भी था। उसका प्राणिशास्त्र, भूगर्भशास्त्र और ज्योतिष शास्त्र पर भी काफी अधिकार था। वह प्रायः उन प्रत्येक पशु, पक्षी और कीड़े मकोड़ों के भी वैज्ञानिक नामों से परिचित था जो जंगलों में मिलते हैं।

प्रत्येक सन्ध्या की बैठक में, सत्य की प्रेरणा से वृहस्पति अपने अनुभवों का वर्णन करते थे जो पुस्तकाकार होने पर पढ़ने में किसी भी उपन्यास से अधिक दिलचस्प हो सकता था। जब वृहस्पति बहुत थोड़ी ही अवस्था के थे तो वह भारत से दक्षिणी अफ्रीका के केपटाउन में कुली बन कर आये थे। उस समय उनके देशभाई जिस प्रकार अपने स्वामियों के हाथ से सताये जाते थे वही दशा इस नवयुवक की भी हुई। किन्तु युवक मेधावी और उत्साही था। उसने अपने पांच साल के पट्टे को पूरा करने पर स्वतंत्र कार्य करना आरम्भ कर दिया। कुली-जीवन में तथा पीछे भी उसने अपनी ज्ञान-पिपासा को शान्त करने में कोई कसर न की। जो समय मिलता उसी में वह कुछ पढ़ा करता था। उसके कार्यनिरीक्षकों में एक विद्याप्रेमी अंग्रेज था, जिसने उस लड़के के विद्याप्रेम का जब परिचय पाया तो उसके साथ वह बड़ा अच्छा बर्ताव करने लगा। धीरे-धीरे दोनों का परस्पर बड़ा प्रेम हो गया। पट्टा समाप्त होने पर इन दोनों मित्रों ने स्वतन्त्र व्यवसाय आरम्भ किया।

उस समय दक्षिणी अफ्रीका शिकारियों का स्वर्ग था। देश में आखेट

योग्य जानवरों की बहुतायत थी । वृहस्पति कहते थे कि मैंने खुद ट्रान्सवाल को जबरा, जराफा शुतुरमुर्गों का क्रीड़ोद्यान पाया । शेर उन सभी जगहों पर जहां उनके छिपने के लिये झाड़ियां थीं कसरत से मिलते थे । इन जिलों में अर्ना भैंसा और गैंड़ा बहुत थे । अब इन जानवरों में से बहुतेरे उच्छिन्न हो गये हैं । शिकारियों की बारूद और बन्दूकों ने सारे ही जानवरों को मार डालने या भगा देनेमें बड़ी जल्दी की । हरिण बिचारे झुण्डके झुण्ड त्राण पाने के लिये उत्तर की ओर भाग गये, जहां मक्खियों ने काट काट कर उनके एक बहुत भारी भाग का काम तमाम कर डाला । यह मक्खियां शफ़ी-पशुओं के लिये काल हैं । कुछ जानवर, जैसे क्वग्गा, एकदम ही मिट गये । और दूसरे भाग कर रोडेशिया में चले गये । वहां शेर अब भी बहुतायत से हैं । कहा जाता है, कि जेम्बसी नदी से दक्षिण अब जराफा नहीं हैं । जो इस अहानिप्रद तथा सुन्दर जानवर का शिकार करना चाहते हैं, उन्हें अब मध्य-अफ्रीका जाना पड़ता है, यद्यपि वृहस्पति का कथन है, कि उस समय उन्होंने कभी कभी एक दिन में पचास जराफा, वाल से दक्षिण देखा था ।

केम्बर्ली के हीरे की खानों का उन्हें खूब स्मरण है, जिनकी बदौलत उस समय बहुत से आदमी बहुत ही थोड़े दिनों में करोड़पति हो गये । अपने मित्र के साथ वृहस्पति ने भी काम शुरू किया, किन्तु सिर्फ रुपया पैदा करने को अपनी जिन्दगी का लक्ष्य बनाना उन्हें अभीष्ट न था । उन्होंने जहां खान का काम उठाया, वहां अपनी विद्या-वृद्धि का काम भी बड़े वेग से चालू रखा । आर्थिक अवस्था के सुधरने के साथ साथ उनका ज्ञान भी बढ़ चला । एक दो लाख रुपया कमाने के बाद ही उन्होंने रोडेशिया की पड़ताल के लिये प्रस्थान कर दिया । इस देश में—जिसका उस समय नामकरण भी न हुआ था—उन्होंने पांच वर्ष बिताया । उनका उस समय काम था, बड़े-बड़े जानवरों का शिकार करना और वैरोट्सेलैण्ड से न्यासा सरोवर तक तथा जेम्बसी नदी से मशोनालैण्ड तक घूमना । उन्होंने वहां के निवासियों में से अनेकों को अपना मित्र बना लिया । अधिकांश में यह प्रथम

भारतीय ही नहीं–किन्तु प्रथम विदेशी थे, जिन्हें वहां वालों ने पहिले-पहिल देखा था। उनके हृदय में मातावेले लोगों के लिये बड़ा प्रेम है।

बृहस्पति ने कहा–'दक्षिणी जंगली लोग बड़े योद्धा हैं। वे यद्यपि क्रूर और असभ्य हैं, किन्तु हैं बहादुर और विश्वास-पात्र। यहां इस भयंकर जंगल में, जहां कुछ भी अच्छा नहीं है, जहां कीड़े, फतिंगे तथा वृक्ष भी जहरीले हैं, तुम्हें मुश्किल से कोई स्वस्थ और सच्चा आदमी मिलेगा। मध्य अफ्रीका निवासी जातियों का शिर दक्षिण के शुद्ध बन्तू लोगों की अपेक्षा बहुत छोटा है। यह एक पुरानी कहावत है–जीवन योग्यतम के लिये है। तुम्हें यही सिद्धान्त संसार में सभी जगह मिलेगा, चाहे जहां तुम देखो। गोंडों और भीलों को अपने से अधिक सभ्य और शिक्षित ऊँच जातिवालों के सामने, देखा नहीं भारत में, परास्त हो जंगलों और पहाड़ों में भाग जाना पड़ा। शताब्दियां बीत गईं वह ज़रखेज़ और आबाद जमीन से बेदखल हो गये। इंग-लैण्ड में भी यही हुआ। प्राचीन ब्रिटेन और केल्ट, अधिक पुष्ट तथा सुपुष्ट रोमक एवं सेक्सनों से दबाये जाकर वेल्स की पहाड़ियों में भाग गये। तुम देखोगे कि ये निर्बल और अयोग्य जातियां भाग कर पहाड़ों में ही अधिक शरण लेती हैं, क्योंकि वहां उन्हें छिपकर जान बचाना आसान मालूम होता है। इस महाद्वीप अफ्रीका में निर्बल जातियों को पहाड़ों में शरण लेने की आवश्यकता न थी, उनके लिये यह दण्डकारण्य बहुत सुरक्षित स्थान था। अब इन्हीं जंगलों में हमें वनचर और बौने मिलते हैं। दक्षिण ओर जाने पर फिर हमें वनचर पहाड़ों में छिपे मिलते हैं। पहिले मैंने स्वयं स्टार्मबर्ग के पहाड़ों में उन्हें देखा, वह इतने कुरूप थे कि मुझे सचमुच विश्वास हो गया था कि वह वानर हैं। काफिर पहिले-पहिल भूमध्यरेखीय प्रदेश से आये, यह निर्विवाद है। किन्तु उन्होंने रोडेशिया, नेटाल और ट्रान्सवाल की उपजाऊ भूमि को, इन भयंकर और बफाते जंगलों से अधिक पसन्द किया। फिर उनकी बड़ी फौज ने वहां के प्राचीन निवासी वनचरों और होटन्टोटों को मार भगाया, और भूमि पर अपना अधिकार जमा लिया।

'अब देखो न उन लोगों को, जिनकी सन्तान आधुनिक जुलू, बसूतो' स्वाजी, माताबेले और फिंगो हैं, उनका एक एक आदमी योद्धा है। जुलू और फिंगो, उनका प्रत्येक आदमी चार हाथ ऊँचा, असेगे से सुसज्जित, गोगर्म की ढाल हाथ में लिए हुए—मृत्यु को हँसी समझता है। और बसूतो ? यह गठीले बदन और चौड़े सीनेवाले आदमी बिना दम लिये दिन भर दौड़ सकते हैं। कहा है, 'वीर भोग्या वसुन्धरा' तो क्या यह लोग भूमि की सम्पत्ति के योग्य अधिकारी नहीं है ? क्या इनका अपनी विजित भूमि पर उसी प्रकार का अधिकार नहीं है, जैसा आर्य, रोमक, सेक्सन, डेन या किसी भी विजेता का। निस्सन्देह उनका अधिकार है। विकास प्राकृतिक योग्यता का एक दृढ़ सिद्धान्त है। और इस विषय में वह मानवजगत पर भी वैसा ही लागू है, जैसे पशुजगत पर। प्राकृतिक योग्यता से यहां मानसिक और शारीरिक दोनों योग्यताएं अभिप्रेत हैं। सुस्त, निर्बल और अयोग्य व्यक्ति जाति को दूषित करता है। टेढ़ी पिंडली, पतली छातीवाले लोग यदि अपनी त्रुटि को उत्तम मानसिक योग्यता से नहीं पूर्ण कर सकते, तो वह भूतल के केवल भार हैं। उनकी सन्तान में उनके दोष और भी स्पष्ट प्रकट होंगे। हम संसार में उन्नति चाहते हैं। प्रकृति भी इसे चाहती है, और वह उसे ले के रहेगी। निर्बल कदापि जीवित नहीं रह सकते। परिश्रमी आगे बढ़ेंगे, वह अधिक शक्तिशाली और दृढ़ बनेंगे, चाहे वह शरीर से श्रम करते हों या दिमाग से। आलसी, निर्बल मस्तिष्क, निर्बल शरीर, और अस्थिरमनस्क को संसार से नष्ट होना पड़ेगा।'

यह आसानी से जाना जा सकता है, कि इस प्रकार के वार्त्तालाप को, सत्यव्रत जैसे एक लड़के ने भी बहुत ही रोचक और शिक्षाप्रद पाया। सत्य ने इस शिक्षा से लाभ उठाने में जरा भी सुस्ती या बेपरवाही न की। वह इस विचित्र दुनिया के बारे में, जिसमें कि वह था, जो कुछ हो सके जानना चाहता था। नरेन्द्र एक भद्र पुरुष थे—इसे स्वीकार करना होगा—किन्तु उन्होंने कभी अपनी मेधाशक्ति का बहुत अधिक उपयोग नहीं किया था। तथापि वह ध्यानपूर्वक तथा बड़ी उत्सुकता से बृहस्पति

के कथन को सुनते तथा बीच-बीच में प्रश्न भी करते थे। एक बार उन्होंने पूछा—

'किन्तु, मुझे यह तो बताइये, जब यह आदिम जन्तु इतने भयंकर तथा भीमकाय थे, तो क्यों फिर भूतल से विलुप्त हो गये ? यह क्यों हुआ, जो आज उन्हें पृथ्वी से निर्जीव कहा जाता है ?'

वृहस्पति—'यह वही कारण थे, जिन्हें मैंने अभी वर्णन किया है। बिना अपवाद के वह सभी मस्तिष्क-हीन थे। प्राचीनतम प्राणधारियों में से बचे हुए गैंडा, मगर और कच्छप हैं। तुम जानते हो, कि इनमें से कोई भी विशेष बुद्धिशाली नहीं है, तथापि कच्छप और इच्थ्याशरट या ब्रण्टोशरट में वही भेद था, जो कि एक शिक्षित मनुष्य और कच्छप में। ब्रण्टोशरट की कुछ जातियां चालीस हाथ लम्बी होती थीं, लेकिन मेरे बेटे ! उनके बुद्धि का पता उनकी खोपड़ी से मिलता है। मैंने स्वयं मारतीय-अद्भुतालय, में उनका पर्यवेक्षण किया है। वह कुत्ते की खोपड़ी से भी छोटी हैं। सोचो इस मस्तिष्क को नाड़ी ज्ञानतन्तु, और विचित्रतापूर्ण इन्द्रियों सहित उस चालीस हाथ लम्बे महाशरीर पर काबू रखना है। तुम सोच सकते हो कि काबू रखने के बाद वहां कितनी शक्ति सोचने के लिये बच सकती है ? इतने बड़े शरीर के होने पर भी वह प्राणधारी बुद्धिशून्य थे। खयाल करो, एक केंचुआ, सत्तर हाथ लम्बा ! देखने में वह भयंकर जरूर मालूम होगा, किन्तु तुम एक शेर या बाघ की अपेक्षा उसे आसानी से पराजित कर सकते हो। शेर या बाघ क्यों दुस्साध्य हैं ? इसलिये कि सारा ही मार्जार-वंश अत्यन्त समझदार है। यह संसार में पीछे आये, अभी कितनी ही शताब्दियों तक कम से कम पालतू की भांति, यदि हम सारे सिंह, और चीतों को मार भी डालें तो भी बचे रहेंगे। लेकिन महाकाय शरटोंके बारेमें यह कैसे आशा हो सकती है ? मुझे तो यह आश्चर्य होता है कि वह कैसे शताब्दियों और सहस्राब्दियों तक जीवित रहे ? उस वक्त के अस्थि-पंजर हमें प्राप्त हैं। जुरासीय युग की प्राचीनता पर तुमने कभी ख्याल किया है ? अच्छा सुनो, मैं बताता हूँ। नवीनतम स्तर पृथ्वी का वह भाग है, जिसे प्लेइस्तो-

सेन (pleistocene) कहते हैं, जो एक सौ चालीस हाथ की गहराई तक में पाया जाता है। इसे पृथ्वी का ऊपरी चर्म या झिल्ली चर्म कहा जा सकता है। और यह नवीनतम स्तर जानते हो कितना पुराना है ?–पांच लाख वर्ष। और सबसे नीचे वाला स्तर– केम्ब्रीय प्रस्थर–जो चौवालीस हजार हाथ नीचे मिलता है इसकी आयु की कल्पना बहुत कठिन है। शायद उसे प्रकाशित करने के लिये अंक नहीं हैं। जुरासीय युग, जिसमें यह जन्तु रहते थे, करोड़ों वर्ष पूर्व था, और प्रथम शरट और भी नीचे पाये गये हैं, अर्थात् त्रयासीय चट्टानों में।'

नरेन्द्र–'तिफ़ पर भी आप कहते हैं कि अरब वर्ष पूर्व रहने वाले इन क्या फ़रटों में फ़े एक को मैंने अपनी इन्हीं आंखों फ़े देखा है ?'

वृहस्पति–'हां, मैं भूला नहीं हूँ, उस समय मैं सन्निपात में न था। और इसके अतिरिक्त तुमने स्वयं जन्तु उसका पदचिह्न देख लिया। यह बड़ी विचित्र बात है, किन्तु इस सच्ची घटना के अस्वीकार करने का कारण नहीं है। मुझे नहीं मालूम था कि एक प्रकार के ऐसे जन्तु की विद्यमानता की सूचना किसी और आदमी ने भी वहां दी है। यह कोई अत्यन्त अद्भुत बात भी नहीं, क्योंकि शायद तुम्हें याद हो–कुछ वर्ष पूर्व एक बहुत ही असाधारण बात का पता एक आदमी ने लगाया था, जिसका नाम डाक्टर हयाशी है। मेलोडन एक प्राग्-ऐतिहासिक महाकाय श्लथ प्राणी था, जिसके लिये कहा जाता है, कि वह हजारों वर्ष पूर्व निर्बीज हो गया। और तिस पर भी इस मेलोडन का एक चमड़ा १८८० ई० में, पटगोनिया (दक्षिणी अमेरिका) की एक गुफा में मिला था, और यह चमड़ा अभी बिगड़ने भी नहीं पाया था। खुली हवा में पड़े रहने पर भी इसके बाल जैसे के तैसे ही थे, जिससे जान पड़ता था, कि उसे मरे कुछ सप्ताह ही हुए थे।'

नरेन्द्र–'फ़चमुच ! आप मुझे आफ़्चर्य में डाल रहे हैं ! हम बड़े विचित्र फ़मय में रह रहे हैं।'

वृहस्पति–'हमें निस्सन्देह मानना चाहिये। यदि किसी विलुप्त मानी गई जाति का एक नमूना विद्यमान है, तो तुम्हें क़बूल करना होगा, कि उस

जाति के और भी नमूने विद्यमान हो सकते हैं। चाहे वह दीर्घजीवी ही हों, किन्तु इतने समय तक उसकी विद्यमानता से ही यह खयाल उठता है, कि इस घाटी में कहीं पर प्राग्-ऐतिहासिक काल वाले इन प्राणधारियों का एक उपनिवेश है, मैंने स्टोगोशरट को छोड़कर और किसी को नहीं देखा। किसी भी आधुनिक जन्तु का पदचिह्न जरा भी इससे नहीं मिलता। यह किसी शरट (गिरगिट या छिपकली) का पदचिह्न है, लेकिन हाथी के पदचिह्न से बड़ा है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है, कि अब से पहिले स्टेगोशरट की आकृति और गठन के विषय में बहुत सन्देह था। उसकी अस्थियों के ढंग से हमें पता लगता था कि वह एक प्रकार का शरट था, और उन्हीं अस्थियों की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई से, वैज्ञानिक उसकी लम्बाई चौड़ाई, मोटाई का भी अनुमान लगा सके थे। अब यदि सभ्यजगत् में जाने का मेरा सौभाग्य हुआ, तो मैं इस विषय पर प्रत्यक्ष गवाही दे सकूंगा, लेकिन मुश्किल यह है कि कोई मेरी बात पर विश्वास न करेगा। अपनी जिन्दगी भर में, मुझे फोटो केमरे की इतनी आवश्यकता कभी न मालूम हुई थी।'

सत्य—'कब आपने इस जानवर को देखा था?'

बृहस्पति—'मैंने इसे दो बार देखा है। पिछली बार तुम्हारे आने से तीन या चार सप्ताह पहिले देखा था। मैंने एक बार एक गैंडापक्षी देखा, और जहां गैंडा-पक्षी हो, वहां गैंडा अवश्य रहता है। इधर मैंने कई वर्षों से गैंडे का शिकार न किया था; और मैं उसके चमड़े को भी चाहता था। अतः अपनी एक्सप्रेस राइफल और कुछ विस्फोटक गोलियों वाले कारतूस ले मैं नदी के किनारे किनारे कोस भर उस स्थान पर चला गया, जहां मैंने पक्षी को हवा में उड़ते देखा था। एक बड़ी भारी झाड़ी थी जिसके भीतर चिड़ियों ने घोंसला बनाया था। मैंने जान-बूझकर ताली पीटी, जिसमें कि आवाज हो। तुरन्त ही गैंडा-पंछी झाड़ी से उड़ भागी। मैं उस स्थान से दो सौ हाथ दूर पर था, उसे उड़ती देखकर मैंने आगे बढ़कर गैंडे पर गोली दागना चाहा, उसी समय एकबएक वह भीमकाय प्राणधारी—जो वहां कीचड़ में पड़ा

था—अपने पैरों पर खड़ा हो मेरी ओर बढ़ा। मैं उसके शिर को देख सकता था, जो कि उस वक्त झाड़ियों के नीचे छिपा हुआ था, किन्तु उसकी मेह-राबदार पीठ उलटी हुई नाव की तरह पन्द्रह हाथ लम्बी थी। पीठ के बाद पूंछवाले मेरुदण्ड पर बड़े-बड़े तिकोने कांटों की पांती थी। सच कहूँ, मुझे एक्सप्रेस राइफल की सुध ही भूल गई। मैं झट पीछे की ओर मुड़ा, और सर पर पैर रखकर वहां से बेतहाशा भगा। जब मैं अपने वृक्ष पर पहुँचा, तब मेरे दम में दम आया।

आश्चर्य के मारे आंख फाड़कर देखते हुए सत्य ने पूछा—'और पहिली बार कब देखा था?'

वृहस्पति—'वह तो इससे भी अधिक हृदय-विदारक दृश्य था। वहां भी मैंने जानवर को नदी के किनारे ही, जहां दो हाथ गहरी कीचड़ थी देखा था। यह बात कई महीने पहिले की है। मेरे पास उस समय रायफल छोड़, बन्दूक भी न थी। यद्यपि मेरा ऐसा करना कुछ मूर्खतापूर्ण सा मालूम होगा, किन्तु इतने दिनों इस स्थान पर रहते-रहते ऐसी बेपरवाही आ जानी बिलकुल स्वाभाविक है। अपने जीवनाधार केलों के बगीचे में दिन भर काम करने के बाद मैं नदी के किनारे किनारे पाव मील तक शाम की ठंडी हवा खाते चला गया था। मैं एक पत्थर पर बैठा था, और बनारस और उसकी गलियों को सोच रहा था—क्या फिर मैं वहां पहुँचूंगा?—क्या फिर मेरे बालमित्र तथा अन्य साथी-समाजी मुझे मिल सकेंगे? इत्यादि। मेरे सम्मुख, नजदीक ही एक बड़ा नरई का खेत था, जिसे तुम पश्चिम ओर नजर डालने पर अब भी देख सकते हो। यह नरई दस हाथ से अधिक ऊँची थी। मैं बैठा हुआ था, इसलिये अपने आगे की ओर कुछ हाथों से अधिक न देख सकता था। एकाएक मैंने आवाज आती सुनी। मालूम होता था, जैसे एक बैलों की बड़ी भारी दँवरी उसके अन्दर घुमाई जा रही है, और उनके पैरों के नीचे वह लम्बी-लम्बी घास दब कर मरमरा रही है। मेरे अच्छे नसीब थे, जो मैं झट खड़ा हो गया और किनारे-किनारे दूर भाग गया। पुराना शिकारी होने से, मैं शेर या अर्ना के सामने नहीं पड़ना चाहता था, और

मुझे जान भी पड़ा था, कि इन्हीं में से कोई होगा। किन्तु अत्यन्त आश्चर्य और आतंक में डालते हुए, वहां मुझे कोई बहुत लम्बी-चौड़ी काली चीज देखने में आई, जो झूमती हुई धीरे-धीरे मेरी ओर बढ़ रही थी। अब मेरा वहां खड़ा रहना इष्टकर न था; तथापि जिज्ञासा ने मुझे वैसा करने को बाध्य किया। मैंने सोचा, जेम्वसी से नाइजर तक, सारे ही अफ्रीका के जंगलों में रहने वाले जानवरों को मैं जानता हूँ, तथापि यह क्या है, मैं नहीं कह सकता। गैंडे से वह कहीं अधिक भारी था, और हाथी से कहीं अधिक लम्बा चौड़ा। उस समय मेरे दिमाग में प्राग्-ऐतिहासिक काल के जीवधारियों की बात न आई। मैं बड़े सन्देह में पड़ गया। अपने जीवन में मैंने अपने आपको कितनी ही बार जंगली हाथी, घायल शेर, और अर्ना की आंखों के सामने पाया, किन्तु मैं कभी भयभीत न हुआ। मैं सदा सीधे और मजबूती से गोली चलाता था। इस अवसर पर उस अज्ञात वस्तु ने मुझे डरा दिया; तथापि— जैसा कि मैंने कहा—मैं वहां से भागा नहीं। मेरे दिल में दृढ़ संकल्प हो गया था कि पता लगाऊँ, यह क्या है।

'एकाएक वह खड़ा हो गया। उस समय जब कि उसका शरीर आधा घास से ढँका हुआ था, वह मुझसे तीस हाथ से अधिक दूर पर न था। अब मैंने एक अपूर्व बात की। यद्यपि मैं भयभीत था, किन्तु था बड़ा उत्सुक। मैं उसकी पीठ को भली प्रकार से देख सकता था, वह सूर्य के प्रकाश में थी। मैं पांच मिनट तक खड़ा रहा और तब तक वह भी चुपचाप खड़ा रहा। फिर मैंने पीछे फिर कर एक पत्थर उठाया और उसे जोर से उसके ऊपर फेंका।' अपनी घबराहट को न रोक कर सत्यव्रत बोल उठा—'ओह! और क्या वह उसके शरीर पर जाकर लगा।'

बृहस्पति—'निस्सन्देह, और मुझे विश्वास है कि वह उसके शिर पर जाकर लगा; पत्थर केवल भारी ही न था, बल्कि तेज भी था। अब वह अपने पिछले पैरों पर खड़ा हो गया। और मैं उसे अपने से कई हाथ ऊँचा देख रहा था। मैंने उसके हरा लिये हुए पीले रंग के भारी पेट को भी देखा। उसके अपेक्षाकृत छोटे-छोटे अगले पैर उस समय हवा में उठे हुए थे। उनकी

आकृति चूहों के अगले पैरों की भांति थी। उसका मुण्ड पक्षी के मुण्ड सा जान पड़ता था। यद्यपि शिर छोटा था; किन्तु मुंह बड़ा लम्बा था। मुंह खुला हुआ था, और वह एक भाप छोड़ते इन्जन की भांति सां-सां कर रहा था।'

सत्य—'तब फिर आपने क्या देखा?'

वृहस्पति (हँस कर)—'मैंने और कुछ नहीं देखा, और न देखने की साध है। वहां से मैं फिर कर अपने घर पर चला आया, और जल्दी-जल्दी फिर सीढ़ी पर चढ़ गया। यहां आकर जानते हो मैंने क्या किया? मैंने थर्मामीटर लगा कर अपनी गरमी देखी। वह बिलकुल सामान्य थी। मुझे फिर तीन दिन तक इसी के सोच में बिताना पड़ा, तब कहीं मुझे यह निश्चय हो पाया कि यह स्वप्न न था, मैं बिलकुल जीता जागता, आंख कान से सावधान था। धीरे-धीरे तब जाकर सत्यता मुझ पर प्रकट हुई—स्टेगोशरट अब भी पृथ्वी पर विद्यमान हैं; और इससे भी अधिक यह कि वह इसी घाटी में विद्यमान है, जहां मैंने अपना झोंपड़ा बनाया है।'

सत्यव्रत का रंग कुछ पीला पड़ गया, उसने कहा—'लेकिन, यदि हम इस घाटी में घूमते-फिरते रहेंगे, तो अवश्य उन जानवरों में से कोई मिलेगा।'

वृहस्पति—'यदि ऐसा हुआ, तो अवश्य मैं उसे गोली मारूँगा। उसके शिर में एक गोली बस काफी होगी, मुझे तुम्हारी और नरेन्द्र की आवश्यकता न होगी। और मैं विश्वास दिलाता हूँ, यदि तुमने उसे देखा, तो अवश्य तुम घबराये बिना न रहोगे।'

नरेन्द्र—'बहुत ठीक! और आप जानते हैं, मैं क्या चाहता हूँ?—बराबर लगातार इसी घबराने को। यह मेरे लिये बहुत अच्छा होगा। मैं यहां आया ही इसीलिये। अस्तु, मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई, कि हताश न होना पड़ेगा।'

वृहस्पति—'स्टेगोशरट मुझे कुछ भी विकल नहीं करता। किन्तु जादूगर बादशाह के विषय में मुझे बहुत सन्देह है।'

—:o:—

अण्टोशरट

इसमें सन्देह है कि कुमार नरेन्द्र ने समझ-बूझकर कहा था, कि मैं संसार की सभी चीजों से अधिक उस प्राचीन काल के भयंकर महाकाय शरट को देखना पसन्द करता हूँ, जिसका वर्णन वृहस्पति ने उतना विस्तार से किया। इस वार्त्तालाप के कितने दिनों के बाद, तीनों भारतीय बकुंगा के साथ, घाटी के पश्चिम की ओर चले। चलने से पहिले नरेन्द्र ने वृहस्पति से वचन ले लिया था कि यदि आप जानवर के पद-चिह्न को पायें, तो उसको देखते देखते जानवर तक पहुँचने का पूरा प्रयत्न करें।

नरेन्द्र ने कहा था—'जानते हैं, मैं एक विचित्र खोपड़ी का आदमी हूँ। यदि मैं कहूँ कि मैं इफ़े करूँगा, तो चाहे पत्थर पड़े चाहे पानी, उफ़े अवश्य करूँगा। यदि मैं किफ़ी कार्य को आरम्भ करता हूँ तो उफ़े फ़माप्त किये बिना प्वांफ़ नहीं लेता। कहा जाता है कि मेरे पाफ़ दिमाग की बहुत कमी है, और मैं भी इफ़े प्वीकार करता हूँ, किन्तु इफ़ी वजह फ़े मैं काम दूफ़रे तौर से करता हूँ। जब मैं लड़का था तो मैंने एक बार अपने आपफ़े कहा था, 'मैं उन दृढ़ फ़ंकल्प, पि्थरचित्त आदमियों में फ़े होऊँगा, जो कुछ चाहते हैं उफ़े करके रहते हैं।' भारत छोड़ने फ़े पूर्व मैंने फ़बफ़े पपप्ट कह दिया था, कि मैं उन प्राचीन जन्तुओं के फ़िकार के लिये जा रहा हूँ, जिनके बारे में मैंने फ़माचार-पत्रों में पढ़ा है, और यदि मैं फिर लौटकर बनारफ़ जा फ़का, तो मैं यह बहाना नहीं चाहता कि 'मार फ़कता था, लेकिन मैंने नहीं मारा।'

वृहस्पति—'और यह बहुत सच्चा भाव है, मैं कदापि तुम्हारे इस विचार में बाधक न हूँगा। इसके अतिरिक्त मैं स्वयं इस प्राणधारी के विषय में तुम्हारे इतना ही उत्सुक हूँ। मुझे इसका बड़ा अफसोस है कि प्रत्येक बार मैं उसे देखने के समय घबड़ाकर भाग क्यों उठा। जो कुछ भी हो, उसका

आकार ही मेरी इस निर्बलता के लिये बहाना है । जब उसे तुम स्वयं अपनी आंखों से देखोगे तो मुझे आशा है, कि तुम मेरी भीरुता को सर्वथा निर्मूल न कहोगे ।'

उन लोगों के लिये सुरक्षित न होता, यदि वह एक खोखला करके बनाई हुई नाव द्वारा नदी के ऊपर की ओर बढ़ते । यद्यपि डेंगी का बनाना बिलकुल आसान था, क्योंकि वृहस्पति के पास बढ़ई के औजार पर्याप्त थे, किन्तु नदी वास्तव में कोई वैसी नदी न थी । पानी प्रायः घुट्ठी भर था, और कितनी ही जगह तो सिर्फ कांदो था । और उसमें नेवारी बड़े जोर की लगी हुई थी, जो कहीं-कहीं तो नदी के इस पार से उस पार तक लगातार चली गई थी । इस पांच-पांच हाथ ऊँची खड़ी हुई नेवारी को किसी नाव से पार करना असम्भव था । नेवारी की जड़ों और गाढ़े कीचड़ के कारण डांड़ से नाव को आगे बढ़ाने का प्रयत्न निष्फल था । तथा उस कीचड़ को जरा भी छेड़ने से उसमें से भयंकर दुर्गन्ध हवा में फैलने लगती थी, यह दुर्गन्ध सड़ते बनस्पति की थी ।

उपरोक्त कारणों से पैदल ही आगे बढ़ना निश्चय हुआ । वृहस्पति यह भी जानते थे कि इस प्रकार कई मील तक आसान रास्ता मिलेगा । चाहे कुछ भी हो, वह अन्धकारपूर्ण घने जंगल में घुसने की इच्छा न रखते थे । खुले और प्रकाशयुक्त मैदान में जान दे देना, भूख और कैद से परेशान होकर उस जंगल में मरने से कहीं अच्छा था ।

सारा सामान, जो उन्हें साथ ले चलना था, चार गट्ठरों में बांधा गया । उन पर चमड़े के मज़बूत तस्मे खूब मज़बूती से मढ़ दिये गये । यह निश्चय करना सचमुच उनके लिये आसान काम न था कि किस चीज़ को ले चलें और किसे छोड़ दें । इन सब प्रश्नों का निर्णय वृहस्पति पर छोड़ा गया था, जो अपने जंगल के महान् अनुभव के कारण इसके योग्य भी थे । बीच में सत्य और नरेन्द्र ने चिड़ियों के पंखों को जोड़ जोड़ कर अपने लिये कुर्ता भी बना लिया । वृहस्पति स्वयं वही बाघम्बर पहिने हुए थे, जो उनके पास दो वर्ष से था, और अब जगह-जगह उसके रोम झड़ने लगे थे । नरसिंह

को एक जांघिया दी गई। उसके अतिरिक्त उसे और किसी कपड़े की आवश्यकता न थी। हां, बन्दर के दांतों की माला अब भी उसके गले में थी।

पहिले सप्ताह की यात्रा पश्चिम की तरफ नदी के दाहिने या दक्षिण दिशा के तट से हुई। उस वक्त जंगल बाईं ओर था। नरसिंह के पास एक राइफल थी, और उसे उसके चलाने का ढंग भी बतला दिया गया था। वृहस्पति की आज्ञा से वह अपने अपने आग्नेय-अस्त्रों को भरे हुए आगे बढ़ रहे थे। क्योंकि उन्हें हर वक्त जंगल से बौनों के धावा करने का डर था। उनका दाहिना पक्ष सुरक्षित था, क्योंकि उधर किसी भी आदमी का आना असम्भव था।

उनका बोझा भारी था, और धूप कड़ी होने से, उन्हें सवेरे और सायंकाल के ठंडे वक्तों ही में छः सात घंटा चलना होता था, यही कारण था जो बड़ी मेहनत करने पर भी वह प्रति दिन कुछ ही कोस आगे बढ़ सकते थे। जंगल की अपेक्षा नदी के किनारे-किनारे आगे बढ़ना यद्यपि अपेक्षाकृत अच्छा था, किन्तु भूमि बहुत गीली थी। अब वह सब लोग नंगे पैर थे, और रास्ते में कहीं-कहीं घुटनों गहरा वही दुर्गन्धपूर्ण कीचड़ था। यह बड़ी विचित्र बात थी, कि यद्यपि कितने ही दिनों तक सूर्य बिलकुल न दिखलाई देते थे, लेकिन वहां गरमी असह्य थी। सारी घाटी एक प्रकार की धुंध और बाष्प से भरी हुई थी। सूर्योदय के आस-पास एकाध घंटे तक वायुमंडल स्वच्छ रहता था, और उस समय आदमी नदी पार के पर्वतों को देख सकता था। इस भाप में खास बात यह थी, कि वह पूर्ण स्वास्थ्यप्रद थी। ऐसी जगह और ऐसी अवस्था में मलेरिया (जाड़ा बुखार) वाले मच्छरों का आधिक्य बहुत ही सम्भव था, किन्तु टोली का एक आदमी भी ज्वर पीड़ित न हुआ, नरेन्द्र भी अबकी ठीक रहे, हालांकि कसई की उपत्यका में बार बार उग्र ज्वर और जूड़ी में फँसे थे।

यहां कोई उपयुक्त खाने की वस्तु न देख उन्होंने फिर जंगली अरारोट की तलाश की। वृहस्पति ने उसके खाने की विधि बतलाई, जिससे उसकी कड़वाहट कम हो जाती थी और विषैला असर भी दूर हो जाता था। पहिले

जड़ को पानी में डालकर खूब उबाल लिया जाता था, फिर उसका भुरता बनाकर धूप में सुखा लेते थे, और बस। अब वह खाने में कुछ अच्छा भी जान पड़ता था, और शरीर में अच्छी तरह शक्ति भी पैदा करता था।

वृहस्पति के पास एक वृहत्प्रदर्शक शीशा था। यह पहिले रमेश का था, जो पराग तथा पत्तों की सूक्ष्मता आदि के देखने के लिये उसे व्यवहृत करता था। कुछ सूखी पत्तियों और तिनकों को इकट्ठा कर इस वृहत्प्र-दर्शक शीशे की सहायता से वह धूप में सदा आग बना लेते थे, किन्तु इसके लिये उपयुक्त धूप मध्याह्न के समय थोड़ी देर के लिये हो पाती थी, जब कि सूर्य किरणें सीधी भाप को फाड़ती नीचे पड़ती थीं। पर्यटक के पास एक बिजली की मशाल भी थी, किन्तु बैटरी के समाप्तप्राय हो जाने से, उसका व्यवहार केवल अत्यन्त आवश्यकता के समय होना निश्चित किया गया था।

जिस दिन वह नदी को पार कर उत्तरवाले किनारे पर गये, उससे पहिलेवाली शाम की यह बात है। शाम को नरेन्द्र और सत्य ने भी विचित्र जन्तुओं में से एक को देखा, जो कि आज से कोटि कोटि वर्ष पूर्व उस विस्मृत समय में इस भूमंडल पर रहते थे। और अब जिनका पता केवल उनकी अस्थि कंकालों से, जो कि त्र्यासीय और उसके पिछले युग वाले स्तरों में पाई जाती है, मिलता है। उस दिन सूर्यास्त से जरा ही पहिले उन्होंने नेवारी को हिलते देखा, फिर धुन्ध में उड़ते हुए एक भीमकाय जुलाहा-फतिंगा को देखा। वह दो हाथ से अधिक लम्बा था। उसके पारदर्शक चमकीले पंख इन्द्र-धनुष के सारे ही रंगों से बड़ी सुन्दरता से रंजित थे। उसका शरीर मनुष्य की जांघ से भी अधिक मोटा था, और शिर, शरीर की अपेक्षा बहुत ही भारी था।

बड़े आश्चर्य की बात तो यह थी कि इस बहुत ही पतले और पार-दर्शक पंख के सहारे वह अपने उतने भारी शरीर के बोझ को हवा में सम्हाले हुए था, और तिस पर भी हमारे आजकल के जुलाहों की भांति ही आगे-पीछे अगल-बगल मुड़ने में भी वह फुर्तीला था। यह महाकाय फतिंगा अपने

आधुनिक वंशजों की भांति पर फैलाकर कितनी ही देर तक उड़ते-उड़ते धुन्ध की गहनता में लुप्त हो गया। उन्होंने इसके बारे में वृहस्पति से पूछा। वृहस्पति ने कहा—'मैं तुमसे इतना ही कह सकता हूँ कि यह उपत्यका जुरासीय युग के प्राणधारियों के नमूनों से पूर्ण है। मैं उम्मीद करता हूँ, तुम्हें डार्विन के सिद्धान्त मालूम होंगे, जिनका अधिकांश अब तक सत्य सिद्ध हो चुका है। जातियों का व्यवच्छेद बिलकुल सन्देहशून्य है। वह जातियां जो युगोंपर्यन्त एक ही परिस्थिति, एक ही जलवायु, एक ही अवस्था में रह जाती हैं, तथा जिनका भोजन शताब्दियों तक एक ही प्रकार का रहा, एवं जो एक ही प्रकार के शत्रुओं से त्राण पाने के प्रयत्न में रहीं, वह विशेष विकास नहीं सम्पादन कर सकीं—अर्थात् वह न्यूनाधिक पूर्ववत् ही रह गईं। लेकिन यह कदाचित् ही क्यों होता है ? इसलिये कि सारे भूमंडल पर, आबोहवा एवं स्थिति बराबर बदलती रहती है। हम सिर्फ यही मान सकते हैं कि जुरासीय युग से इस उपत्यका में परिवर्तन हुआ ही नहीं, या यदि हुआ भी तो नाम मात्र। यह महाकाय फतिंगा उन फतिंगों में से है, जो उस युग में हवा में उड़ते थे। यह एक जुरासीय फतिंगा है, समझा ? तुमने दलदलों के पास क्या कभी एक प्रकार की पत्र-पुष्प-रहित घास उगती देखी है ? अच्छा, तो यह घास उसी युग की घास के सदृश है। वह दलदल, सील और कुहरा का युग था। तुम उन सभी बातों को यहां अपने चारों ओर देख रहे हो। सम्भव है, यह जानवर हजारों शताब्दियों पूर्व यहां कहीं और जगह से चले आये हों। तो भी यह कल्पना करनी भूल होगी कि यह आज भी वैसे ही हैं, जैसे कि जुरासीय युग में थे। इनमें अवश्य कुछ परिवर्तन हुआ है। यह महाकाय फतिंगा और वह मेरा देखा हुआ स्टेगोशरट जुरासीय युग के जन्तुओं से ही आधुनिक जीवधारियों की अपेक्षा अधिक मिलते जुलते हैं, और यह ऐसा सत्य है कि जिससे इनकार नहीं किया जा सकता। यह वैसे ही हैं, जैसे हम लोग अपने समय से हजारों शताब्दियों पूर्व के समय में सदेह रख दिये गये हों। यहां हमारे चारों ओर वह स्थावर जंगम जगत् है, जिसे हमारे मनुष्य जाति के आदिम पुरुषों ने भी नहीं देखा था।'

नरेन्द्र—'यह अत्यन्त रहस्यमय तथा भयंकर फ़ा मालूम होता है। मैं उफ़ जानवर को नहीं देखना चाहता। किफ़्मत अच्छी थी, जो वह इधर न आया।'

वृहस्पति—'यह तुमने ठीक कहा, क्योंकि कहा जाता है कि यह फतिंगा मांसाहारी था तथा यह अपने छओं फौलादी पैरों को किसी पशु या मनुष्य की गरदन में नीचे तक घुस सकता था। इसके जबड़े बड़े तेज और मजबूत हैं। सिर्फ एक चीज है, जिससे यह परास्त रहता है, वह यही आग है, जिसके पास आते ही इसके पंख पतंगी कागज की भांति झुलस जायँगे, फिर वह निस्सहाय गिर पड़ेगा, और तब उसे आसानी से पीसा जा सकता है।

नरेन्द्र—'मैं उफ़के पीफ़ने का खयाल भी नहीं ला फ़कता। फ़र की कफ़म, उफ़के खयाल फ़े मेरे कलेजे में कँपकपी उठने लगती है। वृहस्पति ने मुस्कराते हुए कहा—'क्यों ऐसा ? अच्छा ठहरो, जरा स्टेगोशरट को तो दिखाई देने दो।'

इस घटना ने नरेन्द्र पर बड़ा भारी असर डाला, सचमुच वह इतने भयभीत हो गये कि उन्हें अपने पहिले इरादे का खयाल में भी आ जाना बुरा मालूम होता था। इसीलिये वह नदी को जल्दी पार कर जाना चाहते थे। नदी को पार करने के और भी कारण थे, एक तो दूसरे किनारे की ओर केले की तरह का कोई वृक्ष दिखाई पड़ता था, दूसरे अब जंगल दलदल से मिल गया था, और आगे बढ़ना बहुत मुश्किल था, लेकिन दूसरीओर नदी के किनारे-किनारे जहां तक नजर जा सकती थी, चलने के लिये काफी जगह थी। सूर्योदय के समय जब वातावरण स्वच्छ था, सत्य एक ऊँचे वृक्ष पर चढ़ गया कि आगे के दृश्य की सूचना वृहस्पति को दे। उसे आगे एक जगह नदी का पाट एक मील का दिखाई पड़ा और वहां नेवारी भी और जगहों की अपेक्षा कम लम्बी और घनी थी। उन्होंने एक वृक्ष को काटकर, उसे खोखला करके एक डेंगी बनाई, यह उसी तरह की थी जैसी कालेपानी के जंगली बनाते हैं। उन्होंने दो डांड़ भी बनाये, तथा कम गहरी जगह में खने के लिये एक लम्बी सी पतली डाल की लग्गी भी ले ली। सत्यव्रत

को एक दाव हाथ में देकर मांगा पर बैठा दिया गया, कि उससे नेवारियों को वह छांटता जाय, जिसमें डेंगी की गति में बाधा न हो।

उन्होंने सूर्योदय के समय प्रस्थान किया। थोड़ी दूर तक रास्ता ठीक रहा, किन्तु जब वह दलदल के बीच में पहुँचे, तो मालूम हुआ कि डेंगी पंक में चिपक गई। वहां से आगे बढ़ने में उन्हें घण्टों लगे। पंक इतनी गहरी थी कि लग्गी नीचे तक नहीं पहुँचती थी। फिर डांड़ से कीचड़ को टालते टालते मुश्किल से चार अंगुल बढ़ पाते थे, उसके बाद फिर वही आफ़त।

इस प्रकार अंगुल-अंगुल करके वह उस गरमी में आगे बढ़ने की जानतोड़ कोशिश कर रहे थे, वह बिलकुल थक गये थे, बदन पसीने-पसीने था। अन्त में वह उस जंगल से निकल पाये। अब वह एक झील-सी में थे जो कोई चार सौ हाथ के घेरे में होगी। दिन भर के थके-मांदे होने से वह ज़रा सा वहां ठहर गये। और थोड़ा सा अरारोट और झरने पर से लाये स्वच्छ जल से अपनी क्षुधा पिपासा को शान्त करने लगे।

उसी समय उन्हें एक जोर से चलती हवा के समान एक आवाज़ आती सुनाई दी। आवाज मालूम होती थी कहीं नजदीक ही से आ रही है। सत्य-व्रत तुरन्त वृहस्पति की ओर ताकने लगा। यद्यपि कड़ी धूप ने उसके चमड़े को झुलसाकर काला कर दिया था, किन्तु यह अच्छी तरह दिखाई देता था कि उसके चेहरे पर ज़र्दी दौड़ रही है। दोपहर की उस बफियाती धूप में चारों ओर नीरवता तथा स्तब्धता थी। सिर्फ वही एक जगह थी, जहां से आंधी सी आती जान पड़ती थी। यह शब्द जैसे-जैसे पास आता जाता था, वैसे ही वैसे ऊँचा होता जाता था।

सत्य—'यह क्या है?'

डांड़ को पकड़े वृहस्पति ने कहा—'पीछे की नेवारी से! कोई चीज इधर आ रही है। यह आवाज नेवारियों के टूटने और दबने की है। झटपट! हमें छिप जाना चाहिये।'

उन्होंने डेंगी को पीछे लौटाने के लिये बड़ा जोर लगाया। और ऐन उस वक्त में, जब कि अभी वह पूरी तरह आड़ में नहीं पहुँच सके थे, पानी

डभका, और मालूम हुआ हजारों मन की कोई चीज़ झील के जल में फेंक दी गई है। उसी समय जलाशय का तल, जो अब तक स्फटिक सदृश दिखाई पड़ता था, वैसे ही चंचल हो पड़ा, जैसे सरयू स्टीमर के चलने से। बड़ी-बड़ी लहरें उठने लगीं, वह डेंगी को ऐसा झटका दे रही थीं कि जान पड़ता था, वह उलट जायगी। उन लोगों ने तुरन्त जरा और नेवारी में घुसकर जोर से घास को पकड़ लिया।

और उसी समय अपने से पचास गज पर झील पार, पानी के ऊपर चार हाथ उठा हुआ एक मुंड देखा। यह मुंड जैसे किसी भीमकाय सर्प का सा था। वह सर्प के शिर की भांति ही त्रिकोण था। उसकी गरदन लम्बी किन्तु अपेक्षाकृत पतली और चापाकृत थी, जो कि—जैसा कि कहा गया है—पानी से चार हाथ ऊपर निकली हुई थी। देखने ही से उसकी भयंकरता और क्रूरता स्पष्ट हो रही थी।

उसका आकार इतना बड़ा था कि यद्यपि जल्दी-जल्दी चल रहा था, तो भी उस भयानक जन्तु की पीठ को नेवारी से पूरा बाहर आने में कुछ सेकेण्ड लगे। यह पीठ हिप्पोपटम्स की भांति काली और चमकीली तथा आकृति में मगर की पीठ से बहुत मिलती-जुलती थी। पहिला भाग उसका चिपटा था, किन्तु आखिर में सांड़ के डील सा हो गया था। पीठ के थोड़ी दूर पीछे, पानी पर आगे पीछे हिलती हुई शरट (छिपकली) की बड़ी भारी पूंछ थी, जिसका सिरा बीच-बीच में दिखाई पड़ता था। इस शरट की पूरी लम्बाई पूंछ के छोर से अजगर सदृश मुख के ठौर तक करीब पचीस गज थी।

हमारे पर्यटकों पर, उस दृश्य के प्रभाव का क्या कहना है ? सब भिन्न भिन्न तरह से आतंकित हुए। वृहस्पति ने कहा था कि अब की देखने पर मैं जरूर उसे मारूँगा, किन्तु उन्होंने कुछ न किया; यद्यपि अपनी रायफल को छाती में लगाये उस ओर किये वह एकदम दागने के लिये तैयार थे। सत्यव्रत को तो जान पड़ा लकवा मार गया, उसके हाथ-पैर फूल गये, उनमें कोई चीज़ उठाने की शक्ति ही न थी। और नरेन्द्र तो रुई के गाले की भांति सफेद थे, उनका श्वास टंग गया था।

मालूम होता है, उस जानवर ने इन लोगों को न देखा, न उसे इनकी गन्ध ही मालूम हुई। वह सीधा झील पार कर उस पार की घासों में छिप गया। जिस समय वह आंखों से ओझल हुआ, उसी समय नरसिंह बड़े जोर से चिल्ला उठा। दूसरों ने मुड़ कर उसकी ओर देखा, उसकी काली पुतली ऊपर चली गई थी, आंखों की सफेदी सिर्फ दिखाई पड़ रही थी। तुरन्त ही वह बेहोश होकर डेंगी में गिर पड़ा। अब भी डेंगी पानी के हिलोरों से डगमगा रही थी।

वह लोग डेंगी को सुरक्षित रखने के लिये हाथों से नेवारी को पकड़े हुए थे, इसलिये कोई भी बकुंगा की खबरदारी के लिये न जा सका। एक मिनट के अन्दर ही, वह फिर होश में आ गया, और उठकर अपनी जगह पर आ बैठा। लेकिन उसके दांत अब भी कटकटा रहे थे।

पहिले पहिल नरेन्द्र ने अपनी जबान खोली, और पूछा—'यह कौन चीज थी ?'

बृहस्पति—'तुमने अपने क्या 'कुछ'—शरट को देख लिया। यह जानवर या तो ब्रण्टोशरट था या डिप्लोडोकस, या शायद सेटियोशरट रहा होगा—मैं निश्चित नहीं कह सकता। हमें किस्मत को धन्यवाद देना चाहिये कि हम अब भी जीवित हैं।'

कुमार नरेन्द्र ने एक ठण्डी सांस ली, और अपने भंवों से पसीना पोंछते हुए कहा—'मैं—मैं बर्फ़ राजघाट का अपना बैठका चाहता हूँ, काफ़ी।'

बिजली-दरवाजा

इस घटना के बाद झील पार कर उस किनारे पर जाने के लिये, उनमें से एक भी उत्सुक न था। वह भीमकाय सरीसृप, जिसे उन्होंने अभी देखा था, अवश्य उस पर उसी लम्बी घास में बैठा होगा। वृहस्पति ने बतलाया कि यह जानवर गिरोह बांध कर रहते हैं। तो फिर कैसी आफत आयेगी, जब वह आगे बढ़ने पर अपने आपको चारों ओर से कई दर्जन ऐसे जानवरों से घिरा पायेंगे ? उनकी डेंगी बहुत हल्की थी और ठीक से गढ़ी भी नहीं गई थी, इसलिये वैसी हालत में उसका, उलट कर अपने आश्रितों को शत्रुओं के मुंह में डाल देना बिलकुल आसान था।

वृहस्पति बड़े वीर हृदय के मनुष्य थे, किन्तु उनकी भी हिम्मत आगे बढ़ने की न होती थी। और वह इसके लिये भी तैयार न थे, कि लौट कर पीछे जायँ। अपनी जिन्दगी भर उन्हें एक-न-एक आफत का बराबर सामना करना पड़ता रहा है, इसलिये वह इस बात को भली-भांति जानते थे, कि जो दुर्बल हृदय और शिथिल संकल्प हैं, उन्हें उस वक्त बच रहना बहुत मुश्किल होता है जब कि प्रकृति की महाशक्ति विरोध पर तुली होती है।

सहस्रों वर्षों से मनुष्य जो फूलता-फलता, विजयी होता तथा जीवित रहता चला आया है वह क्यों ? क्या यह उसकी शारीरिक शक्ति और योग्यता से ?—नहीं, बल्कि इसलिये कि वह सारे ही प्राणियों में सबसे अधिक बुद्धिशाली है। उस दुनिया में, जहां इस तरह के वीभत्सकाय शरट, ऊनधारी गैंडा और खड्गदन्ती व्याघ्र बहुतायत से हों, गुफावासी (आदिम) मनुष्य ने अपने आपको बचा रक्खा। वह उस समय क्या था ? अभी उसे सिर्फ आग का पता लग पाया था, वह हड्डी और पत्थर के तेज किये हुए हथियारों को बनाना और चलाना जानता था। तब भी उसने, अपने और अपने परिवार को, इन भयानक महाकाय प्राग्-ऐतिहासिक जन्तुओं के बार-बार के हमले से बचाया।

एक तरह से बृहस्पति मिश्र बीसवीं शताब्दी के गुफावासी थे। उन्हें जंगल में वास करते कितने ही वर्ष हो गये। वह एक वैज्ञानिक तथा निरीक्षण-परीक्षण में वैसे ही असाधारण पटु थे, जैसे कि प्रकृति के अनन्योपासक आदिम मनुष्य। वह पर्वतों, जंगलों और जलमार्गों तथा बहुदूर व्यापी मैदानों के विशेष विशेष चिह्न को वैसे ही पढ़ सकते थे, जैसे कोई पुस्तक में पढ़े। वह एक सच्चे शिकारी की उस पक्की प्रकृति से युक्त थे, जो कि आखेटोपजीवी गुफा-निवासियों का एक विशेष गुण था।

इस अवसर पर उनकी बुद्धि विचलित न हुई। उन्होंने देखा कि पीछे जाना केवल निर्बलता ही नहीं है बल्कि भारी मूर्खता है। उन्होंने निश्चित कर लिया कि चाहे जो हो पार जाना ही होगा। अनुभव ने बताया कि वहां अवश्य कहीं कोई पतला जलमार्ग है, क्योंकि झील का जल, धीरे-धीरे उधर से आ रहा है। यह नदी अरुंगा इस दलदल से होती हुई किसी ओर बह रही है। यह पंक जो नदी के दोनों तटों पर जमा है, बाढ़ के समय में पानी में घुलकर फैल जाता है और हर बार इसकी एक मोटी तह किनारे की भूमि पर जम जाती है। जिससे कि स्तरीकृत (तह पर तह जमे हुए) चट्टान बनते हैं। यही वजह है कि स्तरीकृत चट्टानों में प्राग्-ऐतिहासिक जन्तुओं की पथराई हड्डियां पाई जाती हैं।

अब बृहस्पति ने डांड़ को हाथ में लिया, और डेंगी को झील की ओर ठेल दिया। यह देख नरसिंह घबड़ा गया। उसने खयाल किया कि हमारा नेता झील पारकर उस पार की उन घासों में जाना चाहता है जहां वह कालरूप जानवर हमारी प्रतीक्षा में है। थोड़ी ही देर में डेंगी कीचड़ से निकल कर गहरे पानी में चली गई, अब बृहस्पति ने उसके मुंह को फेर कर ऊपर की धार की ओर किया!

बृहस्पति—'डांड़ पकड़ो नरेन्द्र, हम गहरे पानी में आ गये हैं। धार भी तेज नहीं है। यदि हम पूरी शक्ति लगायें, तो झील से निकल जाने में देर न लगेगी।'

नरेन्द्र ने झटपट आज्ञा का पालन किया। डांड़ हाथ में लेकर उन्होंने

खूब जोर से खेना शुरू किया, और तब तक खेते रहे, जब तक कि उनके बाजू थक न गये। फिर सत्य ने उन्हें छुड़ाया वृहस्पति की ताकत बड़ी गजब की थी। वह काम करने में थकने का नाम तक न जानते थे। नरसिंह अब भी डर के मारे बदहवास था, उससे ऐसी अवस्था में कुछ सहायता की आशा ही न हो सकती थी। वह चुपचाप डेंगी की पूंछ पर बैठा था उसे जब-जब उस जानवर का खयाल आता था, तब-तब उसके दांत कटकटाने लगते थे, और उसकी आंखें पुतली की तरह नीचे ऊपर होने लगती थीं। जीवन-मरण चाहे पहिले ही निश्चित कर दिया गया हो, चाहे नहीं किन्तु, यह निश्चित है कि हम मरणधर्मा हैं, हमारी मौत निश्चित है, वह चाहे आज आये चाहे कल।

झील के पश्चिमी किनारे पर नदी के आने का एक रास्ता था। यह कोई चालीस हाथ चौड़ा था। सूर्य अस्त होने के करीब थे, इसलिये लम्बी नेवारी ने उसकी किरणों का प्रसार रोक दिया था। भूमध्यरेखीय प्रदेशों के सदृश सूर्य के डूबते ही चारों ओर रात्रि का अन्धकार छा गया। थोड़ी ही देर पहिले जहां दिन का अच्छा प्रकाश था, वहां अब खूब तारे चमकने लगे।

ऐसे भयानक और निर्जन स्थान में रात्रि का आना, उनके लिये कोई आनन्द की बात न थी। श्वेत धुन्ध चारों ओर फैल गई। उसी समय थोड़ी थोड़ी हवा चलने लगी, जिससे उस अन्धकार में नेवारी हिलने और मर-मराने लगी।

अब उन्हें सोना कठिन था। भला वह कब सो सकते थे, जब कि उनके हृदय में बराबर उन भीषण जन्तुओं के, जो कि उन्नति, विकास और समय, सबको परास्त कर, हजारों शताब्दियों से वहां बसे हुए हैं, आस-पास में छिपे रहने का खयाल बना था।

वह रात्रि उनके लिये कालरात्रि थी। चारों ओर भय ही भय था। प्रत्येक शब्द, यहां तक कि हवा की सनसनाहट भी उनके दिल को धक् से कर देती थी। तिस पर रात्रि नीरव नहीं थी। घण्टे-घण्टे पर वह दलदल

सजीव सा हो उठता था। पानी में भी विचित्र हलचल हो पड़ती थी। समय समय पर कीचड़ उलटा-पलटा जाता था, और सड़ती हुई वनस्पति की भयानक दुर्गन्धि सारे वायुमंडल में फैल जाती थी। एक बार तो पानी बहुत जोर से हिलने लगा, और डेंगी बड़े जोर से उछलने और इधर-उधर होने लगी, लहरें बार-बार मांगें पर पहुँचने लगीं। प्रातःकाल के समय कहीं पास ही कोई भारी जानवर मालूम होता है चल रहा था।

कभी भी सूर्योदय उस दिन सा आनन्दप्रद न मालूम हुआ होगा; कभी भी दिन का सुप्रकाश उतना सुन्दर और मंगलमय न मालूम हुआ होगा। रात्रि में भी अपनी यात्रा जारी रखना उनके वश का न था; क्योंकि अन्धकार इतना अधिक था कि उसमें नदी द्वारा आगे बढ़ने की अपेक्षा नेवारी के जंगल में भूल जाना ही आसान था, किन्तु जैसे ही पर्याप्त प्रकाश हुआ, वह लोग फिर जोर-जोर से डांड़ खेने लगे। वह जल्दी से जल्दी इस मृत्यु के स्थान से परे निकल जाना चाहते थे। उनकी जी-तोड़ मेहनत का एक फायदा तो नकद मिला—उनको उन भयानक जन्तुओं का हृदयद्रावक खयाल उस समय भूल गया।

अन्त में चलते-चलते वह एक ऐसे स्थान पर पहुँचे, जहां से दूसरा किनारा सौ गज पर मालूम होता था। बीच वाली घास यहां कम थी, इसका एक यह भी कारण था कि वहां कहीं-कहीं कितने ही बड़े-बड़े वृक्ष गिर गये थे, जिन्होंने कि उन्हें पीस डाला था, उनकी दूर तक फैली हुई डालियों ने तो और भी उनका सर्वनाश कर दिया था। वृक्षों से बचते हुए वह लोग नाव लिये किनारे पर पहुँचे। वहां सब लोग नदी के तट पर उतर गये।

नरेन्द्र—'मैं जंगल में होकर जाना पफ़न्द करूँगा किन्तु फिर इफ़ दलदल में पैर न दूंगा।'

वृहस्पति—'और सच कहूँ वही बात मेरी भी है।'

अब उन्होंने अपने आपको एक लम्बे और पतले मैदान में पाया जो उत्तर तरफ एक पहाड़ से वेष्टित था। पहाड़ के ऊपर का महारण्य भली प्रकार दिखाई दे रहा था। कितने ही वृक्ष उस मैदान में भी जमे हुए थे,

जिनके नीचे हरी-हरी घासें उगी हुई थीं, जिससे वह एक बाग सा जान पड़ता था।

उन्होंने इसे अच्छा समझा कि जहां तक हो सके कोशिश करके नदी के तट से दूर हो जाना चाहिये, क्योंकि वही सारे खतरों की जननी है। सारा ही अपराह्न उन्होंने एक बड़े वृक्ष के नीचे, जो कि भड़ौंच के बटवृक्ष की तरह एक विश्रामागार सा था, विश्राम करते हुए बिताया।

दूसरे दिन वह पहाड़ पर आधी दूर तक चढ़ गये, वहां से नीचे का मैदान बहुत दूर तक दिखाई देता था। भूमि के कठिन होने से चलने में सुगमता थी। वायु भी नीचे की अपेक्षा अधिक ठंढी थी। वहां पर उन्हें एक प्रकार का जंगली खजूर भी मिला जो खाने में मीठा और पुष्टिकारक था।

दो सप्ताह वह इसी तरह आगे बढ़ते गये। इस सारे समय भी वह, चैन से न रहे! यद्यपि यहां उन्हें कोई प्राग्-ऐतिहासिक जन्तु न मिला किन्तु एक बार उन्हें एक बड़ा भारी अजगर मिला, एक बार क्रीड़ाप्रिय वनमानुषों के एक झुण्ड ने उन पर हमला किया। वह पहाड़ के ऊपर की ओर से इन लोगों पर पत्थर फेंकने लगे। सौभाग्य से उनका निशाना ठीक न लगा। कई बार वह इतना खिलखिला कर हँसते थे कि सत्यव्रत मारे भय के बौखला सा जाता था। जब तक कोई रोके रोके तब तक नरसिंह ने अपने कन्धे से रायफल उठा दाग दी। इसमें सन्देह नहीं, उसे अपने इस नवीन अस्त्र के प्रयोग की बड़ी लालसा थी, अभी तक उसने खाली कार-तूसों ही को चलाया था। उसका निशाना बायें न गया, और एक अभागा बैबून लुढ़कता हुआ नीचे, उनके पैरों के पास आ पड़ा।

प्रकृति के राज्य में बानर की मृत्यु से बढ़कर और दूसरा करुणामय दृश्य चिन्तन करना भी असम्भव है। जिसने बानर मार कर अपने को हत्यारे से कम समझा, निश्चय उसका हृदय पत्थर का है। इन अत्यन्त बुद्धिशाली जानवरों का कायदा है कि वह अपने हत्यारे को बड़े ही करुणा-पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। जितनी ही मृत्यु की घड़ी नजदीक आती जाती है,

वह मनुष्यों की तरह जोर-जोर से कराहने लगते हैं। बालकों की तरह नहीं, जो जरा-सी चोट पर जोश में आकर रोने लगते हैं, बल्कि एक पूर्ण-वयस्का यथार्थ दुखिया स्त्री के क्रन्दन की भांति। बानर की मृत्यु-वेदना पाषाण के हृदय को भी मोम कर देती है।

नरेन्द्र उसकी तीखी दन्त-पंक्तियों की कुछ भी परवाह न कर आगे बढ़े और यह चाहते थे कि उस व्यथित प्राणी की कुछ सहायता करें; किन्तु उसी समय बानर ने करवट फेरी और साथ ही वह ठंडा हो गया। बृहस्पति ने नरसिंह की ओर फिर कर कहा—

'तुम बड़े मूर्ख हो। इस बेचारे निरापराध बानर ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था?'

हब्शी ने कहा—'मैं उसे खाऊँगा, मैं बड़ा भूखा हूँ, मैंने कितने ही चन्द्र-माओं से मांस खाने को नहीं पाया।'

क्रोधपूर्ण शब्दों में बृहस्पति ने कहा—'तुम इसे कदापि नहीं खा सकते। चाहे तुम भूखे हो, किन्तु बानर के मांस को तुम नहीं छू सकते। तुम खूब जानते हो कि यह तुम्हारी जाति के आचार के विरुद्ध है। और क्या तुम उस बात को नहीं जानते, जो बड़ी झीलों से जेम्बसी तक ब्रह्मवाक्य मानी जाती है। जिसने आत्मरक्षा के अभिप्राय को छोड़कर बानर को मारा है, वह नष्ट मनुष्य है, उसकी कब्र बन्द कर दी जायगी!'

एक बार फिर नरसिंह की आंखें उलट गईं, काली पुतली ऊपर चली गई, और सिर्फ सफेदी दिखाई पड़ने लगी, उसके दांत कटकटाने लगे।

इसके बाद तीन दिन और चलने पर वह एक स्थान पर आये, जिसका नाम पीछे उन्होंने बिजली-दरवाजा रक्खा। यह वही दरवाजा था, जिसके द्वारा वह जादूगर बादशाह के राज्य में घुसे। यहां आकर उपत्यका, उत्तर और दक्षिण दोनों ओर से बन्द हो गई थी। दलदल धीरे-धीरे पतला होते-होते यहां खतम हो गया था। यहां दलदल का मुंह बोतल के मुंह की भांति मालूम होता था। यहां भी नेवारी जमी हुई थी, और उसके बीच से होकर

नदी बह रही थी । नदी के दोनों ओर की नंगी पहाड़ियों का ऊपरी भाग बड़े घने जंगल से आच्छादित था । नदी भी यहां से एक सुरंग में होकर भीतर घुसी थी । उन्होंने एक दूसरी नाव द्वारा इस सुरंग में होकर पार जाना निश्चय किया ।

वृहस्पति—'हमारे सौभाग्य से यह बहुत अच्छा है, जो हम लोगों को ऊपर की ओर जाना है । यदि आगे जल-प्रपात होगा, तो हम लौट आ सकते हैं । यदि हमने देखा कि धार छत से लग गई तो भी लौटना हमार हाथ में है यह सुविधा उस समय न होती, यदि नदी का बहाव भीतर की ओर होता । उस समय यदि धार तेज़ होती तो हमें बेबस उसमें पड़कर अपना प्राण खोना पड़ता ।'

चूंकि वह प्रातःकाल ही पहुँच गये थे, इसलिये झटपट डेंगी बनाने में लग गये । उन्हें इसके लिये कोई विशेष तरद्दुद भी न उठानी पड़ी । पास ही में बहुत से बड़े-बड़े दरख़्त थे, जिनसे एक अच्छी डेंगी क्या, नाव भी बनाना आसान था । यह काम कुछ ज्यादा दिनों का था, क्योंकि निश्चय हुआ था कि अबकी नाव पहिली से बड़ी और अच्छी बनाई जाय, जिसमें वह रसद लादने तथा सवारी करने के लिये अधिक उपयोगी और मजबूत हो ।

उसी रात, जिस दिन कि वह वहां पहुँचे, दस बजे के करीब एक बड़ी आंधी और तूफ़ान आया । उष्णकटिबन्धी देशों को छोड़ पृथ्वी पर ऐसे तूफ़ान और कहीं नहीं आते । उससे सारे जंगल में भारी तहलका मच गया । पहिले एक भारी हवा आई जिसके सम्मुख पहाड़ पर के बड़े-बड़े वृक्ष बेंत की तरह झुक जाते थे । बीच-बीच में कोई-कोई विशाल वृक्ष उखाड़ कर चूर-चूर करके धरती पर सुला दिये गये । कुछ ही मिनट पहिले जहां आकाश में तारों का विस्तृत क्षेत्र लहरा रहा था, वहां चन्द ही मिनट बाद सारे तारे पोंछ दिये गये, और आकाश काजल की भांति काला हो उठा । हवा प्रतिक्षण बढ़ने लगी । पेड़ों की पत्तियों और नेवारियों के बीच से आती हुई हवा की आवाज के सामने कान बहरे हो रहे थे । एकाएक आकाश

में आग-सी लग गई, विजली की तोप तड़ातड़ चलने लगी। जिस समय वह पत्थरों पर पड़ती थी, तो उस समय उनसे चिंगारियां निकलने लगती थीं। मालूम होता है, उन पत्थरों में लोहे का भाग अधिक था। उस वक्त उनकी वही दशा थी, जो कि दहकते लोहे को पीटते समय अहिरन की होती है। उस विजली की तड़तड़ाहट में कान बिलकुल सुन्न हो गये थे, मालूम होता था, उस गर्जना ने कान के पर्दे को फाड़ दिया।

कोई आध घंटे तक बिजली की चमचमाहट और तड़तड़ाहट बराबर जारी रही। प्रकृति की इन युग्म शक्तियों ने मानों बाजी लगा कर जल्दी जल्दी अपना जौहर दिखाना शुरू किया था। चमके एक सेकेण्ड भी न बीता था, कि वही कर्ण-भंजक घोष सुनाई देने लगता था, इसी प्रकार अभी गर्जन बन्द भी नहीं हुई तब तक चमक उठ खड़ी हुई।

इसके बाद आकाश फट गया। हां, उसे बरसना नहीं कहा जा सकता। काले बादलों से पानी धार बांध कर गिर रहा था। एकदम वह शिर से पैर तक भींग गये। पहाड़ के ऊपर से पानी की धार नीचे की ओर गिरने लगी। चारों ओर लोहे की चट्टानों पर से यह गिरती हुई धाराएं सुनाई देने लगीं।

वर्षा जैसे आरम्भ हुई थी, वैसे ही एकबारगी बन्द भी हो गई। किन्तु घोर अन्धकार अब भी वर्त्तमान था। मालूम होता था, अभी दूसरी बार के लिये भी आकाश में मसाला तैयार है। अन्धकार तो इतना था कि पास में बैठे होने पर भी वह एक दूसरे को न देख सकते थे। वृहस्पति ने जोर से पुकारा—'यहीं हो न नरेन्द्र ?'

नरेन्द्र—'हां ! हूँ, वह नहीं गया।'

इसी समय कहीं बिलकुल पास ही से एक भयंकर आवाज ने उस नीरवता को भंग किया। मालूम होता था, बिलकुल नजदीक ही बारह इंची हवाइजर तोप छोड़ी जा रही है।

सत्य—'यह क्या है ?'

इस प्रश्न का उत्तर बृहस्पति ही दे सकते थे, किन्तु वह भी अभी अन्धकार ही में थे। अभी-अभी वह सोच ही रहे थे कि फिर दुबारा वही आवाज आई। थोड़ी-थोड़ी देर के बाद अब वह नियमपूर्वक सुनाई देने लगी। उन्होंने देखा कि कैसे उसकी प्रतिध्वनि पहाड़ के नीचे—सारी उपत्यका में फैल रही है।

भीम और भीषण शरट

करीब पन्द्रह मिनट तक यह वज्रघोष लगातार होता रहा। वह उसका कुछ भी तात्पर्य न लगा सके। मालूम होता था, नजदीक ही कहीं पंक्तिशः अनेक बड़ी-बड़ी तोपें रखी हुई हैं, और उन्हें बराबर छोड़ा जा रहा है।

उस समय निद्रा आना असम्भव था। आवाज कान फाड़ रही थी। बारह बजे के करीब तारे फिर निकल आये। तूफान दक्षिण की ओर चला गया। जैसे ही तारों के प्रकाश ने उन्हें कुछ देखने लायक बनाया, वैसे ही आवाज के कारण का पता लगाने के लिये वह उठ खड़े हुए।

शब्द के आने की दिशा को खयाल करते हुए वृहस्पति के पीछे-पीछे सब लोग पर्वत के नीचे सुरंग की ओर चले। जैसे-जैसे वह नदी के नजदीक जा रहे थे, वैसे-वैसे आवाज भी तेज होती जा रही थी। अन्त में आवाज इतनी तेज मालूम होने लगी, कि बात सुनने को कौन कहे कान में अंगुली डाले बिना वहां खड़ा होना भी मुश्किल था।

तुरन्त ही वृहस्पति ने हाथ के इशारे से उन्हें लौटने के लिये कहा। वह उनके पीछे-पीछे पहाड़ के ऊपर अपने ठहरने के स्थान पर लौट आये। वृहस्पति ने कहा—'मुझे रहस्य का पता लग गया, मैं बड़ा मूर्ख था जो उसी समय मैंने इसे नहीं समझ लिया।

नरेन्द्र मन में सन्देह करने लगे कि कुछ शरट की भांति मैंने जादूगर बादशाह के विषय में भी अवहेलना प्रदर्शित करके गलती तो नहीं की। ज्ञात होता है, उसके राज्य की सीमा के रक्षार्थ यह कोई आयोजन है।

वृहस्पति—'बात तो सीधी सादी है। इस गुफा की छत मुंह पर की अपेक्षा भीतर अधिक ऊँची है। इस घोर वर्षा के बाद नदी बहुत जल्द बढ़ गई है। मैंने स्वयं देखा कि पानी गुफा के मुंह की छत तक पहुँच गया है। उसी का परिणाम है, यह आवाज गुफा के अन्दर कुछ हवा दब गई है। किन्तु नदी के बहते वक्त हिलोरे उठते रहते हैं, जिससे बीच-बीच में

अवकाश मिला जाता है, और इसी अवकाश द्वारा भिची हुई हवा, थोड़ी-थोड़ी देर पर बाहर निकलती है, उसी का यह शोर है। तुमने सुना होगा कि हवा के भिच जाने और आगे-पीछे रास्ता न मिलने से कितनी वार वह छत फोड़ कर निकल जाती है। मैंने वर्षा के दिनों में इसी तरह की, यद्यपि इतने जोर की नहीं, आवाज़ ईंटों के पुलों से आती सुनी है। वहां भी उसका कारण यही होता है। हां, अब एक बात निश्चित है; हमें अब आगे बढ़ने के लिये कई दिन प्रतीक्षा करनी होगी। क्योंकि जब तक गुफा के भीतर का पानी दब नहीं जाता, तब तक आगे बढ़ना असम्भव है।'

सत्य—'क्या सुरंग के भीतर जाना आवश्यक है ? किन्तु उससे होकर अपने निश्चित स्थान पर पहुँचना तो असम्भव है।'

वृहस्पति—'नहीं, असम्भव नहीं है लेकिन पहाड़ के ऊपर से चलने में अधिक खतरा है। पहिले तो हमें इतने ऊँचे पहाड़ को लांघना होगा। इसमें सन्देह नहीं कि यह हम कर सकते हैं, किन्तु शिखर पर क्या है ? जंगल—दुस्तर गहन जंगल। मैं नदी के साथ-साथ आगे बढ़ना चाहता हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि इसका उद्गम अंगोला की सीमा के पर्वतों में है। अब तुम जानते ही हो, नदी के पीछे-पीछे चलना तभी हो सकता है, जब कि हम इसकी धार को न छोड़ें। यदि एक बार हमने उसे छोड़ दिया, तो फिर वह हमें मिल सकेगी, इसमें बहुत सन्देह है।'

नरेन्द्र—'फ़ायद, आप ठीक कहते हैं ? मैं भी इफ़के दूफ़रे विचार को पफ़न्द नहीं करता।'

वृहस्पति—'मैं समझता हूँ, हमें कोई डरने की आवश्यकता नहीं, स्मरण रक्खो, कि हमें धार के ऊपर की ओर चलना है, हमारा पीछे लौटना ऊपर जाने की अपेक्षा हमेशा आसान रहेगा। अस्तु, जो कुछ भी हो, अभी नदी के उतरने में देर लगेगी।'

सचमुच, उन्हें इन्तजार करते-करते दो सप्ताह हो गये। वृष्टि के बाद घाटी में धूप तेज़ होने लगी। उन्हें बराबर पसीने में नहाये रहना होता था। तो भी वहां खाने के लिये खजूर और जामुन बहुत थी। पार्वतीय

झरने का पानी भी बहुत स्वच्छ तथा स्वादिष्ट था। लोह-मिश्रित होने से वह टानिक का असर रखता था।

वह इस इन्तजारी से घबड़ाये नहीं। डेंगी की तैयारी ने उन्हें दिल बहलाव का अच्छा सामान मुहय्या कर दिया था। जब तैयार हो गई, तो उसे देखकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। उसकी लम्बाई दस हाथ थी, और बैठने के लिये, उसमें लकड़ी के तख्ते थे। नाव में कहीं से पानी आने की गुंजाइश न थी। उन्होंने पानी पर चला कर देखा कि वह बहुत ठीक और दृढ़ है। उन्होंने बन्दूक, गोली, बारूद रखने के बाद जितनी खजूर और जामुन उस पर रखी जा सकती थी उतनी रखी। एक दिन सवेरे अपनी जान को हथेली पर रखकर वह लोग गुफा में घुस पड़े।

नदी इतनी उतर गई थी कि गुफा के दरवाजे पर उनके शिर से छत दो हाथ ऊँची थी। आगे थोड़ी दूर और बढ़ते ही, वह लोग अंधेरे में पहुँच गये। वृहस्पति ने बिजली की मशाल को अभी खर्च करना अच्छा न समझा। इसलिये सूखे नरकट को उन्होंने मशाल की भांति जलाना आरम्भ किया। नरकट इतना हलका था कि उन्होंने नाव पर उसका एक बड़ा बोझ रख लिया था। दियासलाई उन लोगों के पास न थी, इसलिये उन्होंने एक पथली में कोयले की आग बना कर मांगे पर रख ली थी।

यह बड़ी अद्‌भुत यात्रा थी, जो कि अफ्रीका के महारण्य के एक भाग के नीचे-नीचे बहने वाली एक नदी में हो रही थी। धार कुछ तेज थी, इसलिये दोनों डांड़ों को लगातार चलते रहने की आवश्यकता थी। सत्यव्रत हाथ में मशाल लिये मांगे पर बैठा हुआ था। वृहस्पति और नरसिंह नाव के बीच में बैठे जोर-जोर से डांड़ खे रहे थे, और नरेन्द्र एक तीसरे डांड़ को चलाते हुए पूंछ पर बैठे थे। इस प्रकार वह कई घंटे चलते गये, अन्त में थक जाने पर उन्हें आराम करने की आवश्यकता जान पड़ी। वहां चट्टान में एक पतला दरार मिला, जिसमें उन्होंने एक लकड़ी डाल कर उसके सहारे नाव को बांध दिया; फिर बैठ कर खूब जामुन, खजूर और अरारोट का भोजन हुआ।

डांड़ पर की मेहनत ने उन्हें बहुत थका दिया था। वह पाताल की नीरवता हद की थी। वह शान्ति श्मशान की शान्ति थी। अन्तर्वाहिनी नदी भी दबे पांव ही चल रही थी। गुफा के किनारों पर भी पानी नहीं छलकता था। हजारों वर्ष के प्रवाह ने उन पत्थरों को इतना चिकना बना दिया था, कि वहां पानी सीधे ढरक जाता था। थोड़ी देर के विश्राम के बाद फिर यात्रा आरम्भ हुई। समय के बारे में वह नहीं कह सकते थे, क्योंकि उनमें से किसी के पास घड़ी न थी। उनकी सभी घड़ियां जंगल के सफर में टूट-फूट गई थीं।

कोई तीन घंटे की यात्रा के बाद, बड़ी प्रसन्नता के साथ, उन्होंने एक छिद्र देखा, जिससे रोशनी आ रही थी। वस्तुतः यह प्रकाश थोड़ी ही दूर पर था, और पहिले उन्होंने मशाल की तेज रोशनी के कारण उसे न देख पाया था। एकाएक वह लोग गुफा से बाहर हो गये। अब चन्द्रमा के प्रकाश में, उन्होंने अपने आपको एक विस्तृत झील के एक भाग में पाया। झील का दृश्य अद्भुत स्वप्न-सा जान पड़ता था।

यहां चारों ओर बड़े-बड़े चट्टान दर्शक की भांति पांती से खड़े थे। झील से निकल कर इन चट्टानों की जड़ों पर ऐसी पत्तियां छाई हुई थीं, जैसी वृहस्पति ने भी कभी न देखी थीं। स्वच्छ चांदनी चारों ओर फैली हुई थी। उसमें वह चीजों को स्पष्ट देख सकते थे। चट्टान नीचे-ऊपर तक हरियाली से ढँके हुए थे। चारों ओर पन-बिच्छू और अन्य जन्तुओं से वह भरे हुए मालूम होते थे। पानी पर बड़े-बड़े पौधे उगे हुए थे। उनकी तैरती हुई पत्तियां इतनी बड़ी-बड़ी थीं कि उन पर एक अच्छा डील-डौल का आदमी आसानी से चल-फिर सकता था। पानी के तल पर कुछ भाप सी फैली हुई थी।

वायुमंडल भारी तथा वैसी ही भयानक दुर्गन्ध से परिपूर्ण था, जैसी कि नीचे की घाटी में मिली थी—फर्क इतना ही था कि यहां वह उससे बीस गुना तेज थी। जब वह नाव लेकर करीब सौ गज आगे बढ़ गये; तो उन्हें

पहिले-पहिल यह पता लगा, कि वह एक ऐसे स्थान पर आ गये हैं, जो बड़े-बड़े खतरों से भरा हुआ है।

पहिले देखते वक्त उन्होंने समझा था कि झील जैसे बाहर से बड़े-बड़े चट्टानों से घिरी हुई है, वैसे ही उसके भीतर भी जगह-जगह चट्टान हैं, यद्यपि वह बाहर वालों की अपेक्षा कुछ छोटे हैं, और उन पर किसी प्रकार की वनस्पति नहीं उगी है। एकाएक सब लोग हिलने लगे। यह उषाकाल था। शीघ्र ही चन्द्रमा का प्रकाश दिन के उजाले के सम्मुख मन्द हो चला। उन्हें इसका कारण मालूम होने में अधिक देर न लगी, किन्तु उन्होंने एक दूसरे से कुछ भी न कहा। वस्तुतः वह इतने भयभीत थे कि बोल न सकते थे। निस्सन्देह अब वह उन महाकाय प्राग्-ऐतिहासिक शरटों की वास-भूमि में आ गये थे।

उनके चारों ओर अनेक प्रकार के दीनो-शरट जो उस शरट से मिलते-जुलते थे, जिसे उन्होंने उस दिन नदी में देखा था। यद्यपि वह सभी एक ही वर्ग के थे, किन्तु उनकी गर्दनों की चौड़ाई-लम्बाई में कुछ फर्क अवश्य था, जो यह बतला रहा था, कि वह एक ही वर्ग के हैं, किन्तु उनकी जाति भिन्न भिन्न है। किसी-किसी की गरदन दूसरों की अपेक्षा लम्बी थी, और किसी-किसी की पूंछ सांप की पूंछ की भांति कोड़े सी थी। उनमें से कोई भी चालीस हाथ से कम लम्बा न था, और कोई-कोई तो साठ हाथ का था!

वृहस्पति ने जल्दी से उनकी ओर देखा। उन्होंने समझ लिया कि अब लौट कर सुरंग में जाना दूर की बात है। उन्होंने सूर्योदय की दिशा की ओर देखा, फिर झट डांड़ लेकर खेते हुए एक चट्टान की आड़ में चले गये, जहां जगह कुछ सुरक्षित सी मालूम होती थी। यहां उनके चारों ओर घूएँ सी कई प्रकार की घास फैली हुई थी।

इस समय उन यात्रियों की क्या दशा थी, यह लिखने की अपेक्षा विचारने में ही सुगम है। भय के मारे वह सारे ही—यहां तक कि वृहस्पति भी अवाक् थे। सुरंग से डेंगी के बाहर होते ही, उस अद्भुत झील के भीषण जन्तुओं में गड़बड़ मच गई। उनमें से प्रायः सारे ही शिर ऊँचा करके देख

रहे थे । उस समय उनका चौदह से बीस हाथ तक का पानी के ऊपर उठा हुआ शिर और भी भयंकर मालूम हो रहा था । दोतल्ले घर के बराबर ऊँचे बड़े-बड़े खुले मुंह वाले यह कोड़ियों शिर सचमुच दिल दहला देने वाले थे ।

तथापि उन सरीसृपों ने चोट पहुँचाने का कुछ भी प्रयत्न न किया । वह पानी में इधर से उधर किंकर्त्तव्य विमूढ़ से धीरे-धीरे डोल रहे थे । वह अपने शिरों को कभी इधर घुमाते थे, और कभी उधर, उनकी चेष्टा से मालूम हो रहा था कि उन पर कोई भारी आतंक छाया हुआ है ।

झील के चंचल तल पर सूर्य की प्रथम किरणें पड़नी शुरू हुईं, और नौकारोही अब अपनी चारों ओर दूर तक अच्छी तरह देख सकते थे । झील आस-पास के फैले हुए जंगलों के तल से कई सौ हाथ नीचे थी । जंगल के छोर पर तीन तरफ काली चमकती हुई ऊँची दीवार दिखाई दे रही थी । वह झील के तट पर के घने जंगलों को, झील से उठते हुए वाष्प समुदाय की आड़ से देख रहे थे । काली दीवार उत्तर, दक्षिण और पूर्व दिशा में खड़ी थी । यद्यपि कुहरा के कारण निश्चित नहीं कहा जा सकता था किन्तु, जान पड़ता था, पश्चिम तरफ खुला हुआ है; और इसीलिये उधर खुली भूमि का होना सम्भव है ।

उस परिस्थिति में खड़ा होकर प्रकृति निरीक्षण करना असम्भव था । मारे खौफ के उनकी नब्ज ढीली पड़ रही थी । वह अच्छी तरह जानते थे कि उन भयंकर जन्तुओं में से कोई भी डेंगी और उसके आरोहियों को, जरा सा शिर हिला टुकड़े-टुकड़े और चूर-चूर कर सकता है । वह यह भी देख रहे थे कि कभी-कभी किसी-किसी की दृष्टि नाव वाली दिशा पर भी आ पहुँचती है । वह लोग उस आड़ में दस मिनट ही ठहरे होंगे, किन्तु उनके लिये वह दस युग के बराबर था । अब भी वह भीषण शरीर प्राणधारी उसी प्रकार की भारी घबराहट में थे । पानी के ऊपर शिर को उठाये हुए थे, झील की तलभूमि पर अब भी वह इधर-उधर डोल रहे थे । कभी-कभी

तो वह नाव के इतना करीब आ जाते थे कि जान पड़ता था, उन्होंने उसे देख लिया और उस वक्त यात्रियों के प्राण सूखे जाते थे।

इसी समय उस सारी हलचल का कारण मालूम हो गया, और वह उनके लिये इतना भयानक था कि 'न भूतो न भविष्यति', झील के पश्चिम की ओर से पानी के उछलने की आवाज आ रही थी। वह धीरे-धीरे ऊँची होती जाती थी। इसी के साथ एक और आवाज़ भी आ रही थी, जो कि आधी सिंह की गरज और आधी सांप की ठनक सी थी। तब, दिन के चमकते हुए प्रकाश में उन्होंने उस महाभयंकर जन्तु को देखा, जो कि मनुष्य के पृथ्वी पर आने से पहिले के सारे ही प्राणियों में सबसे भयंकर और क्रूर था।

यद्यपि भीषण-शरट (Jyranosaurus) उस महाकाय शरट से आधा भी न था, जिसका कि उसने शिकार किया था। किन्तु यह प्रसिद्ध है कि बाघ के सम्मुख जंगली हाथी मारे डर के दुम दबाकर भाग जाता है, और भीषण शरट प्राग्-ऐतिहासिक जगत का बाघ था। शिर को छोड़कर उसका सारा ही शरीर एक बीस हाथ लम्बे शरट का सा था। उसकी छोटी किन्तु मोटी दुम बहुत मजबूत थी। अगले दोनों पैर भी अपेक्षाकृत छोटे किन्तु बड़े भारी और तेज पंजों से युक्त थे। यह दोनों ही बातें उसकी कांगरू से मिलती थीं। उसका मुंह जिसमें बड़े-बड़े विष-दन्त सदृश डाढ़ें पांती से लगी हुई थीं, छोटी नाकवाले मगर का सा था।

भीषण शरट, दीनो शरट को अपना न्यायानुमोदित भक्ष्य समझता था। यद्यपि वह उससे दुगुने लम्बे-चौड़े थे, किन्तु उसके सम्मुख वह बिलकुल बेबस से जान पड़ते थे। त्रस्त और भयभीत हाथियों के झुंड में वह सिंह था। एक के बाद एक दीनोशरट नीचे गिरता, उनकी छटपटाहट से झील में मानों तूफ़ान आया हुआ था। वृहस्पति और उनके साथियों के लिये अच्छा हुआ जो उन्होंने अपनी डेंगी पहिले से बड़ी और दृढ़ बनाई थी, अन्यथा निश्चित ही वह उलट गई होती और उसके आरोही डूब मरे होते। वह लोग प्राचीन जगत् के इस भीषण कांड को आंख फाड़-फाड़ कर बड़े आतंकित हृदय से देख रहे थे।

दीनो शरट ही के समान जान पड़ता था, यह भयंकर शिकारी जानवर भी तैरना नहीं जानता था। तो भी पानी कम था—अर्थात् आठ हाथ से ज्यादा न था और उसमें वह सब चल-फिर सकते थे। भीषण शरट झपट कर एक-एक की गरदन पकड़ दे पटकता था। यद्यपि ब्रण्टोशरट की गरदन का सबसे पतला भाग भी एक पहलवान की छाती के बराबर मोटा था तथापि वह मांसाहारी भयानक सरीसृप अपने प्रकांड दांतों से उन महाकाय शरटों की गरदन को इस प्रकार से काट फेंकता था जैसे एक तेज चाकू से गाजर।

दीनोशरटों के मरण समय की छटपटाहट और भी अकथनीय थी। वह दृढ़जीवी थे, इसलिये कितनी ही देर तक वह उस मर्मान्ति पीड़ा से विक्षिप्त होते रहे। उनके रक्त से सारी झील ओर से छोर तक लाल हो गई। जब यह काण्ड होकर एक बार फिर चारों ओर नीरवता छा गई, तो उन्होंने भीषण शरट को भक्षण करते देखा। जैसे कई-कई हजार मन वाले जानवरों को सामने रखे, एक-एक बार आध-आध मन का कवल काट कर वह निगल रहा था, यह सचमुच दिल हिला देनेवाला दृश्य था। जिस वक्त वह उधर खाने में लगा हुआ था, उसी समय एक प्रकांड मगर गुफा-द्वार से थोड़ा हट कर किनारे की ओर से धीरे-धीरे आगे बढ़ता दिखाई पड़ा। जान पड़ता था, वह भीषण शरट की ओर बढ़ रहा है।

इस सारे ही समय सब लोग चुप थे, किसी ने एक बार भी अपनी जबान नहीं खोली। अब बृहस्पति ने सत्यव्रत से धीरे से कहा—'देख रहे हो, उस मगर को ?'

लड़के ने शिर हिलाकर 'हां' प्रकट किया, क्योंकि जीभ खोलने के लिये उसकी हिम्मत न पड़ती थी।

बृहस्पति—'हां, तो यह मगर नहीं है।'

सत्य जल्दी में बोल उठा—'मगर नहीं है। तो क्या है ?'

बृहस्पति—'मैं जानता हूँ, यह मगर नहीं है। यह मगर का चमड़ा है,

जिसे एक छोटी डेंगी पर बैठ हुए एक आदमी अपने ऊपर लिया हुआ है, और उसके हाथ में धनुष और वाण है।

सत्यव्रत को पहिले इस पर विश्वास न हुआ, किन्तु ध्यानपूर्वक देखने पर उसे वृहस्पति की बात सच्ची जान पड़ी। एक मनुष्य—कोई आधुनिक भीम—उस भयंकर जन्तु के पीछे पड़ा है। कोई भी मगर पूंछ को सीधा किये नहीं तैरता, दूसरे सत्य ने पानी के भीतर छिपे हुए डांड को भी कई बार चलते देखा।

एकाएक मगर रुक गया और उसका शरीर पानी से कई इंच ऊपर उठा। अब वह साफ़ देख रहे थे कि उसके नीचे एक आदमी वाण चलानेके लिये अपने धनुष की ज्या को चढ़ा रहा है। उसी समय, जान पड़ा भीषण शरट ने उस आदमी को देख लिया, क्योंकि उसने झट अपने मुंह को उधर फेरा, फिर वही ठनकती हुई गरज आने लगी। फिर वह सीधा खड़ा हो गया और चाहता ही था कि झपट्टा मारे कि इतने ही में वृहस्पति ने अपने कन्धे पर से रायफल सीधी की और घोड़ा दबा दिया।

एक सेकेण्ड के बाद यह मालूम हो सका कि गोली मर्मस्थान पर लगी है। पहिला फ़ायर करने के साथ ही वृहस्पति ने झट दूसरा कारतूस भी भर लिया। दूसरे लोग भी तुरन्त अपनी अपनी बन्दूकें लिये हुए बिलकुल तैयार हो गये। यहां तक नरसिंह भी, जिसे सबने लकवा मारे समझा था, भरी रायफल लिये बिलकुल अपने साथियों की भांति ही मुकाबिले के लिये तैयार था।

तथापि, बहुत देर न होने पाई, जल्द ही पता लग गया कि गोली ठीक स्थान पर लगी है। सचमुच भीषण शरट का प्रकांड मस्तिष्क ऐसा लक्ष्य नहीं है जिसे बड़े-बड़े शिकारों का शिकारी चूक सके। कौन शिकारी ? जो कि अफ्रीका के हाथी के कन्धे के पीछे ठीक उस जगह निशाना लगा सकता है जहां उसका कलेजा है, या गैंड़ा को उसकी आंख में मार सकता है। उस जानवर का शिर कितना बड़ा था यह बतलाया जा चुका है। उसकी नाक के नोक से शिर के पीछे तक की लम्बाई चार हाथ थी। यद्यपि उसके चमड़ों पर सिकुड़न न थी तथापि चमड़ा बहुत ही मोटा था; किन्तु वृहस्पति की चिकनी विस्फोटक गोली अपना काम कर चुकी थी।

परिणाम भयंकर हुआ। एक क्षण में वह महाप्राणी निश्चल खड़ा हो गया, फिर तुरन्त आगे झुका। प्रायः आधा शरीर उसका जल के ऊपर था। वह अच्छी तरह उसके अगले पैरों को देख सकते थे, जो कि मनुष्य की टांग के बराबर हवा में नाच रहे थे। और फिर बड़े क्रोध से उस अभागे मनुष्य के ऊपर जिसने मगर की खाल अपने ऊपर ली थी जा पड़ा। यह चूकने का अवसर न था।

हो सकता है, उस समय जानवर वृहस्पति की गोली से अन्धा हो गया रहा हो। यह भी हो सकता है कि उसके दिल में उस समय कोई विशेष लक्ष्य न था, संयोग से ही वह नाव पर जा पड़ा। लेकिन यह निश्चित है कि

एक ही चोट में नाव टुकड़े-टुकड़े उड़ गई और एक ही मिनट के बाद जानवर फिर खड़ा हो गया, उस समय उसके अगले पंजों में वह मगर का मोटा चमड़ा गुथा हुआ था ।

मालूम हो रहा था कि वह जन्तु बड़ी व्यथा में है, क्योंकि यद्यपि उसने चीत्कार न किया, किन्तु उसका मुख बड़ी भयंकरता से खुला हुआ था—सचमुच उससे उसमें एक चार फुट ऊँचा लड़का खड़ा टहल सकता था ।

अब भी भीषण शरट को हिलते-डोलते देख, तीनों भारतीयों और बकुंगा ने एक साथ गोली छोड़ी । बन्दूक की आवाज पहाड़ी पर जाकर प्रतिध्वनित हुई, अभी नली के मुंह पर का पतला धुआं पूरी तौर से निकल न पाया था कि एकाएक प्रकांड जन्तु डूबते जहाज की भांति, झील में डूब गया । तुरन्त ही बड़े-बड़े बुलबुले पानी में एक के बाद एक निकलने लगे ।

अभी वह लोग अच्छी तरह सभी बातें न देख सके थे कि एकाएक पानी के ऊपर एक आदमी की सूरत उतरा आई, ठीक उसी जगह जहां पर जानवर जलमग्न हुआ था । जैसे ही आदमी ने इनको देखा, वैसे ही वह उधर तैरने लगा । ज़रा देर में लोगों ने उसे नाव पर खींचा, जहां कितनी देर तक वह त्रस्त, थका और गन्दा पानी मुंह से थूकता लेटा रहा ।

उस आदमी की प्राण-रक्षा के बाद उनका ध्यान फिर उसकी ओर से हट कर दूसरी ओर गया, किन्तु यह उनके बड़े सौभाग्य की बात थी कि अब झील की उस दिशा में कोई वैसा भीमकाय जन्तु नहीं दिखाई पड़ता था । अब अपने आपको सुरक्षित देख उनके जी में जी आया । भीषण शरट ने पांच या छः दीनों शरटों को मार डाला था, और बाकी डर के मारे पश्चिम तरफ जान बचा कर भाग गये थे । यही बात थी, जिसने वृहस्पति के हृदय में बड़ी उत्सुकता पैदा कर दी । भीषण शरट उसी दिशा से आया था और वैसे ही यह आदमी भी, जिसको उन्होंने मृत्यु के मुख से बचाया था । उनके आस-पास झील बहुत चौड़ी नहीं थी । पश्चिम तरफ भाप से ढँका हुआ एक बहुत भारी दलदल दिखाई पड़ता था । उन लोगों को इसका अनुमान करते देर न हुई कि यही उन प्रकांड जन्तुओं का घर है, जो कि करोड़ों वर्ष

पहिले इस पृथ्वी पर निवास करते थे। उन्हें यह भी साफ़ मालूम होने लगा, कि चाहे वह आदमी जिसे उन्होंने बचाया—कहीं का और किसी नाम का भी न क्यों हो, एक बात निश्चित है, कि इस पूर्वी किनारे तक पहुंचने के लिये अवश्य उसे उस दलदल को पार करना पड़ा होगा; क्योंकि वह एक क्षण के लिये भी इसे न मान सकते थे कि वह सुरंग से आया है, क्योंकि उस पार की घाटी जनशून्य है।

वृहस्पति ने आदमी की ओर निराशापूर्ण हृदय से देखा। उसकी जाति और देश का पता लगाने के लिये उन्होंने, पास वाले देशों की भाषा में बातचीत आरम्भ की, किन्तु वहां समझे जाने का कोई भी चिह्न नहीं था। एक बार उसके चेहरे पर अच्छी प्रकार देखने ही से, यह जाना जा सकता था कि उसमें बहुत सी विशेषताएं हैं। अपने इतने दिन के अनुभव से वृहस्पति ने जाना कि अफ्रीका के किसी जाति के आदमी से यह बिलकुल विलक्षण है।

प्रथम, उस आदमी का चर्म वैसा ही काला था, जैसा कि दक्षिणी अफ्रीका के बन्तू लोगों का, जो कि केपकालोनी तक पाये जाते हैं। जंगलों की रहने वाली सभी जातियों का रंग एक दूसरे से भिन्न देखने में आता है। तो भी बाल इस आदमी के सर्वथा हब्शी जातियों से विरुद्ध थे—यह घूंघरवाले ऊन से न होकर सीधे लम्बे-लम्बे थे; जैसे कि नील की उपत्यका में रहने वाले लोगों के होते हैं, और जो बहुधा अपने बालों को जमावट करके रखते हैं। वह एक चमड़े की सी लुंगी पहिने हुए था। इसे उसने कमर में एक पीतल के कमरबन्द से बांधा था। यह कमरबन्द केवल कार्योपयोगी न था, बल्कि उससे कला की निपुणता भी प्रकट हो रही थी। उस पर दो लड़ते हुए सर्प दिखलाये गये थे। उन्होंने देखा कि यही निशान उस लुंगी पर भी है।

इस लुंगी के अतिरिक्त उस आदमी के पास दूसरा कपड़ा न था। उसकी गरदन में एक पीतल की माला थी जिसमें चौकोर पीतल के टुकड़े गुथे हुए थे। उस आदमी को कोई भी शारीरिक चोट नहीं लगी हुई जान पड़ती थी। जहां तक उन्होंने देखा, कहीं जरा सा छिल भी न गया था।

निस्सन्देह मगर के मोटे चमड़े ने भीषणशरट के सिंह-सदृश पंजों से उसे बचा दिया; और उसने उसी समय पानी में डुबकी लगा कर और अच्छा किया। इसके विषय में कुछ कहना मुश्किल है कि यदि तीनों भारतीय उस समय वहां न होते, तो उसकी क्या दशा होती। शायद बड़ी मेहनत करने पर वह तैर कर तालाब के अन्दरवाली एक झील तक पहुँच सकता, किन्तु वहां भी उसे चुपचाप बैठा रहना होता, क्योंकि नाव का एक खंड भी हाथ भर के पतले टुकड़े से बड़ा न था।

यह आदमी मनुष्य जाति का एक बहुत अच्छा नमूना था। वह चार हाथ से ऊँचा लम्बा था। उसकी भुजाएं बहुत मोटी दृढ़ तथा अति पुष्ट नसों से भरी हुई थीं। कन्धा बहुत ऊँचा तथा मांसल, वक्षस्थल बहुत चौड़ा तथा ऊँचा था। थोड़ी देर तक वह आंख बन्द किये डेंगी पर लेटा रहा। उसकी छाती बराबर ऊँची उठती और नीचे जाती दीख पड़ती रही। तब एकाएक नींद से उठे हुए की भांति, और अब भी नींद के नशे में ही उसने अपनी आंखें खोलीं। उसने अपने सम्मुख उस लम्बी गोरी श्वेत दाढ़ी वाली मूर्ति को देखा, जिसने बाघम्बर पहिना था।

एक दम वह आदमी सीधे होकर बैठ गया, और जोर-जोर तथा घबराहट लिये हुये एक ऐसी भाषा में बोलने लगा, जिसका एक शब्द भी वृहस्पति को न मालूम होता था। उस पर, मालूम होता था, जैसे बड़ा भारी आतंक छाया हुआ है। जान पड़ता था, उसने कभी भी कृष्ण वर्ण को छोड़कर दूसरे वर्ण के आदमी को देखा ही नहीं है। जब उसने कुमार नरेन्द्र के गुलाबी चेहरे पर दृष्टि डाली, तो उसका आश्चर्य और भी बढ़ गया।

एक आदमी, जिसने बीस-बीस वर्ष अफ्रीका के जंगलों में बिताया हो, उसके लिये कुछ भी कठिनाई नहीं रह जाती, यदि संकेत द्वारा बात करना सम्भव हो। अफ्रीका के जंगली लोगों में भी भाषण संकेत एक ही से होते हैं। कितनी ही बार जब एक जंगली अपने ग्राम से बहुत दूर तक एक अपरिचित किन्तु मित्र भाव रखने वाले जंगलियों से मिलता है, तो

वह आपस में संकेतों द्वारा वैसे ही बातें कर सकते हैं, जैसे शब्द से। वृहस्पति के जीवन में संकेतों द्वारा बातचीत करना यह पहिली ही बार न था। कितनी ही बार इस प्रकार की भाषा-सम्बन्धी कठिनाई हटाते उन्हें काम के लम्बे लम्बे भाषण संकेत द्वारा करने का मौका मिला है।

वृहस्पति ने पता लगा लिया कि इस आदमी का नाम मरुवानी है। वह उस जाति का आदमी है, जिसे तुंगाला कहा जाता है, और जिस पर एक भारी सरदार शासन करता है, जिसका नाम पाली है। निस्सन्देह वह वही जादूगर बादशाह है।

जब वह आश्चर्यमुक्त हो प्रकृतिस्थ हुआ, और उसे विश्वास हो गया कि लोग मेरे लिये शत्रु नहीं हैं; तो मरुवानी उन लोगों के प्रति कृतज्ञता से भर गया। उन्होंने उसके प्राण बचाये। उसने वृहस्पति का चरण छूकर कृतज्ञता प्रकाशित की। और जब उसने देखा कि वृहस्पति ने उसके अभिप्राय को समझ लिया, झट ही उसने एक हाथ की हथेली बाहर की ओर माथे पर लगाकर प्रणाम किया। फिर उसने पूछा कि आप लोग कैसे इस झील में पहुँचे। उसने समझाया कि वह सुरंग हमारी जाति वालों को मालूम ही नहीं है, यहां तक कि सर्वज्ञ पाली भी उसे नहीं जानता। तब, उन्हें अपना रक्षक और मित्र जानते हुए, उसने राय दी—बल्कि बड़े जोर से प्रार्थना की कि जहां तक हो सके, जिस रास्ते से वह आये हैं, उसी रास्ते से भाग जायं और तुरन्त इस देश को छोड़ दें।

वृहस्पति ने शिर हिला कर बताया कि हम लोग पीछे नहीं जायंगे, हम आगे जा रहे हैं, जादूगर बादशाह के राज्य में। यह जानकर मरुवानी ने बहुत भय प्रकट किया। उसने सूचित किया कि पाली क्रूर, निर्दयी और सर्वशक्तिमान है। यदि वह उसके हाथ में पड़े तो वह कभी दया न प्रदर्शित करेगा। वह अपने आग्नेय अस्त्रों के द्वारा भी उसे परास्त नहीं कर सकते। वह आदमी नहीं है, उसमें भयंकर दैवी अथवा आसुरी शक्ति है। उसकी सहायता के लिये अमानुषिक शक्तियां हैं। वह बड़े ही मंत्र-तंत्र और सिद्धि जानता है।

इसमें सन्देह नहीं कि वह भलामानस उनके हित से प्रेरित होकर ही यह सब कह रहा था। अपने पर किये गये उपकार से वह इन आगन्तुकों का मित्र हो गया था। जब उसने देखा कि वृहस्पति और उनके साथी, जाने से बाज़ नहीं आयेंगे, तो दलदल से निकाल कर पहाड़ी देश में शान्ति और सुरक्षापूर्वक पहुँचाने का भार उसने अपने ऊपर लिया।

यह यात्रा कई घंटों में समाप्त हुई। वह निश्चित स्थान पर दूसरे दिन सूर्योदय के एक घंटा बाद पहुंचे। मरुवानी ने बड़ी चतुरता से डेंगी को मार्ग दिखलाते हुए, रास्ते में उगे हुए बड़े वृक्षों, और हरियाली से ढँके हुए चट्टानों को पार कराया। सचमुच वहां अँधेरा इतना था कि ४ हाथ भी आगे कुछ नहीं दिखलाई पड़ता था, किन्तु मरुवानी ने इस तरह डेंगी को वहां से निकाला कि कहीं जरा भर भी कोई धक्का न लगा।

सूर्यास्त के बाद वृहस्पति उस आदमी से बातचीत नहीं कर सकते थे, क्योंकि अँधेरे में उनका इशारा दिखाई ही कैसे पड़ता। किन्तु जब वह अँधेरे में आगे बढ़ रहे थे, तो पर्यटक ने मरुवानी द्वारा ज्ञात सारी ही बातें अपने साथियों से कह सुनाई। वृहस्पति ने जहां तक हो सका आनेवाली भयंकरता को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया।

वृहस्पति—'अगर यह सभी कुछ एकाएक घटित होता, तो निस्सन्देह मुझे यह स्वप्न जान पड़ता। चाहे हम लोग अपनी इस भयंकर यात्रा से जीवित बाहर भी हो जायँ, तो भी यह वृत्तान्त सभ्य जगत को न सुनाना होगा; क्योंकि कोई भी इस पर विश्वास करने के लिये तैयार न होगा। प्रत्येक आदमी या तो हमें पागल कहेगा, या भारी झूठा। यह उन्हें असम्भव मालूम होगा, और वही असम्भव हमारे लिये सच्ची घटना है। हम लोगों को यह सच्चाई क्रमशः मालूम हुई हैं प्रथम स्टेगोशरट, फिर जुलाहा पतंग, ब्रण्टोशरट और अन्त में यह भयानक प्राणी जिसे हमने मारा। मालूम होता है, कि हम लोग प्राग्-ऐतिहासिक जगत के एक विस्मृत कोने में विचर रहे हैं। भूतत्त्व सम्बन्धीय चारों महायुग तुम्हें मालूम होंगे प्रथम महायुग (Palaergoic), द्वितीय महायुग (Mesozoic), तृतीय

महायुग (Cainozoic) और चतुर्थ महायुग (Post tent-iatry), जिन्हें क्रमशः प्रत्नजीवक, मध्यजीवक, तृतीय जीवक एवं तुरीय जीवक या आधुनिक भी कहते हैं। मध्यजीवक महायुग जिन तीन—त्रयासीय, जुरासीय और खटिक (Cretacious), युगों में विभक्त हैं, उनमें से यह सारे ही जुरासीय युग के हैं, सिर्फ एक भीषण शरट इस युग का नहीं है। यह अनुमान करना बहुत कठिन है, कि दोनों के युगों में कितने का अन्तर था। जुरासीय प्राणी बहुत जल्दी एकाएक लुप्त हो गये थे। मालूम होता है उस समय पृथ्वी के जलवायु में कोई भारी परिवर्तन एकाएक आ गया, और सारे जन्तु विनष्ट हो गये। यह वह जानवर थे, जो बहुत ही तीव्र गरमी और सील को पसन्द करते थे। वह ऐसे जगत में रहते थे, जहां आजकल का आदमी हर वक्त पसीने-पसीने रहता। चाहे जैसे भी हो जुरासीय युग अपने सारे जन्तुजगत् के साथ खतम हो गया। सचमुच बिच्छू को छोड़कर ऐसा कोई भी जन्तु आजकल पृथ्वी पर नहीं है, जो उस समय की जातियों का सादृश्य रखता हो। उसके बाद जब फिर पृथ्वी पर जीव हुए, तो यह बिलकुल नये थे। कितनी विचित्र बात है, कि उस जुरासीय युग का जन्तु आज आधुनिक युग की बीसवीं शताब्दी में हम देख रहे हैं।

सत्यव्रत—'सचमुच, यह आज तक की खोजों में सबसे भारी वैज्ञानिक खोज है।'

बृहस्पति—'निस्सन्देह। किन्तु हमारे इस आविष्कार का कुछ भी मूल्य नहीं है, जब तक कि हम इन जानवरों की कुछ हड्डियां जो कि हमारी बात को भली-भांति प्रमाणित कर सकती हैं, यहां से न ले चलें, यह फोसील के रूप में नहीं हैं इसलिये नयी साबित होंगी। यदि हमने वैज्ञानिक जगत में इसकी चर्चा की तो हम लोगों को सिद्ध करने के लिये कहा जायगा और सबसे पहिली बात तो अभी वहां तक पहुँचने की है। मैं तो सचमुच अपना बड़ा अहोभाग्य समझूंगा, यदि वहां किसी तरह पहुँच सका। मुझे जान पड़ रहा है, कि सबसे भयानक समय अभी अब हमारे ऊपर आ रहा है।

मैं पाली को समझने में असमर्थ हूँ। महाद्वीप भर में उसकी बड़ी ख्याति है। जंगल के कोने-कोने में लोग उसको जानते हैं, किन्तु उसके बारे में मैं कोई निश्चित बात न जान सका।'

नरेन्द्र--'मैं फ़मझता हूँ, वह एक प्रकार का मफ़हूर फ़याना या ओझा है। जहां तक मैं जानता हूँ, इन जंगलियों में इन झाड़-फूंकों की बहुत चलती है। उनकी जबान हिलने मात्र फ़े एक निरपराध आदमी हलाल किया जा फ़कता है।'

वृहस्पति--'सो ठीक, किन्तु मैं समझता हूँ, जादूगर बादशाह कोई असाधारण ओझा है। सचमुच, यदि मैंने जितनी बातें उसके बारे में सुनी हैं, उनमें से आधी भी सच हों तो वह हेप्नाटिस्ट है। जैसा कि मैंने कहा, मैंने कोई भी निश्चित बात उसके बारे में न जान पाई; किन्तु मैंने कहते सुना है कि वह अपने अनुयायियों को बहुत दूर से अपने हुक्म की पाबन्दी कराता है। उसके बहुत से सेवक हैं,जो भयंकर से भयंकर काम कर सकते हैं। वे स्वयं अपने ऊपर भारी घाव लगा लेते हैं किन्तु उन्हें दर्द नहीं जान पड़ता। मुझे यह सारी बातें मेस्मेरिज्म की मालूम होती हैं। मुझे स्मरण है, जब मैं लड़का था और मेस्मेरिज्म भी अपनी बाल्यावस्था में था तो मैं एक बार बनारस में एक मेस्मेरिज्म का तमाशा देखने गया था। वह मदारी दर्शकों में से किसी को बुलाता था। जब वह उसके पास आते थे तो उन्हें वह अपने शरीर में सूई चुभोने और रेंडी का तेल पीने को कहता था, वह खुशी खुशी उसकी आज्ञा बजाते तथा कुछ भी पीड़ा और अरुचि न प्रदर्शित करते थे।'

नरेन्द्र--'और मैं यह भी फ़मझता हूँ कि इफ़में कोई फ़न्देह नहीं कि एक जंगली आदमी क्यों नहीं हेप्नाटिफ्ट हो फ़कता है।'

वृहस्पति--'नहीं, और मैं नहीं समझता कि हेप्नाटिज्म के रहस्य को कोई ठीक से जानता है। निस्सन्देह इच्छा-शक्ति का मानस-शक्ति से सम्बन्ध है। इसी से जिसकी भी मानस-शक्ति बढ़ी होगी, वह इसमें सफलता प्राप्त कर सकता है। किन्तु मुझे यह बड़ा असह्य मालूम होता है कि ऐसी शक्ति ऐसे क्रूर अफ्रीका के जंगलियों के एक सयाने के पास हो।'

इस समय भी डेंगी बराबर दलदल को पार कर रही थी। मरुवानी अटकल से ही रास्ता पाता जाता था, वह मांगे पर बैठा था और एक डांड़ से पानी हटाता तथा नाव को सीधे रास्ते पर लगाता जा रहा था। नरसिंह और वृहस्पति दोनों डेंगी के बीच में बैठे खे रहे थे।

ऊपर का सारा ही वार्त्तालाप खण्डशः होता था, वे उसी समय बात करते थे जब कि धुन्ध कुछ फट जाती थी तथा चन्द्रमा की रोशनी दिखलाई देने लगती थी। उन्हें इस वार्त्तालाप में आनन्द आता था, क्योंकि इस प्रकार उनके दिल में भूत और भविष्य की भयानक घटनायें हट गई थीं। उन्हें इस बात का भी खयाल नहीं पड़ता था कि शायद उस भयानक जन्तु का कोई दूसरा भाई यहां पास में न छिपा हो और उसके एक झपट्टे में नाव टुकड़े टुकड़े उड़ जाय।

उषा के आगमन का उन्होंने दिल से स्वागत किया। इस प्रकार की भीषण परिस्थिति में पड़े हुए आदमी के लिये दिन का प्रकाश सचमुच आनन्द और आशा का अग्रदूत होता है। सूर्योदय के थोड़ी ही देर बाद मरुवानी ने नाव को एक जगह ले जाकर विश्राम करने के लिये खड़ा कर दिया।

जादू की फांस

वह लोग वहां बहुत देर तक ठहरे। थोड़ी ही देर बाद अब उन्होंने नाव छोड़ पहाड़ी भूमि पर चलना आरम्भ किया। मरुवानी ने सूचित किया कि यह स्थान प्राग्-ऐतिहासिक जन्तुओं से भरा है, अतः यहां जरा भी ठहरना अनिष्टकारक होगा।

गरमी बहुत तेज थी, जमीन ऊंची और तिस पर उनकी पीठ पर बोझा था, इसलिये यात्रा बड़ी कठिन मालूम हुई। मरुवानी ने एक मिनट भी कहीं ठहरने को मना कर दिया। नरेन्द्र और सत्यव्रत तो थकावट के मारे चूर चूर हो रहे थे, और वृहस्पति तथा नरसिंह भी थकने लगे थे। उनका पथ-प्रदर्शक हिरन की भांति कुछ दूर जल्दी-जल्दी जाकर बैठ रहता था, और फिर पीछे से यह लोग पहुँचते थे। इसके बाद फिर वही बात।

सूर्यास्त से एक घंटा पहिले तक वह लोग कहीं भी जरा सा विश्राम करने के लिये न ठहरे। अब वे कुछ अच्छी और ऊँची भूमि पर आ गये थे। स्थान बहुत बिलक्षण था। वृहस्पति ने बतलाया कि ऐसी भूमि मैंने कहीं भी अफ्रीका में नहीं देखी। उन्होंने यह भी कहा कि जो यह वृक्ष तुमने देखे हैं, ये भी आज की वृक्षों की जाति के नहीं हैं। मैंने उगांड़ा से सीरा-ल्युनी तक अफ्रीका के प्रत्येक भाग को देखा है, कहीं भी ऐसे वृक्ष नहीं हैं। वास्तव में यह वृक्ष भी प्राग्-ऐतिहासिक उसी जुरासीय युग के हैं। इनकी जाति भी विलक्षण है। यह वही वृक्ष हैं, जो कि दब कर आज पत्थर के कोयलों के रूप में मिलते हैं।

उस दिन पर्वत के शिखर पर डेरा डाला गया। पहिले-पहिल वह लोहिया पत्थर इतने गरम थे कि छुए नहीं जा सकते थे। किन्तु सूर्यास्त के बाद बहुत थोड़ी देर में वह अच्छी तरह ठंडे हो गये। घाटी की उस भयंकर गरमी और असह्य दुर्गन्धि के बाद अब उन्हें ठंडी स्वच्छ हवा मिली। उन्होंने

बड़ी लम्बी-लम्बी श्वास ले लेकर अपने फुफ्फुसों को भरना शुरू किया, उन्होंने इसमें भी उस वक्त एक प्रकार का स्वाद पाया।

रात को आग के किनारे बैठे हुए वह बहुत देर तक आपस में वार्त्तालाप करते रहे। इस वक्त उनके दिल पर से एक भारी बोझ हट सा गया मालूम होता था, और अब वह कुछ ऊँची आवाज में बातें कर सकते थे। जब से वह सुरंग के मुंह से निकले थे. तब से उन्होंने ऊँचे स्वर में बातें न की थीं।

उस दिन मरुवानी ने और अधिक अपनी विश्वासपात्रता का परिचय दिया। उन लोगों को यह भली प्रकार मालूम हो गया, कि वह आदमी बहुत सज्जन और सच्चा हितू है। उन्होंने समझा कि वह हमारे उपकार को भली प्रकार समझता है, और किसी प्रकार उसका प्रतिशोध करना चाहता है।

वह निस्सन्देह एक सच्चा और बहुत सीधा सादा है—यह दोनों गुण अकसर साथ-साथ मिलते हैं, किन्तु अफ्रीका के जंगलियों में बहुत कम। असल बात यह थी कि वह एक ऐसी जाति का आदमी था, जो कि बौद्धिक तौर पर कांगो के निवासियों से अधिक ऊँची थी। यह बात उसके चेहरे के देखने ही से स्पष्ट हो जाती थी। उसका लिलार ऊँचा और सामने का मस्तिष्क खंड अधिक विकसित था। यद्यपि वह मनुष्य जाति के निग्रो (हब्शी) नसल से था, किन्तु उसकी नाक न वैसी चपटी थी और न ओठ उतने मोटे।

उस दिन शाम को उन्हें बहुत सी ज्ञातव्य बातें उस आदमी से मिलीं। जैसे-जैसे सांकेतिक भाषण अधिक हो चला था, वृहस्पति और वह, और भी एक दूसरे के संकेतों को अच्छी तरह समझने लगे थे। सायंकाल के बीतने के पूर्व ही उन्हें मालूम हुआ, कि हम संकेत के द्वारा भी उतनी ही आसानी से बातचीत कर सकते हैं, जैसे कि शब्द द्वारा।

मरुवानी के कथनानुसार सारा देश ही इन्हीं भयंकर जन्तुओं से भरा है। इनमें से कितने ही घाटी के द्वारा पश्चिम की ओर चले जाते हैं, यद्यपि यह नहीं, जो कि अकसर पानी में रहते हैं। और भी कितने जानवर हैं, जो

कि वृक्षों की पत्तियों पर गुजारा करते हैं—और पाली के राज्य के चारों ओर के घने जंगलों में घूमते हैं। यह जानवर अत्यन्त भयानक हैं। कितने तो भीषण शरट के सदृश, आदमी को देखकर अकारण भी हमला करने से बाज नहीं आते।

वृहस्पति ने मरुवानी से पूछा, कि तो फिर इस भयंकर विपत्ति में अपने आपको डाल कर वह क्यों शिकार करने आया। सचमुच अपने मुल्क से इतनी दूर जाकर ऐसी विपत्ति में पड़ने की उसे कोई आवश्यकता न थी।

मरुवानी ने जब प्रश्न के तात्पर्य को समझा तो उसने शिर नीचा करके एक वैकल्यपूर्ण चेहरे से बताया, कि पाली की इच्छा मुझे अवश्य पूरी करनी है। मैं स्वयं अपना मालिक नहीं हूँ, मैं उस जादूगर बादशाह का दास हूँ। उसने वृहस्पति को अपनी लुंगी दिखाई, यह एक बहुत सिझाये हुए चमड़े की थी, और बहुत ही कोमल तथा मोटी भी थी।

उसने समझाया, कि यह दीनोशरट के चमड़े की है, और उस पर का चित्र इस बात का परिचायक है, कि पहिनने वाला बादशाह का निजी नौकर है। मरुवानी एक चतुर शिकारी था। वह उस झील पर अपने मालिक द्वारा इसीलिये भेजा गया था, कि उन शरटों में से एकाध को मारे। वहां वह उनके बीच में उसी तरह सरक रहा था, जैसे जंगली हाथी के शिकारी सरकते हैं, जब कि हर घड़ी उन्हें अपने शिकार के पैर के अन्दर दबकर कुचल जाने का डर बना रहता है। यदि वह अपने कार्य में सफल होता, तो पाली पीछे चमड़ा निकालने वालों और सिझाने वालों को भेजता। वह लोग उस चमड़े को कई कई उपयुक्त टुकड़ों में काट डालते, फिर उसका गट्ठर बांध कर आदमियों द्वारा पहाड़ के ऊपर तुंगाला के प्रधान शहर को ले जाते।

दीनोशरटों का मारना बहुत मुश्किल था, क्योंकि इतना बड़ा डील-डौल होने पर भी वह बड़े भीरु थे। कितनी ही बार शिकारियों की बड़ी बड़ी टोली आखेट के लिये निकली, किन्तु उनसे कोई विशेष लाभ न हुआ। फिर यह काम अकेले मरुवानी के सुपुर्द हुआ। मगर की खाल की आड़

में, बिना भड़काये हुए वह उनके पास जा सकता था, और इस प्रकार उसे अपने समीप के जानवर के कलेजे में अपने वाण को पहुँचाने का मौका मिल जाता। इसमें सन्देह नहीं कि लक्ष्य जरा भी चूकना बड़ा भयानक था, क्योंकि घायल दीर्तोशरट अपने शत्रु पर चोट करने से बाज़ नहीं आता, और फिर जान लेकर उसके सामने से भागना बहुत मुश्किल है। वहां उस समय एकाएक भीषण शरट की उपस्थिति खतरनाक हुई। भीषण शरट वर्त्तमान सारे ही जानवरों में सबसे भयानक, हृदय-विदारक जन्तु था। तिस पर भी इसका गोश्त बहुत रूखा खाने के अयोग्य और चमड़ा बहुत मोटा और काम के अयोग्य था। किन्तु इसके दांत अवश्य तुंगाला-वासियों की दृष्टि में बड़ी मूल्यवान् वस्तु थे; क्योंकि जो आदमी उसे मारता था, पाली के राज्य में उसके लिये बड़ा सम्मान था।

उस रात तीनों भारतीयों ने सोने से पूर्व अपनी परिस्थिति पर आपस में विचार किया। मरुवानी ने फिर उन्हें उस भयंकर बादशाह के राज्य में आगे बढ़ने से मना किया। किन्तु वृहस्पति समझ रहे थे कि इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं है। पीछे फिर कर उन सारे दृश्यों के भीतर से सुरंग के रास्ते फिर पर्वत के उस पार की घाटी में जाना कुछ कम भयानक और निराशाजनक न था। तमाम ऊँचा-नीचा सोचकर उन्होंने पीछे का लौटना अग्राह्य ठहराया। उन्होंने कहा, कि आगे की विपत्तियां चाहे कितनी ही भयानक क्यों न हों, किन्तु वह कदापि पिछली जैसी रोमाञ्चकारिणी न होंगी।

मरुवानी ने जब देखा, कि मेरे कहने का इन पर कुछ असर नहीं होता, तो उसने फिर पथ-प्रदर्शक का भार अपने ऊपर लिया। दूसरे दिन सारे दिन वह लोग अपने पश्चिम कोण की ओर विस्तृत घाटी में चलते रहे। सूर्योदय के बाद ही मेघ हट गया, आकाश स्वच्छ हो गया। अब वह अच्छी प्रकार अपने आस-पास की भूमि को देख सकते थे। यह एक पहाड़ी जंगलों का देश था, जो कि शिखर प्रान्तों को छोड़ कर सब जगह अत्यन्त हरा-भरा था। तीसरे पहर उनको एक पगडंडी मिली जो कि एक जंगली नाले के पास से जा रही थी। वह लोग उस रास्ते पर कई मील चलते गये।

उस रात को जंगल में उन्होंने पड़ाव डाला। उनके पथ-प्रदर्शक ने उन्हें बताया, कि अब बहुत नहीं चलना है, कल दोपहर तक हम अपनी अन्तिम मंजिल--पाली की राजधानी पर पहुँच जायँगे। उस आदमी ने साफ करके समझाया, कि पाली अवश्य उन्हें मरवा डालेगा। तथापि इनको आशा थी कि पाली हमें नहीं मरवायेगा, क्योंकि हम उस रंग के आदमी हैं, जिन्हें पाली ने अभी तक कभी न देखा होगा; चाहे ऐसे आदमियों की विद्यमानता के विषय में उसे भी पता हो। मरुवानी का अब कोई दोष न था, जहां तक हो सका, उसने उन्हें खतरे से आगाह और बचने के बारे में कहा। यदि वे नहीं मानते, तो यह उनका अपराध है, जो वे मृत्यु के खुले मुंह में जाना चाहते हैं। पाली ऐसा भयानक दैत्य है, कि एक बार उसके चंगुल में पड़ जाने पर जीते जी बचकर निकलना असम्भव है।

यह साफ मालूम हो रहा था, कि मरुवानी बहुत ही हिल-मिल गया है। वह एक प्रकार से उनसे घनिष्ट हो चुका था। इन थोड़े ही दिनों में उसका उनसे बड़ा प्रेम हो गया था--खासकर बृहस्पति को तो वह भगवान् समझता था। यही कारण था, कि जो आफत उस रात उन पर पड़ी, पहिले पहिल उसका समझना ही उन्हें बहुत कठिन हो गया। असली रहस्य का भेद खुलने से कुछ देर पूर्व वह लोग समझते थे कि वह पागल हो गया है।

जब वह लोग सोने के लिये वृक्ष के नीचे के घास के बिछौने पर लेटे उससे पहिले उन लोगों ने निश्चित किया, कि जंगली जानवरों से रक्षा के लिये एक आदमी पहरादार हर वक्त रहना चाहिये, क्योंकि बहुत से जानवर रात को शिकार के लिये निकला करते हैं। मरुवानी ने यह काम स्वयं अपने ऊपर लिया। उसने यह सूचित किया कि यह मेरा कर्त्तव्य है, क्योंकि मैं तमाम दिन खाली हाथों आया हूँ, और आप लोग बहुत सा बोझ लादे आये हैं। इसमें सन्देह नहीं कि वह अपनी बात में सच्चा था; उसके चित्त में कोई भी दूसरी बात न थी, यद्यपि यह बात उन्हें बहुत पीछे मालूम हुई।

अब सत्यव्रत और नरेन्द्र भी जंगल के जीवन से अभ्यस्त हो गये थे। सारे दिन की थकावट के बाद--यद्यपि कल अभी अनिश्चित था--नींद का

आना बिलकुल आसान था। अभी उनके शिर को भूमि से लगे चन्द मिनट भी न हुए होंगे कि चारों निद्रामग्न हो गये। कुछ ही क्षण के बाद नरसिंह तो खर्राटे लेने लगा।

सबसे प्रथम जिसकी निद्रा खुली वह था सत्यव्रत। उसने देखा कि आकाश में एक पूर्ण चन्द्रमा खिला हुआ है और उसकी किरणें वृक्षों की शाखों और पत्तियों के बीच से होकर नीचे पड़ रही हैं। वे स्वयं जहां पर थे वह जगह भी रुपहली चांदनी से पूर्ण थी।

एकाएक बड़े आश्चर्य से लड़के ने देखा कि उसके हाथ बँधे हुए हैं। तुरन्त उसने उठ बैठने का प्रयत्न किया जिसमें वह बहुत मुश्किल से सफल हुआ। उसके बाद जो कुछ उसने अपने पास देखा वह बड़ा वीभत्स था वह उस आतंक और घबराहट में चिल्ला भी न सकता था।

सत्यव्रत की बगल में नरसिंह सोया था उसकी पीठ सत्य की ओर थी। उसने बड़े आश्चर्य से देखा कि अभी नरसिंह वैसे ही खर्राटे भर रहा है किन्तु उसके हाथ-पैर मजबूती से उन्हीं चमड़े के फीतों से बांध दिये गये हैं जिनसे उनका असबाब बँधा था। अभी सब बातें उसने अच्छी तरह न देखी थीं कि वृहस्पति की आवाज़ ने उस नीरवता को भंग कर दिया—

'यह क्या हुआ!'

इससे जान पड़ा कि वृहस्पति जगे हुए हैं। एक अर्द्धनिद्रित मनुष्य की भांति अभी उनका इन्द्रियों पर पूरा काबू न था।

कुछ ही सेकेण्डों के अन्दर उन्हें वास्तविक स्थिति का पता लगा। यह सभी मरुवानी का विश्वासघात था। अब वह नरेन्द्र के शरीर पर झुका हुआ था वह अब भी गाढ़ निद्रा में थे। वृहस्पति की आवाज ने समय चूक जाने पर नरेन्द्र को जगा पाया। उन्होंने अपने आपको मरुवानी के मज़बूत हाथों में और अपनी पीठ को उसके घुटनों के नीचे पाया। उनकी सारी कोशिश व्यर्थ गई। एक मिनट से कम ही में उनके हाथ भी पीठ पर बांध दिये गये।

इस प्रकार चारों ही फांस में फँस गये। यद्यपि वह बोलने के लिये

स्वतंत्र थे किन्तु बोलना उनके लिये कुछ भी लाभदायक न था। उनके लिये खड़ा होना बहुत मुश्किल था और यदि वह ऐसा कर भी सकते, तब भी कोई फ़ायदा न था, क्योंकि उनकी बन्दूकें पहिले ही हटा कर दूर रख दी गई थीं।

थोड़ी देर तक मरुवानी का यह काम उनके लिये बड़ा आश्चर्यकर मालूम हुआ, क्योंकि वह लोग उसे अपना घनिष्ठ मित्र समझते थे। जब उसने देख लिया कि उसके सभी असामी अच्छी तरह बांध दिये गये हैं, अब उनके भागने का खौफ नहीं तो फिर वह अपने दोनों हाथों को जोड़े आगे की खुली जगह में गया। वह अपनी इस सारी गति-विधि में विगतेच्छ सा जान पड़ता था। उसका चलना-फिरना निद्रित चलने वालों सा था। उस समय चांदनी में उसके मुख की आकृति को देखने मात्र से ही यह पता लग जाता था।

उसकी आंखें बिलकुल खुली हुई किन्तु मोतियाबिन्द वालों की भांति शून्य थीं। जब वह चल रहा था तो वह एक निर्बल तथा दीनतापूर्ण स्वर में, किन्तु ऊँची आवाज में बोल रहा था। बोली उसकी अपनी भाषा में थी अतः वह क्या बोलता था यह नहीं कहा जा सकता; किन्तु उसके शब्दों में एक प्रकार का आरोह अवरोह सा जान पड़ता था जिससे मालूम होता था कि वह गा रहा है।

अनेक बार उन्होंने बीच-बीच में स्पष्ट पाली का नाम सुना। उस आदमी के ढंग से जान पड़ता था कि वह जादूगर बादशाह ही को सम्बोधन करके कह रहा है। और वह वहां उपस्थित जान पड़ता था। जान पड़ता था कि मरुवानी वहां मौजूद एक छठे आदमी से कुछ आज्ञा सुन रहा है। और यह भी कि उन बातों को वह अपनी षष्ठ इन्द्रिय द्वारा साक्षात् सुन रहा है। वह थोड़ी देर तक बीच में चुप तथा सावधान चित्त हो जाता था, फिर वह एक दो बात बड़ी नरमी से कहता था। ये सारी ही घटनाएं बड़ी विचित्र मालूम पड़ रही थीं।

एक बड़े भारी प्रयत्न के बाद बृहस्पति अपने पैरों पर खड़े हो सके।

यद्यपि चांदनी में प्रकाश काफी था, किन्तु हाथ का उपयोग न हो सकता था, तथापि उन्होंने उसके ध्यान को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिये बहुत प्रयत्न किया, बड़े जोर-जोर से मरुवानी का नाम लेकर बुलाया। कितनी ही जोर की आवाज से वृहस्पति बोलते थे, किन्तु मालूम होता था, वह आदमी सुनता ही नहीं है, या बहरा हो गया है। अब भी वह बराबर अपने वार्त्तालाप को उस अदृश्य व्यक्ति के साथ जारी ही रखे हुए था।

कितनी ही देर तक वह लोग घबराहट से उसकी सब चेष्टाओं को देखते रहे, फिर सत्यव्रत ने नरेन्द्र से कहा—'अब आपको यह क्या जान पड़ता है !'

नरेन्द्र थोड़ी देर तक चुप रहे, फिर बोले—'मुझे कुछ नहीं फमझ में आता, मालूम होता है, पागल हो गया है।'

वृहस्पति—'वह पागल नहीं हुआ है, अब देखो तो उसकी ओर ! इसकी चेष्टायें, इसकी मुखाकृति; इसके शब्दों की ध्वनि, यह सभी मुझे मेस्मेरिज्म से प्रभावित उन आदमियों का स्मरण दिलाती हैं, जिन्हें मैंने अपने बचपन में बनारस के विश्वेश्वर थियेटर हाल में देखा था।

यह हेप्नाटिक स्वप्न में है, इसमें मुझे अणुमात्र भी सन्देह नहीं। इसकी सारी ही चेष्टायें निद्रित-चरों की सी हैं।

उन्होंने फिर अनेक बार उसके ध्यान को आकर्षित करना चाहा, किन्तु सब फजूल। जान पड़ा उस अन्तर्लक्षित व्यक्ति से उसने अब सविस्तर आज्ञा पा ली है। वह उसके कर्मों ही पर नहीं, प्रत्युत उसके विचारों पर भी अधिकार रखता है। अब वह अपने बन्दियों के घेरे के बीच में आकर पलथी मारकर बैठ गया। निस्सन्देह अब वह लोग बन्दी थे, और उसी आदमी के, जिसकी कि उन्होंने प्राण-रक्षा की थी, जिसे उन्होंने अपना मित्र समझा था, और जिसने इसमें भी सन्देह नहीं, उस भयानक स्थान से उठा उन्हें एक किसी कदर सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया था।

सारी ही बातें विश्वास करने के अयोग्य थीं, किन्तु यह सब कुछ घट रही थीं, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। थोड़ी देर तक तीनों भार-

तीय आपस में अपनी स्थिति पर वार्त्तालाप कर रहे थे, यद्यपि बातें वह जोर-जोर कर रहे थे, किन्तु मरुवानी इधर ज़रा भी खयाल नहीं कर रहा था। एक बार भी वह न हिला। वह एक पत्थर की मूर्ति की भांति अचल बैठा हुआ था। उसकी पूर्ण विस्फारित आंखें अपनी शून्य दृष्टि को सीधी अपने सामने डाल रही थीं, जान पड़ता था, अब वह भावी की प्रतीक्षा कर रहा है।

नरेन्द्र—'मैं जानता था, कि हेप्नाटिफ़्ट कर-पृपर्फ या कर-परिचालन किया करते हैं, उनके लिये यह भी आवश्यक है, कि अपने रोगी या माध्यम की आंखों की ओर देखें।'

वृहस्पति—'हमें, विचारप्रेक्षण, टेलिपेथी और दूरदर्शिता (Clairvoyance) के विषय में बहुत कम मालूम है। अभी यह शास्त्र अपनी बाल्यावस्था में है। न इसके लिये समय है, न अवसर कि इन अद्भुत मानसिक शक्तियों पर बहस की जाय। ये सारे विषय बहुत विस्तृत तथा पद-पद पर बड़े-बड़े स्पष्टीकरणों की अपेक्षा रखते हैं। जो कुछ भी हो, हमें यह मालूम है कि किन्हीं-किन्हीं अवस्थाओं में एक मन, दूसरे मन पर अधिकार रख सकता है। और हम यह भी जानते हैं, कि टेलिपेथी भी एक सिद्धि है, जिनके द्वारा विचारों को, कुछ दूर से भेजा और प्राप्त किया जा सकता है—अर्थात् शब्दों के आने-जाने की भांति विचार भी इच्छानुसार आ-जा सकते हैं। फिर जब दोनों बातें पृथक् सिद्ध हैं, तो क्यों दोनों का एक स्थान में योग नहीं हो सकता ? जब कि एक आदमी दूसरे आदमी के कर्मों पर, एक कमरे में रहते हुए, अधिकार जमा सकता है, तो निस्सन्देह यह खयाल करना उससे एक ही क़दम आगे है, कि विशेष परिस्थितियों में वह अपने से दूर—कुछ गज, चाहे कुछ मील पर—भी वही बात कर सकता है। हेप्नाटिस्ट माध्यम को नहीं छूता। वह सर्वदा उससे दूर खड़ा होता है। कोई भी शारीरिक चेष्टा वहां काम में नहीं लाई जाती। हमें जानना चाहिये कि वह अपने अभीष्ट प्रभाव को अपनी विचार-तरंगों द्वारा अपने माध्यम तक पहुँचाता है। यह समझ लेना युक्तियुक्त है कि विचार-तरंग भी वैसी

ही हैं, जैसे बेतार की तरंग । अतः दूरी या स्थान-भेद की कठिनाई ऐसी नहीं है, जिसका हल न हो ।'

नरेन्द्र—'हां, जो आपने कहा, मैं भी अपनी मित्र मंडली में इसके बारे में बहुत सुना करता था । बल्कि मेरा एक दोस्त तो इस फ़न में उस्ताद समझा जाता था ।'

वृहस्पति—'मैं कभी भी निर्बल हृदय का आदमी नहीं रहा हूँ । बहुत पहिले से मेरी बुद्धि तार्किक, और गवेषक रही है । मैं बिना पूरी परीक्षा के न किसी बात को झट स्वीकार करने के लिये तैयार था, और न उनकी ओर से आंखें मूंद लेने ही के लिये । किन्तु इतनी बात निस्सन्देह है, कि इन गम्भीर विषयों के पीछे पड़ने वाले लोग अधिकतर मस्तिष्क-शून्य एवं मिथ्याविश्वासी हैं, और यही बात इसके लिये हानिकारक हुई है । क्योंकि ऐसे लोग उसके असली रहस्य और तर्कसंमत सिद्धान्त को ग्रहण करने में असमर्थ हैं । वह उनसे ऐसे-ऐसे अनोखे सिद्धान्तों की रचना करते हैं, जो सर्वथा युक्तिशून्य एवं बालिशता द्योतक होते हैं । उदाहरणार्थ थ्योसोफी की बहुत सी बातें हमें इस विषय पर एक तर्क-सहचरित गवेषणापूर्ण दृष्टि डालनी चाहिये । मेरा खयाल है, कि पाली—जिससे जल्द ही हम मिलने वाले हैं—एक असाधारण शक्ति का हेप्नाटिस्ट है । हमारा दोस्त मरुवानी उसके हाथ की अनेक कठपुतलियों में से एक है । सम्भवतः यह एक अच्छा माध्यम है । कुछ मनुष्य औरों की अपेक्षा जल्दी हेप्नाटिक प्रभाव में आ जाते हैं । जान पड़ता है, मरुवानी, कई वर्षों से पाली के प्रभाव में है । उस पर उसने इतनी बार अपना प्रयोग किया है कि अब उसका दिमाग उसका अपना नहीं है; उसकी इच्छाशक्ति शून्य के बराबर है और अब अपने इस माध्यम पर पाली को उतनी दूर से भी प्रभाव डालने में कुछ कठिनाई नहीं है । शायद हम लोग उस जगह से पांच मील पर हैं जहां कि पाली बैठा है । उसकी विचार तरंगें इस दूरी को पार कर मरुवानी तक पहुँच रही हैं और मरुवानी की उसके स्वामी तक । पाली ने मरुवानी के विचारों को वहीं बैठे बैठे पढ़ा है । उसने हमारे वहां पहुँचने से पूर्व ही हमारे

आने को जान लिया। कल रात को ऐसी बात कुछ भी न हुई थी; इससे अनुमान होता है कि आज हम यहां ही से पाली के विचार-तरंगों के हलके में पहुँच गये। इस प्रकार का हल्का या चक्र वैसे ही सम्भव है जैसे बेतार के तार के खम्भों से शब्द-तरंगों की पहुँच तक का चक्र—जितनी दूर तक कि उस स्टेशन से तार रहित तार भेजा जा सकता है। जैसे बेतार के हल्के का विस्तार और संकोच उसके खम्भों की अधिक कम ऊँचाई के तारतम्य पर है वैसे ही विचार-तरंगों का भी हल्का हेप्नाटिस्ट की मानसिक शक्ति की अधिकता और न्यूनता पर है। पाली ने यहां आने पर सब बातें जान कर मरुवानी को आज्ञा दी और उसने जो कुछ किया वह तुम देख रहे हो। उसे ऐसा करने की क्यों आवश्यकता हुई ?—इसीलिये कि मरुवानी हमारा मित्र था वह न जाने किस समय हमारे भाग निकलने में सहायक होता। यह सब बातें पाली ने मरुवानी के हृदय को पढ़ कर जान लिया। तुम्हें मालूम है कैसे मरुवानी हम लोगों से बार-बार आगे न बढ़ने का आग्रह कर रहा था। जैसे-जैसे यह जादू का हल्का—अथवा पाली के विचार साम्राज्य की सीमा समीप आती जाती थी, वह दुःखित और अधीर हृदय से हमारे हित के लिये हमें आगे बढ़ने से रोकता था। अब हम पाली के हाथ में हैं, अब देखना है, आगे किस्मत क्या दिखाती है ?

वृहस्पति का सारा ही कथन पीछे अक्षर-अक्षर सत्य सिद्ध हुआ। सचमुच वहां इसके अतिरिक्त कोई उसकी व्याख्या ही न हो सकती थी। यह बात अब असन्दिग्ध थी, कि मरुवानी अपने होश में नहीं है, वह सम्मोहित (हेप्नोटाइज्ड) है। रात भर और सबेरे भी कुछ घण्टों तक उसने उनसे कुछ भी बातचीत न की। जान पड़ता था, वह उनकी उपस्थिति से बेखबर है। उषा का आगमन देखते ही वृक्षों के हरे पत्ते के झुरमुटों से पक्षियों ने अपना मधुर गान आरम्भ किया। मन्द-मन्द गति से चलती हवा ने भी सुप्त जगत को अपने कोमल हाथों से—अपने मधुर स्पर्श से—जगाना आरम्भ किया। इसी समय एक हल्की सी फुहार शुरू हुई, जिसने

उस वृक्ष के पत्तों को जिसके कि नीचे वह लोग बैठे हुए थे; अभिषिक्त कर दिया।

जिस समय यह फुहार पड़ रही थी, उसी समय उन्हें कुछ शब्द सुनाई पड़ने लगा। यह शब्द धीरे-धीरे अधिक होता गया। बहुत देर न होने पाई कि उन्हें मालूम हो गया कि यह शब्द पाली के सैनिकों के पैर का था। ज़रा ही देर में वह उनके सम्मुख खाली जगह में पहुँच आये। उनकी संख्या बीस थी। सभी वैसे ही लुङ्गी पहिने हुए थे, जैसी कि मरुवानी की थी। प्रत्येक लुङ्गी के सम्मुख भी वही सांप का चिह्न था। उनके हाथ में छः हाथ लम्बे बड़े-बड़े फलों वाले भाले थे जो जुलू लोगों के असेगे की भांति ही थे, किन्तु लोहे की जगह यह पीतल के थे। इन आदमियों में एक और आदमी भी था, जो देखने से जान पड़ता था, उनका अफसर है। और सारी बातें इसकी भी वैसी ही थीं, जैसी कि उसके साथियों की, फरक इतना था कि उसके गले में उन्हीं प्राग्-ऐतिहासिक जन्तुओं के दांतों की एक माला थी।

उस व्यक्ति ने पहिले तीनों गौरवर्ण भारतीयों को देख बड़ा आश्चर्य सा प्रकट किया। वह कितनी देर तक उनकी ओर देखता रहा। जान पड़ता था, उसने उतने भूत इकट्ठा देख लिये। इन बातों से मालूम हो रहा था कि उसने कज्जलवर्ण आदमियों को छोड़कर दूसरे रंग के मनुष्यों को देखा ही नहीं है। जब वह अच्छी तरह देख चुका, तो वहां गया, जहां मरु-वानी उसी दशा में बैठा था, उसने मरुवानी के कन्धे पर अपना हाथ रखा; जिस पर माध्यम की अवस्था में असाधारण परिवर्तन दिखाई पड़ा।

धीरे-धीरे उसे होश आने लगा। मालूम होता था, उसका अन्तःकरण बड़ी भारी व्यथा अनुभव कर रहा है। जान पड़ता था देर तक की गाढ़ निद्रा के बाद अभी वह जागा है। थोड़ी देर में वह सावधान होकर खड़ा हो गया, और अपनी ओर बड़ा चकित हो देखने लगा। तब जान पड़ता है, एकाएक उसे जान पड़ा कि मैंने क्या किया। उसने अपने दोनों हाथों से अपने मुंह को ढांक लिया, उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बँध गई। वह बच्चों की भांति फूट-फूट कर रोने लगा।

अफसर ने एक बड़ा चाकू निकाला और उससे उनके पैरों के बन्धन काट दिये, किन्तु हाथ अब भी वैसे ही पीठ पर बँधे थे। तब उसने खड़ा होने के लिये संकेत किया और अपने सिपाहियों के बीचमें उन्हें रखकर जंगल में उत्तर-पश्चिम की ओल चल दिया।

जादूगर बादशाह

एक घंटे तक जंगल में चलने के बाद, वह एक ऐसे प्रदेश में आये, जिसका सौन्दर्य अद्वितीय था। यहाँ चारों ओर ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ और गहरी उपत्यकायें थीं। बीच-बीच में जंगल भी थे, और कहीं-कहीं हिमाच्छादित चोटियाँ जो अवश्य हिम रेखा के बराबर पर होंगी। सारी उपत्यका जोती हुई थी। उसमें जगह-जगह केला, नारंगी आदि के बड़े-बड़े बाग लगे थे। बीच-बीच में कोई-कोई गाँव उनके रास्ते या बगल में आ जाता था। जैसे-जैसे वह प्रधान नगर के पास पहुँचते जाते थे, वैसे ही वैसे गाँव भी बड़े होते जाते थे। उन्होंने देखा कि ग्रामवासी भी शारीरिक आकृति में वैसे ही हैं, जैसे कि उनके निग्राहक। उनकी पोशाक भी वैसी ही लुंगी की है, किन्तु उसमें इतना फरक है कि एक दूसरे से लिपट कर लड़ते हुए, खुले मुंह और निकली जीभ वाले एक दूसरे की ओर मुंह किये वह सर्पों के जोड़ों वाला निशान उन पर नहीं है।

प्रातःकाल की उस अल्पकालिक यात्रा में, वह भय से बड़े ही घबराये हुए थे। मखवानी ने उन्हें सूचित किया था कि वह काल के मुख में जा रहे हैं। इन पिछले सारे ही महीनों में शायद ही कोई दिन हो, जिस दिन उन्हें मृत्यु आमने-सामने न दिखलाई देती हो। उनको इन रोज-रोज की घटनाओं का एक प्रकार से अभ्यास सा होता जा रहा था। उनका हृदय इतना अभ्यस्त हो गया था, कि अब किसी भी नई आपत्ति के आने पर वह उछल-कूद छोड़ कर स्तब्ध हो जाता था। बृहस्पति ने इस आफ़त पर बेपरवाही दिखलाई। दूसरों ने भी उसका अनुकरण किया। अपनी इस सम्पूर्ण संक्षिप्त यात्रा में, वे निर्भीकता और प्रसन्नतापूर्वक ऊँचे स्वर में बातें करते जा रहे थे। उन्हों-ने कहा—अच्छा, आखिर जादूगर बादशाह के परिचय का भी सौभाग्य हुआ।

नरेन्द्र ने कप्तान से गन्तव्य स्थान का नाम पूछा। कई बार, बार-बार

संकेत करने पर उन्हें अपने अभिप्राय के समझाने में सफलता हुई। जिसी वक्त उसने अभिप्राय समझ पाया उसी वक्त झट से यह एक शब्द कहा— अमतुंगाली। और वही तुंगाला देश की राजधानी थी।

अपने अन्तिम स्थान के विषय में उन्हें बड़ी उत्सुकता थी। वह समझते थे कि वह ऐसा ही होगा, जैसे कि रास्ते पर के गाँव; फरक इतना ही होगा कि वह इनकी अपेक्षा भारी होगा। किन्तु यहाँ उनका खयाल बिलकुल उलटा साबित हुआ।

थोड़ी देर तक वह बराबर ऊँचे की ओर चढ़ रहे थे। अन्त में वे अपेक्षाकृत खुले प्रदेश में पहुँचे। वहाँ से जंगल बहुत पीछे छूट गया था। अब वह एक पर्वत श्रेणी के ऊपर के भाग पर थे। कदम-कदम पर जमीन पथरीली और बड़े चट्टानों वाली होती जाती थी। जहाँ-तहाँ बहुत सुन्दर वृक्ष लगे हुए थे, जिनमें से कितने ही बहुत ऊँचे थे। अब उनको एक सड़क मिली, जिस पर गाड़ी चलने का रास्ता था। वह चक्कर काट कर ऊपर की ओर चढ़ती जाती थी।

दस बजे वह लोग पहाड़ की रीढ़ पर पहुँचे। उन्होंने उस ऊँचे स्थान से नीचे के दृश्यों पर नज़र डाली। बिलकुल नीचे छोटी-छोटी घाटियाँ थीं जो नंगे पथरीले टीलों द्वारा एक दूसरे से पृथक की गई थीं। यह टीले सैकड़ों हाथ मोटे थे, और प्रकाण्ड दीवारों की भांति जान पड़ते थे। इन टीलों की नंगी पीठ पर अनेक रास्ते भिन्न-भिन्न ऊँचाई पर बने थे और एक से दूसरे पर जाने के लिये सीढ़ियाँ कटी हुई थीं। बड़ी-बड़ी दीवारों में भी रास्तों की ओर बहुत से छेद थे।

यह जानना आसान था कि यह सभी छिद्र उन टीलों में खुदी बहुत सी गुफाओं के द्वार थे; क्योंकि कितने ही आदमी सीढ़ियों पर चढ़ते-उतरते एवं उन छिद्रों के अन्दर जाते और बाहर आते दिखाई पड़ रहे थे। दूर होने से वह छिद्र चूहे की बिल की भांति जान पड़ते थे। आदमी भी बहुत छोटे-छोटे दीख पड़ते थे। पहाड़ों के पृष्ठ पर वह लोग इस दृश्य को हजार फ़ुट ऊपर से देख रहे थे।

उनकी सड़क धीरे-धीरे उन्हें मध्य-उपत्यका के सिरे पर ले गई। वहाँ उन्हें एक बहुत चौड़ा राजपथ मिला। यह एक विशेष प्रकार की सड़क थी, जिसकी चौड़ाई दो सौ हाथ तक थी। इसकी दोनों ओर के मकान किसी अमानुषी शक्ति के हाथों की कारीगरी थे। सौ-सौ फुट ऊँचे भीटों के बीच यह सड़क थी और प्रत्येक भीटे पर दिखाई देती थी। इन भीटों की बगल में ऊपर चढ़ने के लिये बड़ी पैड़ियाँ थीं और प्रत्येक पैड़ी की बगल में बहुत सी गुफाओं की श्रेणी थी।

सारा ही दृश्य बड़ा विचित्र जान पड़ता था। सड़क की बगल में तथा प्रत्येक गुफा के द्वार पर वृक्ष लगे हुए थे। वह हरे-हरे वृक्ष केवल देखने में ही सुन्दर न मालूम होते थे, बल्कि वहाँ की कड़ी धूप और गरमी में वह बहुत ठंडक और छाया प्रदान करते थे।

जिस समय वे इस अद्‌भुत नगर की प्रधान सड़क पर जा रहे थे उस समय नगर की भी विचित्र अवस्था थी। तीन गोरे कैदियों के पकड़े जाने की खबर ने सारे नागरिकों में खलबली मचा दी थी। अभी यह लोग बहुत दूर आगे न बढ़े थे कि उनके पीछे दर्शकों की एक बड़ी भारी भीड़ लग गई, जिससे वह विस्तृत सड़क बिलकुल भर गई। मालूम होता था, कोई बड़ा मेला लगा हुआ है। वहाँ हल्ला और शोर का कोई ठिकाना नहीं। हर एक आदमी आगे बढ़ने के लिये एक दूसरे से धक्कमधक्का कर रहे थे। बहुत से नवयुवक तमाशा देखने के लिये वृक्षों पर चढ़ गये थे।

सारे ही आदमी वहाँ चमड़े की लुंगी पहिने हुए थे। स्त्रियों की पोशाक में इतना अन्तर था कि वे लुंगी के अतिरिक्त बिना बाँहों की एक एक कुर्ती पहिने थीं, उनके शिर पर बहुत से पीतल और चमकीले पत्थरों के आभूषण थे। बालक प्रायः सारे ही असूत्रधारी थे, उनमें से कोई-कोई गले में माला पहिने हुए थे, जिससे जान पड़ता था वे अमीरों के लड़के हैं।

सैनिक उसी प्रकार आगे बढ़ रहे थे। वे इस हल्ले-गुल्ले का कुछ भी ध्यान न करते थे। जब तक उनके रास्ते में रोक नहीं होता था वे किसी से कुछ बोलते भी न थे।

आधी दूर सड़क पार करने पर वे एक ऐसी जगह पर पहुँचे, जहाँ दाहिनी ओर एक गुफा द्वार था। यह और दरवाजों से बहुत बड़ा था। इस दरवाजे की दोनों ओर दो द्वारपाल थे, जिनके हाथों में एक-एक भाला था और वे वही शाही लुंगी पहिने हुए थे।

कप्तान ने कोई भी कवायद-वाक्य न कहा, लेकिन सारे सैनिक दाहिनी ओर घूम गये। अब बन्दियों ने अपने आपको एक ऊँची छतवाले पाताल-मार्ग में पाया। इस प्रकाश-रहित स्थान में, पहिले उन्हें सिवाय उस थोड़ी सी जगह के, जहाँ मशाल जल रही थी कुछ भी दिखाई न देता था। यह एक विशाल गुफा थी और उसमें पत्थर की दीवालों पर कितने ही मशाल जल रहे थे। उन्होंने देखा कि इस गुफा-मार्ग से अन्दर ही अन्दर अगल बगल में और भी गुफायें चली गई हैं। चौड़ी-चौड़ी छतों को रोकने के लिये वहाँ बीच-बीच में बड़े-बड़े खम्भे छोड़े हुए हैं। यह खम्भे डमरू की शकल के थे—अर्थात् ऊपर-नीचे मोटे और बीच में पतले।

नज़दीक से देखने पर उन्हें मालूम हुआ कि गुफा चूकर बने तोड़ों से भरी हुई है। और यही नहीं कि वह पानी खाये हुए थे, बल्कि चूना-पत्थर जिसके कि वह बने हुए थे स्वयं असंख्य स्फटिक कणों से भरा हुआ था। यह कण मशाल के प्रकाश में चमक रहे थे। गुफा के भीतर एक दो आदमी इधर-उधर जाते-आते भी दीख पड़े। उनके हाथों में मशाल थे।

सिपाही गुफा-मार्ग के मध्य में जाकर फिर एक अन्तरंग गुफा में प्रविष्ट हुए। यह गुफा अधिक प्रकाशित थी और यहाँ कितने ही सैनिक थे। इनके हाथों में भी उसी तरह का भाला था। यहाँ यह लोग खड़े हो गये और कप्तान ने एक पंख की कँलगी वाले सफेद दाढ़ी के आदमी से मुलाकात की।

इसमें सन्देह नहीं कि कप्तान ने अपनी यात्रा का वर्णन किया होगा, कहा होगा कि वहाँ उसने क्या देखा और यह कि कैदी आपके सामने मौजूद हैं। बात सुनकर तुरन्त वह सफेद दाढ़ीवाला पुरुष जादूगर बादशाह से कहने के लिये चला गया। वह पहिले कुछ सीढ़ी ऊपर चढ़ा, वहाँ ऊपर एक पर्दा था। उसने भीतर जाने के लिये एक तरफ हटा दिया। उस समय

उन्होंने अन्दर की ओर देख पाया। वहाँ चारों ओर लाल रोशनी जल रही थी। मालूम होता था फोटोग्राफर का अन्ध-गृह है। वे लोग बड़ी घबराहट के साथ उस निस्तब्धता में प्रायः पाँच मिनट तक प्रतीक्षा करते रहे, तब सफेद दाढ़ीवाला पुरुष लौट कर आया और वन्दियों को अपने पीछे चलने को इशारा किया।

ऊपर चढ़ने पर उन्होंने अपने आपको एक बड़े वृत्ताकार कमरे में पाया। यह मानुषिक हाथों से ठोस चट्टान में काटा गया था। यह चट्टान घोर रक्त स्फटिक सदृश थी। कमरे के मध्य में, एक प्रकार की वेदी पर आग जल रही थी और इसकी चारों ओर वृत्ताकार मेखलाएं थीं। इस आग की लौ बिल्कुल सुर्ख थी। कमरे की दूसरी ओर दरवाजे की सीध में और भी सीढ़ियाँ थीं; जिनके ऊपर एक बड़ा भारी संगखारे का विशाल सिंहासन था जिसका पृष्ट भाग ऊँचा और अगल बगलमें बाँहें थीं। जिस पर एक लाल रंग की मख-मली गद्दी बिछी हुई थी। हाथों को सिंहासन की बाँहों पर रक्खे इस सिंहा-सन पर जो आदमी बैठा था उसका आकार असाधारण और भयानक था।

वह बनमानुष से भी बढ़कर भयावना था। उसका शरीर लम्बा-चौड़ा था। उसकी भुजाएं और जाँघें बतला रही थीं कि उसमें भीम का बल है। उसने बानरों की पूंछों से बनी हुई कमीज पहिन रखी थी। उसने बाल लाल रंग से रँगे थे। हाथों में कितनी ही धातु की चूड़ियाँ थीं और उसके गर्दन में बहुत से दाँतों, बीजों और हड्डियों की मालायें थीं।

उसकी नाक बहुत चिपटी और आँखें बानरों की तरह भयानक थीं। उसके बहुत मोटे और लम्बे हाथ पैर भी विशेषता रखते थे। उसके ओठ सभी सहवासियों के विरुद्ध बिल्कुल मोटे थे।

सारा कमरा अत्यन्त नीरव था। वहाँ उस सारे वातावरण में कोई ऐसी चीज थी, जिससे अच्छी तरह स्वाँस लेने में भी तकलीफ होती थी। मरुवानी तथा और सैनिक जैसे ही कमरे में प्रविष्ट हुए, वैसे ही उन्होंने लेट-कर शिर को भूमि पर रख दिया। वे सब उसी प्रकार उठने की आज्ञा की प्रतीक्षा में पड़े रहे।

सिंहासनासीन मनुष्य कुछ नहीं बोला, बल्कि कितनी ही देर तक वह हिला भी नहीं। वह चुपचाप बैठा हुआ था। उसकी तीक्ष्ण दृष्टि कैदियों पर पड़ रही थी। सत्यव्रत ने बहुत जोर किया कि उसके मुख की सीध में देखें, किन्तु वह ऐसा करने में असमर्थ रहा। मालूम होता था उसकी तीखी नजर आर-पार हो रही है। जान पड़ता था, वह उन्हें फाड़कर पीछे दीवार पर पड़ रही है। एकाएक बादशाह आगे की ओर झुका और उसने कुछ शब्द कहे। तुरन्त सब आदमी अपने पैरों पर खड़े हो गये और कप्तान ने कुछ कदम आगे बढ़कर अपने भाले को अपने हाथ की पहुँच तक हवा में उठाया।

बादशाह ने अपने शरीर-रक्षकों के कप्तान से कुछ थोड़ी सी बात की, इसके बाद उसने कैदियों की ओर मुंह करके वृहस्पति को संबोधित किया।

भयंकर पाली अनेक भाषाओं पर अधिकार रखता था। तो भी कुछ देर के बाद दोनों ने एक भाषा ऐसी पाई जिसमें दोनों बातचीत कर सकते थे। वृहस्पति अपनी ज्ञात भाषाओं में से प्रत्येक के कुछ शब्द पहिले बोलते थे। अन्त में एक के बाद एक करके जब वह बलुन्दा–वह जाति जो जम्बसी की ऊपरी धार के दक्षिण ओर बसती है–की भाषा में बोले तो मालूम हुआ पाली उसे समझता है, यद्यपि वह उसे वृहस्पति से अधिक सफाई के साथ न बोल सकता था।

पाली ने कहा–'मैंने सुना है कि संसार में गोरे रंग के भी आदमी हैं और बड़े होशियार हैं।'

वृहस्पति–'और मैंने भी बहुत सी किम्बदन्तियाँ महान् पालीके विषय में सुनी हैं, जिसे लोग जादूगर बादशाह कहते हैं।'

पाली ने आकर्ण विस्फरित मुख से मुस्कुराते हुए कहा–'मैं बदनाम नहीं हूँ। किन्तु तुमने कहाँ इन किम्बदन्तियों को सुना ?'

वृहस्पति–'जम्बसी से सहारा के बड़े रेगिस्तान तक।'

पाली–'हाँ, जम्बसी तो मैं जानता हूँ, किन्तु सहारा तुम किसे कहते हो, वह मुझे नहीं मालूम। लेकिन यह सभी प्रकरण-विरुद्ध बातें है। तुम लोग यहाँ मेरे राज्य में क्या करने आये ?'

बृहस्पति–'हम अपनी इच्छा से यहाँ नहीं आये । मेरे साथी और मैं महारण्य में मार्गभ्रष्ट हो गये । हमारे लिये काँगो जाने का मार्ग पाना असम्भव था । इस पर हमने दक्षिण ओर मुंह किया कि इस तरह अवश्य हम कभी जम्बसी या समुद्रतटवर्ती किसी पश्चिमी प्रदेश में पहुँच जायेंगे ।'

पाली–'तो तुम्हें जानना चाहिये कि जो मेरे राज्य में घुस आता है, उसके लिये मृत्यु दण्ड है । अभी मैंने इसका पूर्ण निश्चय नहीं किया । मैं चाहता हूँ कि तुममें से एक या दो को अपना नौकर बना कर रक्खूं । मेरे पास पालतू शेर है, जो मेरा आज्ञानुकारी है, वैसे ही मैं पालतू गोरा आदमी भी रखना चाहता हूँ । तो भी कोई जल्दी नहीं, मैं फुर्सत के वक्त इस पर विचार करूँगा ।'

इसके बाद उसने कप्तान को कहा कि वह कैदियों को लौटा ले जाय । अब वे वहाँ से मध्यवर्ती गुफा में आये । फिर वहाँ से बगल का रास्ता पकड़कर वे एक छोटे कमरे में आये, जिसमें एक छोटा सा चिराग जल रहा था । उन्होंने प्रथम ही इस बात को जान लिया कि यहाँ से भागना असम्भव है, क्योंकि इस विचित्र नगर के सभी रास्ते और गुफाएं सशस्त्र आदमियों द्वारा सुरक्षित हैं और यदि वे किसी प्रकार सड़क तक पहुँच भी जायें तो भी नगर से बाहर निकलना दुस्साध्य है ।

खूनी मैदान

पांच दिन तक उन लोगों को कुछ भी न मालूम हुआ, कि उन पर क्या पड़ने वाला है। इस सारे ही समय उनके पहरेवालों ने उनके साथ बड़ी सज्जनता का व्यवहार किया। तुंगाली सैनिक इन लोगों के बारे में बहुत कुछ जानने के लिये उत्सुक थे। उन्होंने इनसे बहुत से प्रश्न किये। इन प्रश्नों का एक और फल हुआ कि वह जहां-तहां के एकाध शब्द समझने लगे। बृहस्पति—जो कि अफ्रीका की अनेक भाषाओं को जानते थे—बहुत जल्द इस भाषा में अच्छी प्रकार बात करने योग्य हो गये।

छठे दिन के सवेरे वे लोग दूसरी बार पाली के सम्मुख लाये गये। पूर्ववत् इस समय भी पाली अपने संगखारा के सिंहासन पर बैठा था। उसके चारों ओर वैसे ही सशस्त्र शरीर-रक्षक थे। उसके सिंहासन के पास वही सफेद दाढ़ीवाला महामंत्री बैठा था। जादूगर बादशाह उस समय हँसता-सा मालूम हो रहा था, किन्तु उसकी हँसी ने उसकी भयंकर मुखाकृति में कुछ भी परिवर्तन न किया था। उसने जिस वक्त उनको अपना रोमाञ्चकारी निर्णय सुनाया, उस वक्त भी वह वैसे ही हँस रहा था। मालूम होता था, उसके लिये यह बड़े आनन्द की बात थी।

यहां, शायद यह लाभदायक होगा, यदि तुंगाला के लोगों की रीति-रवाज के बारे में कुछ लिखा जाय। इससे आशा है, आगे की बातें और स्पष्ट होंगी।

यह बड़ी विचित्र बात है कि ये लोग कई बातों में प्राचीन रोमक लोगों से मिलते जुलते हैं। ये लोग बड़े वीर और युद्धप्रिय हैं। लड़के थोड़ी ही उम्र से अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग सीखने लगते हैं। रोमकों की भांति ही—बल्कि स्पेनिशों की भांति—ये लोग खून खराबे के दृश्य को बहुत पसन्द करते थे। ये लोग भी उन्हीं की भांति खूंख्वार जानवरों और मनुष्यों के युद्ध को देखने में बड़ा आनन्द पाते थे। पाली स्वयं दूसरा

रोमक सम्राट् कमोदस था, जो कि इस क्रीड़ाक्षेत्र को देखने में आनन्द प्रकट करता था। कमोदस की भांति यह भी एक बार स्वयं उस खूनी मैदान में कूद पड़ा।

पाली ने वृहस्पति से कहा—'मैंने निश्चय कर लिया। कम से कम तुममें से दो की मृत्यु हमारे विनोद के लिये आवश्यक है। बिना बुलाये जो मेरे राज्य में आते हैं, उनके लिये यह दण्ड अनिवार्य है। किन्तु मैं तुम्हारे साथ न्यायानुमोदित व्यवहार करना चाहता हूँ। बड़े-बड़े जंगलों में रहनेवाले जंगली भी यह जानते हैं कि पाली बड़ा न्यायप्रिय है। हां, तो तुम यहां चार आदमी हो, जिनमें से एक काला आदमी है, वह यहां दीमकों की भांति मामूली चीज है। तब भी मैं उसे तुम्हारे साथ गिनता हूँ। पाली की बात भी ध्यान से सुनो। मैं तुममें से दो को जीवित रखना चाहता हूँ। मेरी इच्छा है, कि एक गौरवर्ण पुरुष भी मेरे दासों में रहे। मुझसे कहा गया है कि इतने दिनों के अपने जेल-जीवन में तुमने बड़ी सज्जनता का परिचय दिया है; अतः, मैं इसका तुम्हें पुरस्कार देना चाहता हूँ। मैं तुममें से दो को प्राणदान दूँगा, किन्तु बाकी दो को अवश्य मरना होगा।

इसके बाद वह रुक गया। उसने क्रमशः अपने चारों बन्दियों की ओर देखा। वेदी पर जलती हुई आग के लाल प्रकाश में उसके नेत्र और भी रक्त दिखाई पड़ रहे थे। उनसे आतंक का ज्वालामुखी-सा फूटा निकलता दिखलाई पड़ रहा था।

फिर पाली ने कहा—'मैं तुम्हें और स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। मुझे इस निर्णय पर पहुँचने में कई दिन लगे हैं। मैंने यह निश्चय कर लिया है कि तुम्हारे साथ न्याययुक्त व्यवहार किया जाय। मैं इसे तुम्हारे ऊपर ही छोड़ देता हूँ कि तुम अपने में से मरनेवाले दो आदमी चुन लो। मुझे इसकी परवाह नहीं कि वे कौन-कौन हों। यद्यपि मेरी राय में दो बच रहनेवालों में से एक यह लड़का हो, तो अच्छा, क्योंकि अभी उसे बहुत जीना है। और इसीलिये वह अधिक दिन तक पाली की सेवा कर सकेगा। अब तुम्हें दो घंटे का समय दिया जा रहा है। इस बीच में तुम निश्चय कर

लो। दो घंटे के बाद तुम खूनी मैदान में ले जाये जाओग। वहां पहिले तुममें से एक आदमी को हमारा एक तुंगलाभाला दिया जायगा। फिर उसे एक बड़े भयंकर जन्तु के सम्मुख छोड़ दिया जायगा। यद्यपि उसे आत्मरक्षा के लिये बहुत तेज भाला दे दिया जाता है, किन्तु यह निश्चय है कि उसके लिये वहां यह सर्वथा निरर्थक है। वह एक झपट में आदमी को टुकड़े-टुकड़े चीर कर फेंक सकता है। मैंने कई बार उसे एक समय पांच-पांच आदमियों को अप्रयास चीर कर फेंक देते देखा है। अतः, यह भी तुम्हें साफ कर देना चाहता हूँ कि उसके सम्मुख चाहे तुम मजबूत आदमी को चुन कर भेजो या कमजोर को, दोनों बराबर हैं, दोनों कुछ भी करने में असमर्थ हैं। जब पहले का काम तमाम हो जायगा, तो फिर दूसरा भेजा जायगा। इस प्रकार यह तमाशा समाप्त हो जायगा, जिसकी सूचना पहले ही चारों ओर दे दी गई है। तुममें से दो फिर जीवित बच रहेंगे, जो जीवन भर मेरी सेवा करेंगे। बस मुझे इतना ही कहना था। क्या तुम्हें कुछ मुझसे पूछना है ?"

वृहस्पति—'हां, एक बात। क्या आप हमें क्रीड़ाक्षेत्र में अपने हथियारों के साथ जाने देंगे ? आप समझ सकते हैं कि हम इस भाले के प्रयोग को नहीं जानते, और फिर यह कहां तक न्यायसंगत होगा, यदि हमें अपने परिचित हथियार से वंचित करके एक अपरिचित हथियार के साथ लड़ने के लिये भेजा जाय।'

पाली ने फिर वही वीभत्स हँसी हँसी। उसने कहा—'क्या तुम समझते हो कि मुझे तुम लोगों के आग्नेय अस्त्र का परिचय नहीं ? अपनी जवानी में मैंने बहुत दूर-दूर तक की यात्रा की है। मैं जम्बसी के दक्षिण भी गया हूँ, मैं जंगल के सभी भागों में रहा हूँ। मुझे मालूम है कि तुम लोग आविष्कारों में बड़े निपुण हो। नहीं, तुम्हें मेरे हुक्म के अनुसार लड़ना होगा, चाहे वह तुम्हारे अनुकूल पड़े या प्रतिकूल।'

इसके बाद उसने शरीर-रक्षकों के कप्तान को आज्ञा दी कि बन्दियों

को ले जाय। कुछ सेकण्ड के बाद उन्होंने अपने आपको फिर उसी छोटी कोठरी में पाया, जो कि उनका कारागार था।

यहां अब उनके सामने बड़ा भयानक प्रश्न था। चारों में से दो को जीना है, और दो को मरना। और उस रक्तप्रिय राक्षस ने इस बात को उनके ऊपर छोड़ दिया है कि यह निर्वाचन वह स्वयं आप करें। यह मालूम था कि वह इस न्यायनाट्य में भी अपनी पैशाचिक तृप्ति अनुभव करता है। कैसे अब इस प्रश्न का निर्णय किया जाय? अभी इस विषय पर एक मिनट भी विचार न हुआ था, कि उनमें से प्रत्येक–बकुंगा भी मृत्यु को आलिंगन करने के लिये तैयार था।

वृहस्पति ने अपनी आयु के बल पर अपना अधिकार प्रथम सिद्ध करना चाहा। उन्होंने कहा–'यह निश्चय है कि एक मुझे जाना होगा। मैं तुम सबसे अधिक अवस्था का तथा वृद्ध हूँ। अतः तुम जानते हो कि स्वभावतः मुझे उतना जीना नहीं है, जितना सत्य को। मेरे बाल सफेद हो गये। मेरे कितने साथी संसार से बिदा हो गये हैं। मैंने संसार में जो देखना था, सो देख लिया है। आज नहीं तो कल मुझे मर ही जाना है। लेकिन हां, यह निश्चय करना है कि कौन मेरे साथ होगा। इसका भी निश्चय अवस्था पर ही रखना अच्छा है, किन्तु यह जाननाब हुत कठिन है कि नरेन्द्र और बकुंगा में कौन जेठा है, क्योंकि अफ्रीकन जंगली अपनी अवस्था का ज्ञान रखते ही नहीं।'

नरेन्द्र–'मैं बिलकुल तैयार हूँ, जो कुछ आप मेरे लिये विचार करें। एक बात पक्की है कि सत्य को नहीं जाना होगा। पूछिये, नरसिंह का क्या विचार है। मैं उसके विचारों को सुनने के लिये अत्यन्त उत्सुक हूँ।'

इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसे वीर और आत्मत्यागी मनुष्यों के साथ रहते-रहते नरसिंह में भारी परिवर्त्तन आ गया था।

अब उसने निर्भीकता, स्वार्थत्याग और दृढ़ता क्या है, अच्छी तरह समझ लिया था और कितनी ही हद तक उसने इन्हें धारण भी कर लिया था। ऐसे स्वभावतः भी तो वह धीर पुरुष था, उसने उस दिन गोटी

निकालते वक्त भी अपनी दृढ़ता से नरेन्द्र को चकित और आनन्दित कर दिया था। इस बात पर वह पूरा सहमत था कि बालक को जाने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है, यदि दूसरों के जाने से काम चल सकता है। उसने प्रस्ताव किया कि बाकी तीनों आदमियों पर गोटी डाली जाय।

किन्तु इस बात पर सत्यव्रत बिल्कुल सहमत न था। उसने पीछे रहने से बिल्कुल इनकार किया। उसने कहा कि औरों के साथ मुझे भी गोटी डालने में मौका दिया जाय। जब उन लोगों ने उसकी बात को न सुनना चाहा तो उसने कहा—'कौन सा स्वर्ग-सुख यहां आप देख रहे हैं, जिसके लिये मुझे यहां जीने के लिये छोड़ जाना चाहते हैं। क्या आजन्म दासता, सो भी इस नरपिशाच की, मेरे लिये साध की बात समझ रहे हैं। क्या आप समझते हैं कि मैं चुपचाप इस दासता को स्वीकार कर यहां जीवन भर रहना मान लूंगा। यह निश्चय है कि जैसे-कैसे भी मैं यहां से निकल भागने का प्रयत्न करूँगा, जो कि व्यर्थ होगा और फिर मैं तरह तरह के कष्ट भोगने के लिये वाध्य होऊँगा। आप लोग इन सभी बातों पर विचार करके तब कुछ मेरे लिये निश्चय कीजिये। मेरी समझ में आप मुझे भी भाग्य-परीक्षा का अवसर दीजिये।'

वास्तव में सत्यव्रत की बात से इन्कार करने की गुंजाइश न थी। अन्त में सब लोगों ने इस राय को स्वीकार किया। निश्चय हुआ कि सिपाही के हाथ में चार छोटे-बड़े तिनके दिये जायँ। बारी-बारी से एक-एक आदमी एक एक तिनका निकाले। दोनों बड़े-बड़े तिनके जिसके-जिसके हाथ में आवें बस उन्हीं को मरने के लिये तैयार होना होगा।

यह एक अद्भुत बात थी तो भी इस समय उनमें से कोई भी हर्षित या विस्मित न था। वास्तव में यहाँ जीना-मरना दोनों ही एक समान भयावह था। चाहे जो भी दो बच रहते, उनके दिल में यही एक सन्तोष था कि वह इन सारी कठिनाइयों को अपने मित्रों की जगह पर झेल रहे हैं। और मित्र? वह सचमुच एक दूसरे के मित्र थे, उन्होंने एक साथ कितनी ही कठिनाइयाँ, कितने ही खतरे और कितनी ही बदकिस्मतें झेली थीं।

नरेन्द्र ने पूछा—कौन पहले निकालेगा ?'

सब चुप रहे।

वृहस्पति—'क्या परवाह है 'अग्गजो होतु अग्गगो,। (बड़ा अगुआ हो)

इसके बाद उन्होंने किसी प्रकार का भी ख्याल मन में लाये बिना सिपाही के हाथ में से तिनका निकाल लिया।

नरेन्द्र—'मैं फ़ मझता हूँ कि मैं अपने दोस्त नरफ़िह से बड़ा हूँ। मुझे इफ़का पूरा निश्चय है। अच्छा तो लो!'

उसने एक तिनका निकाल लिया। देखने मात्र ही से मालूम होगया कि वह वृहस्पति के तिनके से छोटा है। अब उन्होंने नरसिंह को निकालने को कहा। नरसिंह ने भी बड़ी निर्भयता से एक तिनका निकाल लिया। तीनों के मिलान पर मालूम हुआ कि उसका तिनका सबसे बड़ा है। अतः उसकी मृत्यु निश्चित है। अब केवल सत्यव्रत की बारी थी। असल में अब बात वृहस्पति और सत्य के बीच में थी। नरेन्द्र तो सब तरह बँच गये थे।

लड़के का दिल बड़े जोर से धड़क रहा था। उसके चित्त में एक भारी घबराहट सी मालूम होती थी। यद्यपि यह सब बात मृत्युके भय से न थी, बल्कि इसलिये कि कहीं उसी के भाग्य में न जिन्दगी भर नरक भोगना हो। धैर्य धर के सत्य ने हाथ आगे बढ़ाया और सिपाही ने अन्तिम तिनका उसके हाथ में रख दिया। वृहस्पति और नरेन्द्र दोनों बड़ी उत्सुकता से उसको देखने के लिये आगे बढ़े। नरेन्द्र को बड़ा आनन्द हुआ जब उसने देखा कि सत्य का तिनका उसके तिनके से भी छोटा है। उसने कहा—'मुझे बड़ी प्रफ़न्नता है बच्चा! भाग्य ने बहुत अच्छा निर्णय किया। मुझे यही अफ़फ़ोफ़ है कि मेरे भाग्य में न हुआ कि मैं आगे पाली के कोप में पड़ता। मैं अपने मित्र नरफ़िह को दिखा देता कि आदमी को कैफ़े मरना चाहिये।'

पाली ने उन्हें दो घण्टे निश्चय करने के लिये दिया था, किन्तु बात पन्द्रह ही मिनटमें तय हो गई। अब अन्तिम घड़ीकी प्रतीक्षा मात्र बाकी रह गईथी।

इस समय नरेन्द्र ने उनकी टूटी-फूटी बोली में खूनी मैदान के विषय में कुछ जानने का प्रयत्न किया, किन्तु उनका प्रयत्न सफल होते न दीख पड़ा। वृहस्पति ने देखा कि उनके कमरे में मरुवानी आ रहा है। वह उस दिन के बाद उन्हें दिखाई न पड़ा था।

जब सहृदय तुंगाला ने सुना कि वृहस्पति अब उस मौत से मरने जा रहे हैं, जिसे कि पाली ने उनके लिये निश्चित कर रक्खा है; तो एकदम भूमि पर गिर कर उसने वृहस्पति के पैरों को पकड़ लिया, मानों वह उन्हें न जाने देगा। फिर जब उसने मुंह उठाया, तो मशाल की रोशनी में उसके गाल भींगे हुये मालूम हो रहे थे।

किन्तु अब आँसू बहाना व्यर्थ था। वृहस्पति ने स्वयं समझाया कि शोक करना निर्वलता है ;। उसी समय वही कप्तान जिसने उन्हें पकड़ा था, बहुत से सैनिकों के साथ अन्दर आया। चारों बन्दियों को एक पंक्ति में खड़ा होने के लिये कहा गया। फिर सारे सैनिक उनके चारों ओर हो गये, सिपाहियों के पैर वैसे ही एक साथ उठते थे, जैसे कि सैनिकों के आमतौर से। सचमुच पाली की सेना कायदा और नियम में बहुत पक्की थी। यह और भी आश्चर्यकर मालूम होता था, क्योंकि उसका राज्य चारों ओर पर्वतों और जंगलों द्वारा सभ्य जगत् से बिलकुल अलग कर दिया गया है।

प्रधान सड़क पर उन्होंने आदमियों की एक बड़ी भीड़ देखी। उसमें पुरुष, स्त्री, बच्चे सभी थे। वे सब इन विचित्र रंग-रूप वाले विदेशी कैदियों को देखने के लिए खड़े हुये थे। लोग बन्दियों के आगे बढ़ने पर पीछे-पीछे चल रहे थे। वे ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते थे, उनकी संख्या भी और बढ़ती जाती थी। अन्त में कई हजार आदमी एक साथ नगर की दिशा की ओर जाने लगे।

जिस वक्त वे आगे बढ़ रहे थे, सत्यव्रत और नरेन्द्र का हृदय इतना बेचैन और भारी हो रहा था कि वे भीड़ की ओर ध्यान न दे सकते थे। नरसिंह के चेहरे पर हर्ष, विषाद किसी का भी कोई चिह्न न था। उसे

ये सभी बातें स्वप्न-सी जान पड़ रही थीं। यद्यपि वह अपने चारों ओर देखता था, किन्तु मालूम होता था, उनसे उसका सम्बन्ध नहीं। वृहस्पति बड़े शान्त और प्रसन्नभाव से सिंह की तरह सड़क पर चल रहे थे। बीच-बीच में कुछ सोच-सोच कर वह कभी हँस भी पड़ते थे। हर एक बात को बड़े ध्यान और प्रेमपूर्वक वह देखते थे। उनके चेहरे से जान पड़ता था कि मृत्यु उनके लिये कोई चीज ही नहीं है। भीड़ में शायद ही कोई होगा, जो इस वीर वृद्ध पुरुष के मुख को देख कर उसके लिये आदर सम्मान का भाव अपने हृदय में न रखता हो।

अन्त में वे लोग प्रधान सड़क के अन्त पर पहुँचे। यहाँ उन्होंने एक असाधारण, अद्वितीय प्रभावशाली दृश्य देखा। बाईं ओर घूमकर वे वे एक ऊँची पैड़ियों वाली पत्थर की सीढ़ी पर चढ़े। वहाँ ऊपर बराबर भूमि से चालीस हाथ ऊँचे पर उन्होंने एक मैदान पाया। इस मैदान में गोलाई में पौड़ियों की गैलरी बनी हुई थी।

उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ, जब उन्होंने देखा कि इन सीढ़ियों पर हजारों आदमी बैठे हुए हैं,जो उस पर्वत पर एक काले ढेर से मालूम होते थे। आगे बीच-बीच में उन्हें छोटे चबूतरे मिले। उन पर सशस्त्र सिपाही बैठे हुए थे। कहीं-कहीं उन्हें चौकियों पर कुछ आदमी बैठे देख पड़े, जिनके पास सिपाही और कितने ही दास खड़े थे। यह दास निम्न श्रेणी के जंगली हब्शी थे। इनके शरीर पर एक कोपीन छोड़कर और कुछ न था। इनके हाथों में बड़े-बड़े ताड़ के पत्ते थे, जिन्हें वह धूप से बचाने के लिये अपने स्वामियों के ऊपर ताने हुए थे।

अन्त में वह उस अर्द्धवृत्ताकार दर्शक मंडली के बीच में आये, यहाँ पाली स्वयं बन्दर की पूंछ वाले कुत्ते, और हड्डी तथा दाँत की मालायें पहने बैठा था। हाँ, यहाँ, एक और विशेष बात थी, अब वह ऊपर एक अत्यन्त रक्त वर्ण का चोंगा पहिने हुआ था। जब बन्दी उसके सामने से निकले, तो उसने शिर उठाकर देखा और हँस दिया।

गैलरी के अन्त में वे फिर कुछ सीढ़ियाँ नीचे उतरे। यहाँ उन्होंने अपने को एक छोटे से घिरावे में पाया। उनसे २० हाथ आगे एक प्रकाँड पीतल का द्वार था, जिसमें इनसे भी अधिक मोटे बहुत से छड़ थे। उनके रक्षकों ने उन्हें आगे बढ़ने की सम्मति दे दी। वहाँ से अब वह अच्छी तरह सारे क्रीड़ाक्षेत्र को देख सकते थे।

यह क्रीड़ाक्षेत्र रोम के कलोसियम और मद्रिद् (स्पेन) के साँड़-अखाड़ा से भी विस्तृत था। मध्य अफ्रीका के ये स्पेनियों के झुंड से जान पड़ते थे।

मालूम होता था कि बैठने के स्थानों में विशेष भाग बादशाह और उसके अमीरों के लिये रखा गया था, और दूसरी ओर सर्वसाधारण के बैठने का स्थान था। भीड़ जितनी अधिक थी, उससे जान पड़ता था, सारी अमुतुंगाली उठ आई है। अखाड़ेकी दूसरी ओर उन्होंने देखा, कि एक और प्रकांड पीतल का द्वार है, जिसके भीतर एक गुफा-सी जान पड़ती थी। उसमें क्या है, यह अँधेरे के कारण नहीं दिखाई पड़ता था। यद्यपि उन लोगों ने आपस में कोई बातचीत न की, किन्तु इस समय उन्हें हर बात पर काफी विचार करने का मौका मिल गया। दस मिनट बीत गया, अभी कोई बात नहीं हुई। यह निश्चित ही था कि जब पाली इशारा करेगा, तो नरसिंह को सैनिकों द्वारा अखाड़ा में जाने के लिये बाध्य किया जायगा। जब वह इस पीतल के दरवाजे से भीतर जायेगा तो, फिर दूसरे दरवाजे से जानवर अखाड़े में छोड़ा जायगा।

अपने स्थान से वे अच्छी तरह पाली की शकल को देख सकते थे। उसका लाल चोगा खून से रँगा हुआ सा जान पड़ता था।

यकायक, शाही बैठक के पास, एक बड़ा झण्डा, चट्टानी दीवार पर खड़ा हुआ। यह झंडा फिर धीरे-धीरे सीधे से तिरछे झुका दिया गया। इसी समय रक्षक सैनिक आगे बढ़े, और उनके कप्तान ने वृहस्पति से कहा—

'कौन पहले जा रहा है ?'

वृहस्पति ने बकुंगा की ओर मुंह कर कहा—'क्या तुम अपने स्थान को मुझसे बदलोगे ?'

नरसिंह—'क्यों ? मुझे पहले जाने का हक है, और मैं उसे छोड़ना नहीं चाहता; किन्तु, साथ ही मैं आपकी आज्ञा को शिरोधार्य मानता हूँ।'

वृहस्पति—'अच्छा, तो मुझे ही पहले जाने दो।'

तुरन्त कप्तान से कहा—'मैं।'

एक लम्बा पीतल का भाला उनके हाथ में दिया गया। वह भाला आठ हाथ लम्बा और बहुत ही तेज था। उसका फल सूर्य के प्रकाश में सोने सा चमक रहा था। वृहस्पति ने अपने नंगे पैर को गरम बालू पर, जो कि वहाँ अखाड़े में हर जगह थी, रगड़ा। अपने बाघम्बर को अच्छी तरह कमर में बाँधा। फिर अफसर से अपने को तैयार बताया। पीतल का फाटक खोल दिया गया। वह उससे बाहर निकल कर जब अखाड़े में गये, तो दरवाजा फिर बन्द कर दिया गया। तुरन्त हजारों तालियाँ दर्शकों की ओर से बजीं। मानो हजारों रक्त-पिपासु जन्तु चिग्घाड़ रहे हैं। वृहस्पति ने समझा, यह उत्साह दिलाने के लिये अथवा उनके शरीर की दृढ़ता और बलिष्टता की प्रशंसा में है। उन्होंने अपने भाले को खूब ऊपर उठाकर उसी तरह उनके प्रति सम्मान सूचित किया, जैसा कि उस दिन कप्तान को उसने पाली के सन्मुख करते देखा था। उसी समय अखाड़े की दूसरी ओर का फाटक खोल दिया गया। उसमें से एक भीमकाय जानवर बाहर निकला। उसका शरीर हाथी के बराबर था। वह अपने पिछले पैरों पर खड़ा था। उसकी आँखें उसके शरीर की अपेक्षा बहुत छोटी थीं।

यह जन्तु अपने पिछले पैर, छोटी किन्तु अत्यन्त मोटी पूंछ पर खड़ा था। इसका शिर छोटा किन्तु मुंह बहुत भारी था। उसका ऊपरी ओठ थूथन या छोटे सूंड़ की भांति था, और नीचे का ओठ लटक रहा था। उस मुंह में से मूंगे की तरह लाल दो हाथ लम्बी जीभ निकल कर लपलप कर रही थी। उसके अगले पैर जानवरों की तरह थे। फर्क इतना ही था कि वह आदमी के शरीर के इतने मोटे थे। उसका शरीर चारों ओर लाल बानरों जैसे बाल से ढँका था।

बृहस्पति ने देखते के साथ ही अपने प्रतिपक्षी को पहिचान लिया। उसने अपने आपको प्रकांड मेगेथेनियम के सामने पाया। यह वह जन्तु था जो न मिल सकनेवाले फलों के लिये बड़े-बड़े वृक्षों की डालियों को वैसे ही तोड़ लेता था, जैसे एक आदमी हरे चने की डाल को। यह आदमी को अपने पंजे में पुतरी की भांति उठा सकता था, और उसको चीर कर दो करना उसके लिये गाजर-सा था।

पहलवान

वृहस्पति चुपचाप खड़े रहे। वह दाहिने हाथ में भाला लिये सीधे खड़े थे। जब वह जानवर उनके चारों ओर घूमने लगा, तो वह भी धीरे-धीरे हटने लगे।

मेगेथेनियम अखाड़े की परिक्रमा करने लगा। वह उछलते-उछलते आगे बढ़ रहा था। यद्यपि इतने बड़े शरीर वाले जानवर के लिये यह बात बड़े आश्चर्य की है, किन्तु मेगेथेनियम बिलकुल मेंढक की चाल चल रहा था। वह अपने पिछले पैरों और पूंछ के सहारे आगे कूदता था, और प्रत्येक कूद के अन्त में उसके अगले पैर या हाथ धरती को आहिस्ते से छूते थे। प्रत्येक बार वह अपने शरीर के अगले भाग को तिर्छा किये कुछ क्षण तक ठहरता था। जान पड़ता था, प्रति बार वह इसलिये अगले हाथों से धरती को छूता था कि अपने पिछले पैरों तथा दुम पर अच्छी तरह तिर्छे होकर खड़ा हो।

चाल की कठिनाई और शरीर के भारी होने पर भी वह फुर्ती से आगे बढ़ता था। वह अखाड़े की एक ओर से दूसरी ओर तक जहाँ कि ऊपर दर्शक लोग बैठे हुए थे, चला गया जान पड़ता है, वह उन्हें अपने आपको दिखाना चाहता था। उसी समय लोगों ने एक जोर की करतल ध्वनि की। इसने उसे कुपित कर दिया। उसने अपने शिर को लोगों की ओर किया। उस समय उसका मुख विफरित तथा लाल जीभ बाहर लपलपा रही थी। उसने एक दो बार अपने घेरावे पर भी चढ़ने का प्रयत्न किया।

अभी तक उसने वृहस्पति को नहीं देखा था। वह उसके सुदीर्घ शरीर के सम्मुख एक छोटी चींटी से थे। यद्यपि वृहस्पति घूम नहीं रहे थे, बल्कि वे वहीं से अपने प्रतिपक्षी की गति-विधि का निरीक्षण कर रहे थे। तब वे भूमि पर झुक कर बालू को देखने लगे, उन्होंने अपने भाले की नोक को भी उसमें घुसा दिया। सत्यव्रत जो साँस रोककर बड़े

भयभीत हृदय से पीतल के सीकचों के बीच से अखाड़े को देख रहा था, यकायक बोल उठा—'क्या कर रहे हैं ?'

नरेन्द्र—'जान पड़ता है, पता लगा रहे हैं कि बालू कितना मोटा है। मालूम नहीं किसलिये वह यह कर रहे हैं।'

बृहस्पति फिर खड़े हो गये और अब की जान बूझकर वह मेगेथेनियम की ओर बढ़े। वह उस पीतलके द्वार से थोड़ी ही दूर पर था जहाँ से सत्यव्रत और नरेन्द्र खड़े देख रहे थे। अब वृहस्पति नजदीक आ रहे थे। उन्होंने उनके चेहरे पर आत्मविश्वास और दृढ़ता का चिह्न अंकित पाया। अपने शिर को सीधा किये बड़ी निर्भयता और शीघ्रतापूर्वक वह वहाँ तक आगे बढ़ गये, जहाँ से जानवर कुल बीस हाथ पर था।

सारी दर्शक-मंडली इस समय निस्तब्ध थी। जान पड़ता था उन हजारों आदमियों ने साँस लेना भी बन्द कर दिया था। पाली पैरों को भूमि पर रखकर अपने सिंहासन के बाजुओं के सहारे आगे झुककर सभी बातों को अच्छी तरह देख रहा था। उसी समय गृध्रवंश की एक बड़ी सी काली चिड़िया अखाड़े पर मंडलाती हुई धीरे से बालू पर ठीक पाली के सामने की ओर आ बैठी।

मेगेथेनियम ने अवश्य वृहस्पति की गंध पाई होगी; क्योंकि अब तक जो वह उधर नहीं देख रहा था, यकायक वृहस्पति की ओर मुंह फेर, अपनी लाल आँखों से उनकी ओर देखने लगा। वृहस्पति निश्चल रहे। प्रायः एक मिनट तक दोनों एक दूसरे की ओर देखते रहे। तब अचानक बिना किसी शब्द के मेगेथेनियम उछला।

लोगों में घोर शब्द हुआ। वह शब्द यकायक उठा और बन्द हो गया। वृहस्पति ने अपने फासिले को अंगुल-अंगुल नाप रक्खा था। जानवर आकर बिलकुल कुछ अंगुलों दूर गिरा। अब भी वृहस्पति वहाँ से न हिले। वे वहीं शान्त और दृढ़ खड़े रहे। वे अच्छी तरह जानते थे कि वह तब तक फिर नहीं कूद सकता जब तक अपने पिछले पैरों पर न खड़ा हो जाय।

जब जानवर फिर अपने पिछले पैरों पर तिर्छे खड़ा हो गया, तो वृहस्पति दौड़कर अखाड़े के बीच में चले गये। अभी जानवर की मन्दबुद्धि ने यह निश्चय भी न कर पाया था कि उसका शिकार निकल गया अब फिर दौड़, कुदान आरम्भ हुई। मेगेथेनियम ने फिर वही निरर्थक लम्बी छलाँग मारी। लोगों ने फिर शोर मचाया। पाली ने भी जोश में बावला हो स्वयं झंडा अपने हाथ में लेकर हिलाना शुरू किया।

यदि वृहस्पति सीधा रास्ता पकड़े होते तो पचास गज भी न जाने पाते और पकड़ लिये जाते किन्तु उन्हें यह मालूम करते देर न लगी कि जानवर मुश्किल से अगल-बगल में मुड़ सकता है। इसलिये वे चक्कर खाकर चल रहे थे। सर्वांशमें वह एक ऐसा युद्ध था जिसमें एक ओर सबसे बड़ा शारीरिक बल था और दूसरी ओर बुद्धि-शक्ति—वह शक्ति जिससे आदमी शान्तिपूर्वक, शीघ्र और तर्कानुयुक्त विचार सकता है।

पाँच मिनट तक दर्शकों के भयंकर कोलाहल और ताली-गर्जन में यह पैंतरेबाजी जारी रही। प्रत्येक छलाँग में मेगेथेनियम अपनी पूंछ से बालू में गढ़ा करता था। अखाड़ा चारों ओर चट्टानों से घिरा हुआ था तो भी वहाँ हवा आ रही थी और धूल इधर-उधर उड़ रही थी। वृहस्पति इस उठे हुए बालू और बादलों की भांति मँडलाती धूल से लाभ उठाने में बाज न रहे। वे कभी एक की आड़में चले जाते थे और कभी दूसरे की। अन्त में फिर वह जानवर को साफ जगह में ले गये। वहाँ फिर दोनों एक दूसरे को देख सकते थे।

इस समय देखने से साफ मालूम हो रहा था कि मेगेथेनियम अत्यन्त क्रुद्ध ही न था, बल्कि घबड़ा भी गया था। साथ ही इस परिश्रम से थक सा गया था, क्योंकि उसका मुंह अब और भी अधिक खुला था। उसकी जीभ एक ओर से दूसरी ओर मुंह में हिल रही थी। वह अपनी ऊँचाई भर खड़ा हो गया। एक बार फिर उसके प्रतिद्वन्द्वी ने फासिले को आँखों से नाप लिया। जानवर फिर पीस डालने के लिये उछला। उसने अपने हाथ आगे को बढ़ाये मानो वह उन्हें पकड़ लेना चाहता था। उसका शिर

बृहस्पति से एक गज पर आकर गिरा, उसी समय उन्होंने एक मुट्ठी बालू उठाकर उसकी आँख में डाल दी।

मेगेथेनियम शरीर हिलाते हुये खड़ा हो गया। वह अपने पैरों से बालू को उसी प्रकार झाड़ रहा था, जैसे बिल्ली आँख में बालू पड़ जाने पर झाड़ती है। उसके बाद फिर उसने अपने प्रतिपक्षी पर झपट्टा मारा, किन्तु फिर वही बात। आँख में एक मुट्ठी बालू के सिवा उसे कुछ हाथ न आया।

अब दर्शकों के भीतर एक बड़ा जोश दिखाई दे रहा था। उनके उद्घोष से सारी घाटी प्रतिध्वनित हो रही थी। निस्संदेह उन्होंने कभी ऐसी हिम्मत और स्थिरमनस्कता न देखी थी। यह भी जान पड़ा कि इन लोगों के हृदय में न्याय और वीरता के लिये सम्मान है। पर्यटक के कार्य पर मुग्ध होकर वे अपने इस भाव को छिपा न सकते थे। सर्वसाधारण ने खुले तौर से बृहस्पति का पक्ष लिया।

जानवर अब क्रोध के मारे आपे से बाहर हो गया था। बालू पर अपनी पूंछ को पटकते समय उसके मुंह से फेन निकल रहा था, तथापि उसने कोई चिग्घाड़ न छोड़ी। मालूम पड़ता था, वह बोल न सकता था। इतना बड़ा शरीर—इतनी शक्ति के होते भी, जान पड़ता था, उसमें कोई निर्बलता है। उसने ऐसे चतुर और फुर्तीले प्रतिद्वन्दी के सम्मुख अपनी बेबसी को समझ लिया।

उसने अब अंतिम प्रयत्न के लिये कमर बाँधी। अपनी लाल-लाल आँखों से अपने शत्रु को घूरते हुए उस नगण्य मनुष्य पर झपट मारने के लिये उसने अपने शरीर को पिछले पैरों और पूंछ के बल करीब-करीब सीधा खड़ा कर लिया। बृहस्पति झट उसके बिल्कुल सामने जा खड़े हो गये मानो वह उसे युद्ध निमंत्रण दे रहे हैं।

देर न हुई। वह भयंकर बालोंवाला ढेर पहाड़ की भांति एक बार हवा में उठकर जमीन पर आ पड़ा। अबकी बार उसके पैर अपने प्रतिपक्षी के बिलकुल पास थे। दोनों में केवल कुछ अंगुलों का अन्तर रह गया था।

अपने आपको रोक रखने में असमर्थ होने से फिर उसका शिर भूमि पर आया और आँखों में वही रुपहले बालुओं की एक मुट्ठी थी।

मारे क्रोध के पागल और अन्धा हो वह फिर खड़ा हुआ। जिस समय वह खड़ा हुआ, झटपट आगे बढ़कर वृहस्पति उसके अगले पैरों के बीच में खड़े हो गये। उस समय हल्ला-गुल्ला, ताली, उद्घोषण, सभी एकदम बन्द हो गये, सबने समझा भारतीय ने इतनी चतुरता से अपने आपको बचाया किन्तु अब वह निस्सन्देह मृत्यु के मुख में खड़ा है।

वृहस्पति नहीं मरे, कारण यह था कि जानवर ने उन्हें देखा ही नहीं। एक तो बालू के पड़नेसे उसकी आँखें अन्धी थीं, दूसरे वृहस्पति वहाँ विद्युत्गति से पहुँच गये थे। कुछ मिनटों में जब तक मेगेथेनियम ने अपनी आँखें पोंछीं, तब तक फिर वृहस्पति नये स्थान पर आगे थे। अबकी वह बिलकुल शान्त तथा अपने हाथों को बाँधे छाती पर रखे थे। लोगों ने बिना भाला के जब उन्हें इस प्रकार खड़ा देखा, तो उनकी तुमुल-ध्वनि का कुछ ठिकाना न रहा।

थोड़ी देर बाद फिर लोग नीरव हो गये; और तब उस सारी जनता के एक-एक आदमी को सच्चाई मालूम हुई। उन्होंने देखा कि उनकी जाति के इतिहास में यह पहले-पहल विजयमाला मनुष्य के गले में पड़ी और भयंकर जन्तु पराजित हुआ। ताली पर ताली बजने लगी। कोलाहल, जयघोष के मारे उस विस्तृत प्रांगण में भी कान बहिरा हो रहा था। जान पड़ता था, सारे लोग ही पागल हो गये हैं।

मेगेथेनियम फिर झुककर हमला करने की तैयारी कर रहा था। यकायक बिलकुल उसके नीचे धरती में सीधा गड़ा भाले का फल जानवर के कलेजे की सीध में दिखलाई दिया। इस समय वृहस्पति का जीवन एक कच्चे धागे से लटक रहा था। वह इसे खूब जानते थे। भाले की एक चोट ऐसे वृहत्काय और बलिष्ट जानवर को कैसे मार सकेगी और खासकर जबकि उसका केशाछन्न चर्म गैंड़े के चमड़े से भी मोटा था। चमसाकृति कुन्त-फल छुरे से भी अधिक तीक्ष्ण था। किन्तु यह कोई प्रमाण

न था कि आधा भाला टूट न जायगा और यदि ऐसा हुआ तथा जानवर पर्याप्त रूपेण घायल न हुआ, तो बृहस्पति निःशस्त्र तथा अपने शत्रु की दया के अधीन होंगे। उन्होंने इन सारे ही खतरों को भली प्रकार सोच लिया था। उन्होंने पहिले ही समझ लिया था कि चाहे मैं कितना मजबूत क्यों न होऊँ, किन्तु मुझमें वह ताकत नहीं कि मेगेथेनियम के चमड़े के भीतर अपने भाले को घुसा सकूं। इसीलिये उन्होंने यह उपाय सोचा था कि जानवर का भारी बोझ ही उसके विनाश के लिये उपयुक्त किया जाये।

वह खड़ा था किन्तु आगा-पीछा करता सा मालूम हो रहा था। शायद वह अपने क्षुद्र मस्तिष्क को किसी और उपाय के सोचने में लगा रहा था, जिससे कि वह अपने इस क्षुद्र किन्तु चतुर शत्रु को मार सके। प्रलोभन देने के लिये बृहस्पति फिर थोड़ा आगे बढ़े। कुछ क्षण के लिये वह मेगेथे-नियम की दौड़ के भीतर थे, किन्तु जैसे ही उन्होंने समझा कि वह अब गिरना ही चाहता है, वैसे ही फिर पीछे अपनी जगह पर हट गये। कूदने से पहिले अपने को दृढ़ करने के लिये एक बार फिर उसने अगले पैरों को आगे जमीन की ओर बढ़ाया, किन्तु अबकी बार वह पृथ्वी पर लम्बा पड़ गया, उसके अगले पैर फैल गये थे और उसकी लम्बी नाक बालू में धँस गई थी।

वह इस तरह, निश्चल कितने ही सेकण्ड पड़ा रहा; और तब धीरे-धीरे उसके मुंह से रक्त बह चला। एक भारी प्रयत्न के साथ उसने फिर उठना चाहा। भाला अब दो टुकड़े हो गया था। मालूम हुआ, भाला कलेजे से हटकर फेफड़े में बहुत नीचे तक घुस गया है।

उस समय मार्मिक व्यथा से पीड़ित वह जन्तु बहुत ही भयंकर दिखाई पड़ रहा था। वह अपने अगले पैरों को अपनी छाती पर मारने लगा कि भाले को तोड़-फाड़ डाले। किन्तु यह बृहस्पति के लिये और भी अच्छा था, क्योंकि इससे भाला केवल ढीला नहीं हो रहा था, बल्कि घाव और बढ़ रहा था। थोड़ी ही देर में जानवर बिलकुल अशक्त हो गया और उसी समय लड़खड़ा कर अपनी बगल में गिर पड़ा।

वृहस्पति पूर्ववत् ही निर्भय, इस अवसर से भी लाभ उठाना चाहे। तुरन्त फांदकर उन्होंने अपना एक पैर जानवर की कोख पर रक्खा और दोनों हाथों से पकड़कर बड़े जोर से भाले को खींच लिया। उन पर चोट करने के लिये जानवर उठने का प्रयत्न करने लगा। उसी समय एक भयानक काण्ड घटित हुआ। मेगेथेनियम ने चाहा कि उनके शिरको पकड़े, किन्तु वह बाल-बाल बच गये। उसी समय उसकी केहुनी वृहस्पति की पीठ पर लगी, और वे नाचते हुए वहाँ से बीस हाथ पर जा गिरे। एक क्षण तक वे पेट के बल चुपचाप पड़े रहे और जान पड़ा, उनका अन्त समीप है।

सौभाग्य से, मेगेथेनियम के पास अवसर से लाभ उठाने के लिये न बुद्धि थी, न आवश्यक फुर्ती। वह फेफड़े के घाव की व्यथा से अत्यन्त व्यथित था। अभी वह उठने के लिये कुछ प्रयत्न भी न कर रहा था कि वृहस्पति सचेत हो गये। वे तुरन्त उठकर खड़े हो गये। अबकी जनघोष से आसमान फट रहा था। शायद अमतुंगाली में इस प्रकार का दृश्य कभी न दृष्टिगोचर हुआ होगा। राजा से रंक तक सारे जोश में पागल हो गये थे। जयघोष बराबर हो रहा था। सैनिक अपने-अपने हथियारों को ऊपर उठा रहे थे। चारों ओर ताली की गर्जना थी। सत्यव्रत और नरेन्द्र जँगले से झांक रहे थे। वृहस्पति की वीरता, चतुरता, स्थिरमनस्कता, एक-एक पर वे मुग्ध थे।

लोगों को निश्चय हो गया था कि जानवर का काम समाप्त-प्राय है। उसने दूसरी बार जो अपने प्रतिपक्षी पर झपटने का प्रयत्न किया उसने उसे और भी असमर्थ कर दिया। इस बार घाव से और खून आया। अब वह चुपचाप लेट गया। अभी उसे होश नहीं आया था तब तक वृहस्पति फिर उस पर दौड़ आये। उन्होंने ठीक अन्दाज करके उस जगह को अपना लक्ष्य बनाया जहाँ कलेजा था और जहाँ का चमड़ा नर्म था। अपने पूर्ण बल से उन्होंने भाले को उसी जगह मारा और उसके टूटे सिरे तक खूब अन्दर घुसा दिया। मालूम हुआ वृहत्काय प्राणधारी के शरीर की नस नस शिथिल हो गयी। मेगेथेनियम एक बार शिर से पूंछ तक काँप उठा।

तब वह हाथ-पैर फेंककर लम्बा पड़ गया। वह निश्चल पड़ा था। अब रक्त उसके मुंह से न आ रहा था लेकिन तुरन्त ही बालू पर एक रक्त का कुंड सा दिखाई पड़ा। वह उस जगह के ठीक सामने था जहाँ से कलेजे में भाला घुसा था।

बृहस्पति वहाँ से थोड़ी दूर हटकर बालू पर बैठ गये। उनके हाथ उनके घुटनों के चारों ओर थे और शिर आगे को लटक गया था।

अब फिर जनघोष दिशाओं को बधिर कर रहा था। वह जनघोष जिसमें सत्य, नरेन्द्र और नरसिंह भी सम्मिलित हुए थे, दस मिनट तक बराबर होता रहा। अखाड़े के चारों ओर जोश का ठिकाना न था। दर्शक-मंडली के सारे ही आदमी उस अकेले बैठे हुये व्यक्ति और मृत शरीर की ओर निहार रहे थे। उनको इस अद्भुत कुश्ती और ऐसे विचित्र पहलवान को देखकर अनिर्वचनीय आश्चर्य, और अवर्णनीय आनन्द हो रहा था। इस प्रकार का दृश्य यदि रोमक-कलोसियम में भी न देखनेमें आया होगा। तुंगाला में पाली की आज्ञा से मेगेथेनियम द्वारा हत्या अति साधारण बात थी। कभी भी ऐसा कोई आदमी नहीं सुना गया, जो इस काल-जन्तु पर विजयी हुआ हो। तुंगाला का अनुल्लंघनीय सनातन-रवाज था, कि जिसने अखाड़े में विजय प्राप्त की उसका अपराध क्षमा हुआ। वह अब नहीं मारा जा सकता। यह बात पाली के वश की भी नहीं थी। पाली को भी इस रवाज के सम्मुख वैसे ही सर झुकाना था, जैसे प्रत्येक तुंगालावासी को।

बादशाह के आसन के सामने अखाड़े में एक रस्सी की सीढ़ी लटकाई गई। फिर वही सफेद दाढ़ीवाला, पाली का मंत्री, नीचे उतरा। उसने बृहस्पति से उठनेके लिये कहा तथा बतलाया कि पाली तुमसे बात करना चाहते हैं। वे अब पाली के सम्मुख गये। अपनी स्वाभाविक निर्भीकता के साथ उन्होंने पूछा कि बादशाह की क्या इच्छा है।

पाली—'निस्सन्देह तुम एक महान् योद्धा हो। किन्तु एक और भी शक्ति है, जो कि शरीर और नसों की शक्तियों से बढ़ कर है और

वह मेरे पास है। आओ, कुछ अपने आदमियों के रीति रवाज की बात सुनाओ। मैं तुम्हें चीते की खाल पहिने देख रहा हूँ। हमारे देश में यह राजवंश का चिह्न है। जिस प्रकार से तुमने अपने आपको मुक्त किया है, उससे मैं समझता हूँ कि तुम राजवंशी हो।'

वृहस्पति–'मैं राजा नहीं हूँ, बिलकुल साधारण मनुष्य हूँ और अपना तथा अपने साथियों का प्राणदान चाहता हूँ।'

पाली–'तुमने अपने जीवन को बचा लिया, जैसा कि लोगों का जयघोष बतला रहा था। किन्तु तुम्हें यह स्मरण रहना चाहिये, कि तुम मेरे दास हो, तुम्हें स्वतंत्रता नहीं प्राप्त हुई है। तुम और तुम्हारे साथी मेरे बन्दी रहेंगे। कई कारण हैं, जिनसे ऐसा करना अनिवार्य है। हाँ, तो अब तुम्हें यहाँ की भाषा पहले सीखनी है। मैं तुम्हें वचन देता हूँ कि तुम्हारे साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया जायगा। मुझे विश्वास है कि तुम्हारे ऐसा आदमी मुझे अपने राज्य-शासन में कम सहायता न देगा। अब तुम अपने मित्रों के पास जा सकते हो।'

पाली ने पीतल के दरवाजे की ओर संकेत किया। वृहस्पति ने सर झुकाया और उस तरफ चल दिये, जहाँ सत्य और नरेन्द्र नरसिंह के साथ बन्द थे। एक मिनट बाद नरेन्द्र अपने दोनों हाथों से आवेष्टित कर उनसे मिल रहे थे। उन्होंने कहा–

'आह! मेरे पूज्य देवता और प्रियतम मित्र! मेरा आनन्द-फेतु तोड़ कर बाहर हो रहा है। मेरा दिल बच्चों की भांति रोने को अधीर हो रहा है। तुमने क्या कुछ–फ़रट को कनफ़्टर के टुकड़े फ़े मार डाला! अब भी मुझे यह फ़्वप्न-फ़ा मालूम होता है।'

नरसिंह जमीन पर बैठ गया था। उसने वृहस्पति के पैरों को अपनी कौली में ले लिया। सत्य दोनों हाथों को अपने हाथों में लेकर मुग्ध हो रहा था।

पाली का धर्मभाई

तुंगाला के शासक पाली के असाधारण व्यक्तित्व का समझना आसान नहीं है। मध्य अफ्रीका की सारी ही जंगली जातियों में यह प्रसिद्ध कहावत थी कि उसको मृतसंजीवनी बूटी मिली है। उसने उसका सेवन किया है, और उसी के कारण सौ वर्ष बाद भी वह इतना हृष्ट-पुष्ट है। किन्तु यह बात हमारे पर्यटकों के लिये प्रमाणित न थी। तो भी यह ठीक है कि पाली की अवस्था बहुत अधिक थी और वह बड़ा बलिष्ट और स्फूर्तिमान था।

देखने में पाली की अवस्था चालीस वर्ष जैसी मालूम होती थी। उसके शरीर में भीम का बल और जवानी की स्फूर्ति थी। इसमें तो सन्देह नहीं कि वह साठ वर्ष से कम का कदापि नहीं था। तथापि यह साधारण बात थी। साधारण बात यह थी, जिसे कि आगन्तुक भी एक बार उसके चेहरे पर दृष्टि डालने पर देखे बिना नहीं रह सकता था।

यद्यपि वह सब तरह से एक अफ्रीकन जंगली था, किन्तु उसका चेहरा एक अपूर्व मेधाविता,एक दृढ़ शक्ति को प्रदर्शित कर रहा था। उसका ललाट पूर्ण विकसित और मस्तिष्क का अग्रिम भाग परिपूर्ण था, जिसका कि असंस्कृत जातियों में पाया जाना कठिन है। उसका चेहरा क्रूर और पाशविक था, किन्तु यह उसकी आँखें थीं, जो बिना अपनी ओर आकृष्ट किये न रह सकती थीं।

ये आँखें हब्शियों की आँखों की भांति निस्तेज न थीं, पाली की तीक्ष्ण काली आँखें एक हेप्नाटिष्ट की आँखें थीं, जिनमें चुभ जाने की शक्ति थी। उनमें जगह-जगह रक्त-तन्तु दौड़ रहे थे और अक्सर थकी-सी जान पड़ती थीं। उनमें बिल्ली की आँखों की भांति असाधारण परिवर्तन की शक्ति थी। वह अपने कृष्ण नेत्र-बिन्दुओं को अपनी इच्छानुसार संकुचित, विकसित कर सकता था। कभी-कभी जब वह किसी अप्रिय वस्तु की ओर देखने

लगता था, तो उसकी पुतली छोटी होजाती थी, वैसे ही जैसे धूप में बिल्ली की। निस्सन्देह उसे अद्भूत मानसिक शक्ति तथा अनेक त्राटक सिद्धियाँ प्राप्त थीं, तभी तो उतनी दूर पर भी मरुवानी के ऊपर वैसा प्रभाव डाला।

इस भयानक शासक को समझने के लिये आवश्यक है उसकी प्रजा के आचार व्यवहार, रीति-रवाज को जानने की। तुंगाला लोग निस्सन्देह अफ्रीकन जंगली हैं। उनका सम्बन्ध पूर्वीय उन अफ्रीकन लड़ाकू जातियों से है, जो झीलोंवाले प्रदेश में रहती हैं। अधिकतर ये लोग गुफ़ाओं में रहते हैं, और यह शायद बहुतों को विश्वास दिलावे कि उनका सम्बन्ध बनचर और बौनों से है। किन्तु दूसरे प्रकार से विचार करने पर जान पड़ता है, कि उनका सम्बन्ध उन जंगली जातियों से कहीं उच्च संस्कृतिवाली नसल से है।

इस जाति की शारीरिक अवस्था ही केवल उत्तम नहीं है, बल्कि इसमें नर-भक्षण जैसे बहुत से क्रूर आचार भी नहीं हैं। एक विशेष बात यह भी है, कि वे लोग यत्किंचित्-पूजक भी नहीं हैं। यह मालूम हुआ वहाँ सिर्फ एक ही ओझा या झाड़-फूंक का चिकित्सक था, और यह था वही पाली जादूगर बादशाह, और वह भी यत्किंचित्पूजकों की भांति अनेक भयानक पूजा व्यवहार न रखता था। हेप्नाटिज्म--जिस पर उसका जन्मसिद्ध अधिकार था, को छोड़ वह और धोखा देनेवाली चालों द्वारा लोगों पर प्रभाव नहीं डालता था। यद्यपि तुंगाला लोग शैतान पर विश्वास रखते हैं, किन्तु यह भी अन्य अफ्रीकन जंगलियों की भांति नहीं। इससे यह जाना जा सकता है, कि उनका धर्म अन्य जंगलियों से कहीं अधिक उन्नत और विकसित था।

उनके धर्म पर विचार करने से जान पड़ता है कि उनका धर्म और कितने ही रीति-रवाज उन्हें उस संसर्ग से प्राप्त हुए हैं, जो कि शताब्दियों पूर्व किसी उच्च सभ्यतायुक्त जाति के सम्पर्क से उन्हें मिला है। बृहस्पति का इस विषय में और ही विचार है। उनका कहना है, कि यह लोग सहारा की मरुभूमि से आये हैं, जहाँ कि किसी समय बड़ी उर्वरा भूमि थी, उनका

कहना है कि अखाड़े के अन्दर खूंखार जानवरों से लड़ने का रवाज रोमक और कार्थेजीय जातियों या किसी अन्य प्राचीन जाति से इन्होंने लिया, या दाय भाग में पाया है। वे इस सिद्धान्त को मानने से इनकार करते हैं, कि तुंगाला उत्तरी अफ्रीका की उन जातियों में से हैं, जिन्हें कार्थेजीयों ने गुलाम बना रक्खा था, यह प्रसिद्ध है कि कितने ही हब्शी सैकड़ों वर्षों तक कार्थेज में रहते रहे। वहाँ उन्होंने एक प्राचीन सभ्य जाति के सुख-वैभव को देखा और वहाँ उन्होंने प्रधान जाति के अनेक आचार-विचारों का अनुकरण किया। हमारे सम्मुख अमेरिकन हब्शियों का उदाहरण हमें बतलाता है, कि कितनी आसानी और शीघ्रता से अफ्रीकन, किसी अच्छे दर्जे की सभ्यता को ग्रहण कर लेते हैं। यह सम्भव है कि कार्थेज के पतन के बाद तुंगाला लोग दक्षिण और सहारा के हरे मैदानों में आये। जब वह सूख गये, तो उन्होंने बन्तुओं की चढ़ाई के साथ दक्षिण की ओर का रास्ता लिया। यदि यह ठीक है, तो अवश्य उन्होंने अनेक रीति-रवाजों के साथ अपने धर्म को प्राचीन कार्थेज से ही ग्रहण किया।

बृहस्पति के विचारों के लिये सबसे पुष्ट प्रमाण था उस धर्म का रूप, जिसे तुङ्गाला मानते थे। वे मलक या उसके सदृश ही एक क्रूर देवता की उपासना करते थे और उसके नाम से असंख्य क्रूरतापूर्ण अत्याचार किये जाते थे। मलक सर्वभक्षक अग्नि देवता था, जो अपनी बलियों का अग्नि द्वारा जलाया जाना पसन्द करता था। सारे ही लड़के ललाट या गरदन के पिछले भाग पर जलती हुई रूई से दागे जाते थे। उनका धर्म बहु-देववाद था। उन बहुत से देवताओं में मलक सर्वश्रेष्ठ था। उसी के सम्मान में सुगन्ध जलाये जाते थे। उसी के सन्मान में उसकी यात्रा के दिन सारे तुङ्गाली अपने सुन्दर वस्त्र और आभूषणों से सज्जित होते थे। उस दिन वे तरह-तरह के कुण्डल, अंगद और मालाएं पहनते थे।

नगर के दक्षिणीय भाग में, एक चौरस शिखर वाले पर्वत के ऊपर इस जातीय देवता का मन्दिर था। यह एक खुला मन्दिर था, जिसके चारों ओर पत्थर की दीवारों का घिरावा था। अन्य छोटे देवताओं के लिये भी

यहाँ अनेक वेदियाँ और चबूतरे थे। किन्तु प्रमुख मूर्ति महाकाय मलक की थी, उसकी पूजा-अर्चा के लिये बीसियों पुजारी थे।

मूर्ति पत्थर की थी, जिसकी शकल मनुष्य की तथा पैर छितराये हुए एवं कन्धे पर पंख निकले थे। इसके पैर के पास एक भारी वेदी थी, जिस पर अग्नि अनवरत जला करती थी, इसके धुएं से मूर्ति का अनेक भाग कोयले की भांति काला हो गया था। अग्नि और वृष्टि का प्रभाव उस मूर्ति को कुरूप करने में इतना पड़ा था, कि उसका पहिचानना मुश्किल था। देखने से जान पड़ता था कि वह बड़े कौशलपूर्वक पत्थर से काटकर बनाई गई है; किन्तु अब वह सारा ही शिल्प-नैपुण्य लुप्त हो गया है, वह फौलाद की भांति काली और चिकनी दीख पड़ती थी। इन्हीं कारणों से अब प्राचीन समय की अपेक्षा वह अधिक कुरूप और भयंकर दिखाई पड़ती थी।

वृहस्पति ने अपने साथियों से कहा—' अगर इस देवता की परम्परा कार्थेज से नहीं आई है, तो कहाँ से तुङ्गाला ने इसे पाया ! निस्सन्देह, सारे अफ्रीका की किसी जाति में भी इनके खोज नहीं मिलते। निश्चय ही यह असभ्य हब्शी जाति में से हैं, और तब भी इन्होंने अपनी स्वाभाविक बालिशता और जोश को अब भी कायम रक्खा है।'

नरेन्द्र—'यह बिलकुल ठीक है, अनेक बातों में ये बच्चों की तरह हैं।'

वृहस्पति—'हाँ, ठीक इसीलिये कि ये हब्शी हैं। कहावत है—हब्शी अपने चमड़े को नहीं बदल सकता। यह भी बन्नू नसल की एक शाखा है, जैसे कि मातावल और जुलू, और इसलिये इनमें भी वैसे ही गुण-दोष हैं। खयाल करो, उस समय में जब कि संयुक्त राज्य अमेरिका में गुलामी बन्द न हुई थी, जबकि हब्शी लोगों ने सभ्यता को समझा नहीं था, किन्तु उसके रूप को देखा था। यदि उसी समय सारे सभ्य लोग वहाँ से हट जाते और केवल हब्शी ही वहाँ रह जाते, तो क्या होता ? वह लोग फिर अपने पुराने स्वभाव पर आते। तो भी उन्हें बहुत सी रीति-रस्म उस समय के अमेरिकनों

की याद रहतीं। यही बात तुंगाला लोगों के विषय में भी है। वे जन्म से अफ्रीकन हैं, रीति-रस्म, धर्म-कर्म में कार्थेजीय।'

यह वार्तालाप अखाड़े के विजय के कई सप्ताह बाद हुआ था। उस समय तीनों भारतीय और नरसिंह, नगर की प्रधान सड़क पर एक गुफा में सुखपूर्वक रक्खे गये थे। यहाँ उनके लिये जीवन की आवश्यक वस्तुओं से भी अधिक सुख-सामग्री एकत्रित की गई थी। उन्हें कुछ स्वतंत्रता भी दी गई थी। उनको अच्छा खाने को और अच्छा पहिनने को दिया जाता था। उन्हें हवा खाने और चहल-कदमी करने का भी अवसर दिया गया था, किन्तु उस समय भी पहरेवाले रखे गये थे। वृहस्पति, जो अब सब जगह जातीय वीर की भांति देखे जाते थे, अपना बाघम्बर पहिन सकते थे, किन्तु और लोगों के लिये वही चमड़े की तुंगाली लुङ्गी मिली थी, जिस पर शाही छाप थी। उनका मित्र मरुवानी अब पाली की आज्ञा से उनका शिक्षक नियुक्त हुआ था। उसका काम था, उन्हें तुंगाला-भाषा सिखाना। सत्यव्रत ने भी परिश्रम के साथ जल्दी उस भाषा की पर्याप्त योग्यता प्राप्त कर ली और वृहस्पति को तो उनके अनेक अफ्रीकन भाषाओं के ज्ञान ने बड़ी सहायता दी। थोड़े दिनों के बाद उस भाषा पर उनका अधिकार हो गया। किन्तु, नरेन्द्र ने बहुत कम उन्नति की। 'स' के उच्चारण की असमर्थता ने उनके रास्ते में और भी बाधा डाली, क्योंकि अन्य काफिर-भाषाओं की भांति तुंगाला में भी 'स' का अधिक प्रयोग था।

इन दिनों में पाली के विषय में उन्हें बहुत जानने का संयोग हुआ। कभी-कभी हवाखोरी के वक्त एक दो बार उन्हें उसके सामने जाने का मौका मिला था। पाली जहाँ कहीं जाता, उसके साथ बराबर दृढ़ शरीर-रक्षक और अनेक सरदार रहते थे। सभी शिर से पैर तक अस्त्र-शस्त्र से सजे रहते थे। दरवार का कायदा था कि समय-समय पर प्राग्-ऐतिहासिक जन्तु-वाली उत्तरीय घाटियों में जाकर शिकार खेलें।

इन दिनों मलक की प्रतिष्ठा में एक भारी त्योहार मनाया जाता था। सारा शहर छुट्टी मना रहा था, आसपास के देहातियों से सड़कें भर गई

थीं। सत्य और नरेन्द्र उन्हें देखकर बहुत हँसते थे। वे सीधे-सादे आदमी अमतुंगाली की गलियों, सड़कों और घरों को चकित होकर देख रहे थे। वे प्रत्येक नागरिक का स्वागत करते तथा उनसे अनेक प्रकार के प्रश्न पूछते थे।

त्योहार के समय सड़कें धर्माचार्यों और पुरोहितों से भी भरी थीं। यह लोग रक्त वस्त्र धारण किये हुए थे, और दो-दो तीन-तीन के झुंड में चौराहों पर बातचीत करते थे। ये पुरोहित बराबर मठों के अन्दर ही रहते थे और ऐसी ही यात्राओं और उत्सवों के समय उन्हें नगर में या सर्व-साधारण की बस्तियों में जाने दिया जाता था। उस समय उन्हें अनेक धार्मिक कृत्य सम्पादन करने होते थे। बन्दियों को—क्योंकि निस्सन्देह वह बन्दी थे—इजाजत नहीं थी कि वे उत्सव के कर्मकांड को देखें किन्तु शहर में होकर, निकलने वाले जुलूस को वे देख सकते थे।

यह कर्म-कांड शाम के बाद आरम्भ हुआ। मलक के चरण के पास मन्दिरवाले पर्वत पर एक भारी होली जलाई गई। नगर की प्रधान-प्रधान सड़कों से होकर जुलूस सीढ़ियों द्वारा पर्वत पर चढ़ा। इस जुलूस के आगे आगे अनेक सरदार थे जिसमें प्रत्येक के साथ एक-एक दास था। उनके बाद एक प्रकार की पालकी-सी थी, जिसके चारों कोनों पर की धूपदानियों से धुंआ निकल रहा था और इसे पुरोहितों ने अपने कन्धे पर उठाया था। उसके बाद ही प्रधान धर्माचार्य था, जिसकी दाढ़ी लम्बी तथा श्वेत, और चोगा ज़री का था। उसके पीछे बहुत से पुरोहित थे जिनमें से अधिकांश जवान तथा कुछ लड़के थे। उसके पीछे सशस्त्र सैनिकों से घिरा हुआ वह मनुष्य था जिसे आज बलि देना था। यह व्यक्ति एक स्त्री थी जो मरने के लिये जा रही थी और धार्मिक सम्बन्ध ने इस मृत्यु को भी उसके लिये प्रसन्नता की बात बना दी थी। आनन्द, प्रसन्नता और धार्मिक उत्साह सभी के चेहरों से प्रकट हो रहा था। वे सभी मुग्ध थे कितने ही भक्ति के मारे मूर्छित से हो रहे थे। कई अपनी छाती को पीट रहे थे, बालों को नोच रहे थे और विक्षिप्त से हो भूमि पर गिर रहे थे। जुलूस की हरावल

में पाली स्वयं एक प्रकार की गाड़ी पर बैठा था। उसे सैनिक खींच रहे थे। उसके चारों ओर एक मजबूत शरीर-रक्षक सेना थी। उसके चार सौ सशस्त्र सैनिकों में एक भी ६ फुट से कम का न था।

यह सौभाग्य की बात थी कि भारतीय पर्वत के बीभत्स कांड को देखने के लिये नहीं बुलाये गये। मालूम हुआ, सारी भीड़ ने मिलकर कोई गीत गाया, फिर इसके बाद बलिप्रदान हुआ। चारों ओर पूर्ण नीरवता थी और मंदिर की आग चारों ओर रात में प्रकाश कर रही थी। फिर अकस्मात् उन्होंने सैनिकों और दर्शकों का जयकार सुना। तब फिर जुलूस शहर को लौटा। पुरोहित पालकी को नगर के बाहर अपने मठ में ले गये।

इन सभी रस्मों में बृहस्पति ने प्राचीन कार्थेज के रस्मों की गंध देखी। इस समय तुंगाला पागल से हो गये। उनके बड़े-बड़े युद्ध-नृत्य रात-रात भर होते रहे। इस उत्सव के दूसरे दिन पाली ने बृहस्पति को मिलने के लिये बुला भेजा। बृहस्पति को वह उसी कमरे में उसी संगखारा के सिंहासन पर बैठा मिला।

पाली—'मैंने सुना है, कि तुमने बहुत दूर-दूर तक की यात्रा की है। तुम्हारा ज्ञान बहुत विस्तृत है और तुम्हें लोग ज्ञानी कहते हैं?'

बृहस्पति जानते थे, कि उनका और उनके साथियों का जीवन बादशाह ही की कृपा से बचा। वे इसके लिये अपने हृदय में कृतज्ञ थे। उन्होंने नम्रतापूर्वक कहा:—

'यह हो सकता है, किन्तु दक्षिण की जंगली जातियों में यह बात बहुत मशहूर है, कि आपने बहुत दूर दूर तक की यात्रा की है। आपने बहुत सा पृथ्वी का भाग देखा है।'

पाली ने मुस्कुराते हुए कहा—'ठीक, राजगद्दी पर बैठने के पहिले जंगल के बड़े बड़े खतरनाक पहाड़ों में मैं बहुत दिन तक घूमता रहा। ऐसे स्थानों में गया जहाँ बहुत कम आदमी जाने की हिम्मत करते हैं। वहीं मैंने बहुत सा ज्ञान, तथा वह बात भी सीखी जिसे जादू कहा जाता है। मैंने अपनी जवानी में बहुत दूर-दूर तक की यात्रा की है। मैं तुम लोगों तथा श्वेतांग

लोगों के बारे में भी जानता हूँ। मुझे यह भी मालूम है कि तुम लोगों ने सदा अफ्रीकनों के साथ भाईचारा रखा। तुम लोगों ने कभी श्वेतांगों की भांति कृष्णांगों पर अत्याचार नहीं किया। हर एक जगह अफ्रीकनों ने अपनी स्वतंत्रता के युद्ध में भारतीयों से मदद पाई। किन्तु तुम्हें मालूम है, प्रत्येक गल्ले में काली भेड़ें भी होती हैं। इसीलिये मुझे तुम पर सन्देह था। अच्छा तो सुनो, मुझे बहुत कुछ तुमसे कहना है। पाली तुंगाला पर राज्य करता है। आसपास के राजा भी उसे कर देते हैं। यहाँ शासन करते हुए मुझे—चाहे विश्वास करो या नहीं—पाँच सौ चन्द्रमा हो गये। अच्छा, यदि मैं तुम्हें मुक्त कर दूँ, तो तुम क्या करोगे?'

वृहस्पति—'आपकी कृपा से हम फिर अपने बन्धु-बान्धवों में जा मिलेंगे।'

पाली—'और फिर श्वेतांगों की चाल तुम लोग भी तो न चलोगे? उनका तो यही काम होता कि वे पाली और उसके राज्य की खबर, समुद्र पार जहाँ उनका बड़ा श्वेतांग राजा रहता है, ले जाते—फिर पाली की सम्पत्ति, तुंगाला की भूमि और वैभव को सुनते ही, वहाँ से एक भारी सेना पाली और तुंगाला को नष्ट करने के लिये आती। मैं इसके विषय में जरा भी सन्देह नहीं रखता, यह अवश्य होता। जंगलों में पहिले एक आदमी आता है, जिसके एक हाथ में एक पुस्तक और दूसरे हाथ में क्रास (सलीब) होता है। वह श्वेतांगों के खुदा के विषय में बात-चीत करता है। फिर एक बनिया आता है, जिसका काम बेचना, बदलना और लूटना है। और तब आग्नेय शस्त्रों और अन्य युद्ध के सामान के साथ सैनिक आते हैं। पुनः सबसे अन्त में एक आदमी आता है, जिसके शिर पर सफेद टोप और हाथ में छड़ी होती है। वह कहता है 'मैं समुद्र पार के उस बड़े राजा की ओर से तुम पर शासन करूँगा।' लोग तुमको ज्ञानी कहते हैं, बताओ, क्या मेरी यह बात गलत है?'

वृहस्पति—'बिलकुल सच्ची, बादशाह सलामत।'

वृहस्पति इन सारी सच्चाइयों को खूब जानते थे। उनसे श्वेतांग जातियों का रत्ती भर कोई रहस्य छिपा नहीं था।

पाली—'यद्यपि तुम्हारी जाति ने अपने स्वार्थ के लिये ऐसा कभी नहीं किया है। तो भी इससे तुमको भी इनकार न होगा कि दूसरों के स्वार्थ—नीच स्वार्थ के लिये तुम्हारे भाइयों ने दूसरी जातियों की गरदन में गुलामी का तौक जरूर डाला है और यही कारण है कि मैं तुम्हें अपने राज्य से बाहर न जाने दूंगा। तुम आये थे अपनी खुशी से और रहना होगा मेरी खुशी से। मैंने तुम्हारे प्राणों को छोड़ दिया। अथवा मैंने क्या छोड़ा, तुमने अपनी वीरता से इस देश के कानून के अनुसार अपने आपको मृत्यु से बचा लिया। लेकिन तुम्हारे दोस्तों का वध क्यों न किया जाय?'

वृहस्पति थोड़ी देर चुप रहे। उन्होंने सोचा कि इसका उत्तर जल्दी में नहीं दिया जा सकता। इस पर प्रथम विचार करना होगा।

पाली—'अच्छा, तो अपने प्रश्न का उत्तर मैं स्वयं देता हूँ। मैंने उन्हें इसलिये नहीं मरवाया कि ऐसा करने से तुम मेरे शत्रु हो जाते। तुम्हारे ऐसे महान् योद्धा, अद्भुत वीर से मैं मित्रता चाहता हूँ—अपना धर्म-भाई या रक्त-भाई बनाना चाहता हूँ।'

वृहस्पति फिर इस पर सोचने लगे। उनके सम्मुख प्रश्न गम्भीर था। अन्त में उन्होंने कहा—'जंगल की जातियों के धर्म-भ्रातृत्व या रक्त-भ्रातृत्व के विषय में मुझे कुछ ज्ञान है। कांगो के अनेक सरदार मुझे अपना धर्मभाई गिनते हैं। लेकिन तो भी मैं यह जानना चाहता हूँ कि आपके धर्म-भ्रातृत्व का अर्थ क्या है?'

पाली—'इसका मतलब है, हम लोगों ने शपथ कर ली कि हम एक दूसरे के लिये प्राण तक दे देंगे, इसका अर्थ है कि हम एक दूसरे की विपत्ति सम्पत्ति में साथ रहेंगे—अर्थात् तुम्हारा मित्र मेरा मित्र होगा और तुम्हारा शत्रु मेरा शत्रु। इसका अर्थ है कि यदि तुम्हें मेरी सहायता अपेक्षित होगी तो मेरी बाँह, मेरा हथियार—मेरा सब कुछ तुम्हारे लिये तैयार रहेगा और जब मुझे तुम्हारी सहायता अपेक्षित होगी तो तुम भी उसे देने से इनकार न कर सकोगे। अब हे ज्ञानी, तुम्हारा उत्तर इसके विषय में मुझे चाहिये। वह मेरे लिये सबसे अधिक वाञ्छनीय बात है।'

वृहस्पति बड़ी मुश्किल में पड़ गये । उन्हें इस प्रश्न का उत्तर साधारण न जान पड़ा । न जाने इसके कारण उन्हें कितने खाईं और गड़हों में गिरना पड़े । कैसे दुष्कृत्यों में हाथ डालना पड़े । किन्तु अन्त में उन्हें मालूम हो गया कि अस्वीकार करना असम्भव है । इनकार का मतलब है, अपने साथियों को मलक के लिये बलिदान देना—यद्यपि अपने हाथ से नहीं । उन्होंने उन सारी बातों में एक बात साफ़ देखी; तुम्हारा मित्र मेरा मित्र होगा ।

वृहस्पति—'मैं स्वीकार करता हूँ । मैं अपने रक्त को बादशाह के रक्त से मिश्रित होने दूंगा और वृहस्पति मिश्र पाली की दक्षिण भुजा होगा ।'

उसी रात को चाँदनी में सत्यव्रत और नरेन्द्र ने मन्दिरवाले पर्वत पर उस प्रकांड मूर्ति की छाया में एक अद्‌भुत और अत्यन्त प्रभावशाली दृश्य देखा ।

प्रधान धर्माचार्य और तुंगाला के प्रधान-प्रधान सरदारों के सम्मुख वृहस्पति मिश्र ने एक तीक्ष्ण भाले की नोक से पाली के दाहिने हाथ की एक नाड़ी को खोल दिया, इसी प्रकार पाली ने वृहस्पति के दाहिने हाथ की एक नाड़ी को खोल दिया । जब खून बह कर अँगुली के द्वारा गिरने लगा, तो उसे एक कटोरे में ले लिया गया । फिर दोनों का यह सम्मिलित रक्त आग पर रख कर उबाला गया । तब जादूगर बादशाह पाली और वैज्ञानिक पर्यटक वृहस्पति मिश्र धर्मभाई बने ।

षड्यंत्री

इसके बाद तीनों भारतीयों और उनके साथियों को प्रथम से भी अधिक स्वतंत्रता मिली। वे अब अमतुंगाली और उसके आस-पास जहाँ चाहें, वहाँ रक्षकों के साथ घूम सकते थे। मरुवानी अब भी उनके साथ ही रहता था। वह वृहस्पति का इतना भक्त हो गया था, कि उसने पाली से बराबर उनके पास रहने की आज्ञा ले ली थी।

इन महीनों में उन्हें वहाँ के लोगों के अनेक विचित्र राह-रस्म मालूम हुए। कई सप्ताहों के अध्ययन के बाद सत्यव्रत तुंगाला भाषा में बहुत अच्छी तरह बोलने लगा, और नरेन्द्र भी बहुत कुछ समझने लगे। अब वे अपने मिलने-जुलने वालों से भली प्रकार बात कर सकते थे। उन्हें बहुत सी ज्ञातव्य बातें भी उस विचित्र देश और जाति के विषय में मालूम हुईं तुंगाला लोग स्वयं कार्थेज के बारे में कुछ नहीं जानते थे। हाँ, यह बात परम्परा से उनमें अवश्य चली आती थी कि उनके पूर्वजों ने प्राचीन समय में उत्तर के बड़े मैदान से एक विचित्र देश पर चढ़ाई की थी। यद्यपि यह सारा अनुभव अत्यन्त मनोरंजक था, उनके साथ का बर्त्ताव भी बहुत अच्छा था, किन्तु बहुत समय नहीं बीतने पाया कि उन्हें जान पड़ने लगा हम अपने देश से दूर, एक जंगली देश में बंदी हैं। उनके ऊपर सदा तैनात रहनेवाला रक्षक और भी उन्हें क्षण-क्षण उनकी इस अवस्था को स्मरण दिला रहा था।

वृहस्पति बादशाह के धर्मभाई थे, इसलिये उनके लिये और भी रियायतें थीं जो कि उनके साथियों को मुयस्सर न थीं। एक दो बार तो वे पाली के साथ दूर के पहाड़ों पर शिकार खेलने के लिये भी गये थे। उन्हें किसी प्रकार का वाचाबद्ध नहीं किया गया था, क्योंकि पाली निस्सन्देह जानता था कि वे अपने अनुभवरहित साथियों को छोड़ कर अकेले नहीं जा सकते। तो भी बादशाह को अनुमान होने लगा कि कैदी भागने वाले हैं।

यह बात, निस्सन्देह थी भी ऐसी ही। शायद ही कोई ऐसा दिन जाता होगा, जब उनके मध्य में भागने की चर्चा न होती हो। नरेन्द्र को तो, यह इतनी लम्बी अकर्मण्यता और भी खटकती थी।

नरेन्द्र—'जान पड़ता है, हमें फ़दा के लिये यहाँ रहना है। उफ़ने हमें फ़ाफ़ कह दिया, कि वह हमें यहाँ फ़े नहीं जाने देना चाहता। हम भेड़ नहीं हैं, जो इफ़ प्रकार उद्योगरहित होकर यहाँ मरने के लिये पड़े रहेंगे। यदि हमें आजन्म कालापानी हुआ भी है तो भी हमें अपनी आजादी के लिये एक वार जान की बाजी लगानी पड़ेगी।'

सत्य—'मैं आपकी बात को अक्षर अक्षर स्वीकार करता हूँ। यदि कभी भागने का अवसर आया, तो मैं इसके लिये अपने जीवन को संकट में डालने के लिये पहिला आदमी हूंगा।

वृहस्पति कई मिनट चुप रहे। जान पड़ता था यह प्रश्न उनके मन में उलटा-पलटा जा रहा था। तब बोले—

मैं बड़ी भयानक स्थिति में हूँ। तुम नहीं जानते, काफिर जातियों में धर्म-भ्रातृता का कितान पवित्र अर्थ है। तुम्हें समझना चाहिये मैं कभी भी धर्मभाई नहीं बनना चाहता था। किन्तु तुम्हारे प्राणों के लिये मुझे मजबूर होना पड़ा। शायद यह कहा जाय, कि मैं शपथ को इतना अपने ऊपर बन्धन रखनेवाला क्यों समझता हूँ। लेकिन मैं तब भी उस शपथ से अपने आपको बंधा मानता हूँ। यह एक प्रतिष्ठा, आत्म-सम्मान का प्रश्न है। मैं खूब जानता हूँ, रक्तप्रिय पाली भी अपनी शपथ से हट नहीं सकता। वह अपने वचन को तोड़ने की जगह मर जाना अच्छा समझेगा। तो भी तुम्हारे साथ भाग चलने में कोई बाधा नहीं है; किन्तु, यदि हम तीनों पकड़े गये तो राजा का धर्मभाई होने से मेरा तो कुछ न होगा, किन्तु तुम दोनों मार डाले जाओगे।'

नरेन्द्र—'आह, यह तो ठीक है। किन्तु मैं नहीं फ़मझता, कि यह भय हमें अपने इरादे फ़े बाज रख फ़केगा।'

सत्यव्रत—'तुम देख नहीं रहे हो, वह अब हमारी ओर से निश्चित

हो गया है, अथवा बेपरवाह है, तभी तो प्रति सप्ताह पहरेवाले हमारे ऊपर से उठा लिये जाते हैं। अब केवल चार रक्षक हैं– मरुवानी को गिनने की आवश्यकता नहीं। क्या वह जानता नहीं कि हमारे लिये इससे आसानी होगी।'

वृहस्पति–'सो तो ठीक। किन्तु सबसे अधिक भयंकर और कठिन तो इन जंगलों का पार करना है जो कि पाली के राज्य को चारों ओर से घेरे हुए हैं। देख नहीं रहे हो, हम चारों ओर जंगलों से घिरे हुए हैं। जिस रास्ते से हम लोग आये हैं, उसी से लौटना बहुत ही मुश्किल और आपद्ग्रस्त है तो भी उसे छोड़ दूसरा हमारे लिये रास्ता नहीं है। कम से कम हम अरुंगा घाटी तक का रास्ता जानते हैं। यदि सौभाग्य से हम अपने उस वृक्ष तक पहुँच गये। तो वहाँ से जंगलों द्वारा शायद कोई रास्ता मिल जाय। किन्तु, मुश्किल है पहाड़ों को पार करना। हमें फिर उन्हीं प्राग्-ऐतिहासिक राक्षसों का सामना करना पड़ेगा और फिर उसके बाद पाली के योद्धाओं की सेना भी हमारा पीछा करने में पीछे न रहेगी।'

नरेन्द्र–'कोई बड़ी बात नहीं। आजन्म कारावाफ़ फ़े मैं तो फ़ांफ़ी पफ़न्द करता हूँ। फ़ायद नरफ़िंह भी मेरी राय फ़े फ़हमत होगा। हम उफ़फ़े पूछ फ़कते हैं। और मरुवानी ! मुझे पूरा विफ़्वाफ़ है कि अपने देफ़ में रहने की जगह हमारे फ़ाथ रहना ही पफ़न्द करेगा।'

सत्यव्रत–'यदि यह बात है, तब तो हम पांच हो जायँगे। और ऐसी अवस्था में, हम कल निकल सकते हैं। हमको बस अपने रक्षकों पर क़ाबू पाना होगा। और यह आसान है। जब उनमें से दो रात को सोये हों तो उनको पकड़ कर बाँध डालना कोई मुश्किल नहीं। और बाकी दो, पाँच के सामने क्या हैं ? तब रात ही में हम रवाना हो सकते हैं। हमें भाषा का पर्याप्त ज्ञान है। अतः रास्ते के पहरेवालों से भी हम अपने आपको बचा सकते हैं। हमारा भागना सुबह से पहिले नहीं मालूम हो सकता और उस समय तक हम कई घंटों का रास्ता तय कर पाये रहेंगे।'

वृहस्पति–'यह सब बिलकुल ठीक है। तब भी यदि तुम मेरी सम्मति

चाहते हो तो इस पर दुबारा गौर करो। पाली को मूर्ख मत समझो। म दृढ़तापूर्वक कह सकता हूँ कि हमें अभी कुछ दिन और प्रतीक्षा करनी चाहिये। जल्दी से काम खराब हो जायगा।'

नरेन्द्र—'लेकिन क्या आजकल के अवफ़र फ़े बढ़कर कभी हमें दूफ़रा फ़मय मिल फ़कता है। मुझे नहीं आफ़ा है कि हम कभी इफ़फ़े अच्छी अवफ़्था में हो फ़केंगे।'

वृहस्पति—'सो हमें मालूम नहीं, यह मैं स्पष्ट कहता हूँ। मैं पाली से डरता हूँ। वह बड़ी असाधारण योग्यता का आदमी है। हम भविष्य की बात कैसे जान सकते हैं? कुछ भी हो सकता है। शायद स्वयं पाली ही मर जाये।'

सत्यव्रत—'यदि हम इसकी प्रतीक्षा करेंगे तो हमें मृत्यु-दिन तक इसकी प्रतीक्षा करनी होगी। शायद वह सचमुच जादूगर हो, जिसके लिये कहा जाता है कि वह अभी सैकड़ों वर्ष जियेगा। मेरी अपनी राय तो है, कल ही यहाँ से प्रस्थान कर देना।'

नरेन्द्र—'और मेरी भी।'

वृहस्पति—'अच्छा, तो तुम इस पर सम्मति लो। और मैं वचन देता हूँ कि जो कुछ भी बहुसम्मति से निश्चय होगा, मैं उसके लिये तैयार हूँ। इस समय यद्यपि एक ओर तुम दो आदमी हो, और एक ओर मैं अकेला, किन्तु अभी नरसिंह है। यदि वह तुम्हारी राय को कबूल करके खतरे में पड़ना पसन्द करता है; तो अरुंगा घाटी में पहुँचने के लिये मैं तुम्हारा अगुआ होने के लिये तैयार हूँ। लेकिन मैं तुम्हें सजग कर दिये देता हूँ, कि भविष्य के विषय में मुझे जरा भी विश्वास नहीं है।'

उसी रात को यह बात—बकुंगा-निवासी नरसिंह जो कांगो नदी के मुहाने पर बोमा शहर को छोड़ने के समय ही से नरेन्द्र के साथ था—के सामने रखी गई। उसने एक क्षण के लिये भी आगा-पीछा न कर खतरे में पड़ने के लिये अपनी पूरी राय दी। वृहस्पति ने सब कुछ ऊँचा-नीचा समझाया,

किन्तु इन खतरों के भय से उसे अपनी सुनहरी मातृभूमि का आकर्षण अधिक जोरावर मालूम हुआ।

बृहस्पति ने कहा—'बहुत अच्छा। अब बहस की कोई आवश्यकता नहीं, मेरा प्रस्ताव गिर गया। किन्तु इससे मेरे अन्दर कोई फरक नहीं आ सकता। मैं तन मन से इस काम के लिये तैयार हूँ। बहुसम्मति का आदर, परिणाम भयानक होने पर भी हमारे लिये अनिवार्य है। क्योंकि उससे अच्छा काम का कोई उपाय नहीं। हाँ, एक बात—कब हमें रवाना होना चाहिये ? अभी एक सप्ताह के लिये और रुक जाना हमारे लिये अच्छा होगा। अगले सप्ताह में चन्द्रमा रात्रि के अन्तिम प्रहर में उगने लगेगा और रात्रि के पहिले तीन पहर बिलकुल अँधेरे रहेंगे। यदि एकादशी, द्वादशी तक चलें तो अच्छा होगा।'

नरेन्द्र—'हाँ, यह ठीक। हमें अगले सप्ताह तक प्रतीक्षा करनी चाहिये और हमें अपने यात्रा-प्रबन्ध के लिये भी इतने समय की जरूरत है।'

इस प्रकार ज्ञानी के निर्णय के विरुद्ध पासा पड़ गया। उन्होंने अमतुंगाली नगर और जादूगर बादशाह के फन्दे से निकल भागने का प्रयत्न निश्चित कर लिया।

अपने इस निश्चय को मरुवानी के सामने कहने में पहिले उन्हें कुछ हिचकिचाहट सी मालूम हुई। कहने पर मरुवानी ने सभी बातें बड़ी सावधानी से सुनी, किन्तु वह अपने सच्चे भाव को छिपा न सका। वह इस समय बड़े असमंजस में था। एक ओर वृहस्पति के लिये उसके हृदय में अगाध प्रेम और दूसरी ओर पाली का भय था। वह उनको अकेला जाने देने के लिये भी तैयार न था। इतने दिनों तक बराबर के साथ-साथ रहने और एक दूसरे के प्रेमपूर्वक व्यवहार ने सबको एक दृढ़ प्रेम-बन्धन में बाँध दिया था और सबसे बढ़कर मरुवानी खूब जानता था कि उसका प्राण वृहस्पति का दिया हुआ है। यदि उसे स्वतंत्रता से अपनी सम्मति जाहिर करने का मौका होता तो अवश्य वह खुले दिल से उनके साथ चलने की सारी आपत्तियों और कष्टों का स्वागत करता। किन्तु उसके हृदय में पाली का भय था, जिसने उसे शारीरिक, मानसिक दोनों तरह से अपना दास बना रखा था। वह इस रहस्यमय देश के उन अनेक आदमियों में से था, जिनकी इच्छा तक अपने हाथ में न थी।

मरुवानी अभी तैयार न था। तो भी उसने रहस्य को छिपा रखने और तीन दिन तक इस पर विचार करने के लिये कहा। इन तीनों दिनों में वह शायद ही कभी एक शब्द बोला होगा। वह घंटों गाल पर हाथ रखे चुपचाप बैठा रहता था, जैसे किसी घोर विचार में हो। अन्त में वह वृहस्पति के पास आया, उसके ओठ बन्द थे, उसके रोम-रोम से दृढ़ता प्रकट हो रही थी। उसने कहा—'मेरे स्वामी, मैंने सब पर भली प्रकार विचार कर लिया, मैंने अपने दिल में फैसला कर लिया। मैं स्वीकार करता हूँ, कि यहाँ गलती हो सकती है। भविष्य बड़ा भयंकर है क्योंकि मैं जानता हूँ कि पाली सर्वशक्तिमान् है।'

वृहस्पति (हँस कर)—'हाँ, तो तुम मुझसे अधिक आशावादी नहीं

हो। तथापि मरुवानी, मैं साहस को पसन्द करता हूँ, क्योंकि मनुष्य कभी पूर्णतया अपने भविष्य का मालिक नहीं हो सकता। यदि वह जगत की ओर ध्यान करे, तो उसे जान पड़ेगा कि वह अकिंचन, नगण्य वस्तु है। यदि अपने को उन पर्वतों से मिलावे जिनके शिखर सर्वदा हिमाच्छादित रहते हैं, अथवा रात्रि में चमकते हुए किसी तारे से मिलावे, तो उसे जान पड़ेगा कि उनके सम्मुख वह चींटी भी नहीं है। उनके सम्मुख वह कुछ नहीं है। तब फिर वह कैसे परिस्थिति का स्वामी हो सकता है?'

मरुवानी–'यह ठीक है, मेरे स्वामी, यह मैं जानता हूँ, तभी तो मैंने निश्चय किया है, कि तुम्हारी आपत्तियों में मैं भी साझीदार बनूं; मैं भी अपने शिर को हाथ पर रखकर तुम्हारा साथ दूंगा। मैं ऐसे भी मृतक हूँ, और यदि आप न रहते, तो उस समय मरा ही था। इसलिये मेरा जीवन तुम्हारे लिये है, जो इच्छा हो आप उससे करा सकते हैं। यह हो सकता है कि यदि मैं आपके साथ चलूं, आपको मदद दे सकूं, तो मैं आपके ऋण से उऋण हो सकूंगा। मैं देख रहा हूँ कि आप खतरे में जा रहे हैं, और जब मेरे स्वामी खतरे में जायँ, तो मेरा कर्त्तव्य है, कि जो कुछ हो सके उनकी मदद करूँ।'

वृहस्पति ने उस पुरुष की ओर देखा, उसके नेत्रों में एक प्रकार का प्रकाश था; जो प्रेम को प्रकाशित कर रहा था। उसके इन भावों ने उन पर असीम प्रभाव डाला। उन्होंने देखा कि, इन असभ्य या अर्द्धसभ्य जंगलियों में भी ऐसे आदमी हैं, जो प्रेम के लिये, कृतज्ञता के लिये सर्वस्व अर्पण कर सकते हैं।

इस प्रकार पाँचों आदमी तैयार हो गये। चूंकि उन्हें सब बातें भली प्रकार मालूम थीं, अतः उनके भागने में बहुत कम बाधक हो सकते थे। उनके ऊपर चार पहरे वाले थे, जो दो-दो करके बदलते रहते थे। इस प्रकार हर समय वहाँ दो सिपाही मौजूद रहते थे, और वे प्रायः सोते नहीं थे। उन लोगों ने पहिले ही अपनी राइफलें और गोली-बारूद को पा लिया था, क्योंकि पाली जानता था, वह शहर में उनका प्रयोग करने की हिम्मत नहीं

करेंगे। वास्तव में वृहस्पति के कहने पर पाली ने उनकी सभी चीजें उनके पास भेज दी थीं। उन्होंने अपनी सभी चीजों को साथ ले जाने का निश्चय कर लिया था।

मरुवानी ने स्वीकार किया कि उनके निकलने का वही एक रास्ता है, जिसके द्वारा वे आये हैं। उसने बतलाया कि पाली के राज्य के बीच से निकलने का प्रयत्न फ़जूल है। वृहस्पति की आशा—कि वह इधर से पश्चिम जाते-जाते पोर्तुगीजों की भूमि में चले जायँगे निर्मूल निकली।

ऐसे देश में दूरी मीलों से नापना ठीक नहीं है, क्योंकि हो सकता है, पाँच मील का मार्ग पाँच दिन या पाँच महीनों में भी पूरा हो सके। इस पर भी पोर्तुगीज-भूमि, सीधे-सीधे भी कई सौ मील थी। पश्चिम में और भी सुनसान तृणरहित पर्वत थे, जिनकी ऊँचाई इतनी थी, कि उन्हें पार करना असम्भव था। उसके बाद भयानक कान्तार, जहाँ वृक्षों के नीचे की घासें भी इतनी घनी और ऊँची हैं, कि उन्हें काटकर भी आदमी पार नहीं जा सकता। यदि ऐसा होता भी तो भी वहाँ बड़ी-बड़ी जोंके, भयंकर जलसर्प रहते थे, जिनसे बचकर निकलना असम्भव था।

यह बड़ी विचित्र बात थी कि मरुवानी को उस सुरंग का कुछ भी पता न था, जो कि दोनों शरटों की झील को अरुंगा घाटी से मिलाती है। यद्यपि मरुवानी ने अनेक बार उस झील की परिक्रमा की थी, किन्तु वह छोटा सूराख हरी घासों और अन्य जलीय वनस्पतियों से ढका रहने से उसे कभी नहीं दिखाई पड़ा था। यदि वे किसी प्रकार सुरंग तक पहुँच सके, तो बहुत अधिक सुरक्षित हो जायँगे। एक तो पाली और उसके सैनिकों के हाथ से वे निकल जायँगे और दूसरे आगे उन्हें भीषण शरट जैसे भयानक जंतुओं का भय भी अपेक्षाकृत बहुत कम रह जायगा।

वृहस्पति—'निस्सन्देह ये बड़े-बड़े भयानक जन्तु अधिकतर इधर ही हैं। वे सुरंग में नहीं जा सकते, क्योंकि उसमें मुश्किल से हमारी नाव भर का रास्ता था।'

नरेन्द्र—'तो इफ़फ़े मुझे जान पड़ता है, यहाँ इन जन्तुओं के दो उप-निवेफ़ हैं, एक फ़ुरंग के इफ़ ओर और दूफ़रा उफ़ ओर ।'

वृहस्पति—'मैं इससे सहमत नहीं हूँ । प्रधान उपनिवेश सुरंग से इसी तरफ है । यद्यपि इस पार और उस पार दोनों ओर की झीलों का पानी अत्यन्त पंकिल है, तो भी तुमने देखा कि सुरंग में धार तीव्र थी । इसलिये बहुत कुछ सम्भव है कि इन जानवरों का कोई नया बच्चा उस धार में पड़-कर उस पार बह जाता हो और शायद इससे भी अधिक सम्भव है कि अंडा ही वह जाता हो, क्योंकि अन्य सरीसृपों की भांति आशा है, ये भी अंडा ही देते होंगे । ये अंडे बहते-बहते उस पार की झील के किनारे पर पहुँच जाते होंगे, जहाँ सूर्य की गरमी द्वारा ये फूट जाते होंगे, फिर बच्चा निकल आता होगा । इस विषय में एक वड़ी मनोरंजक बात तुम्हें सुनाता हूँ । पक्षी —जो आरम्भ में इन्हीं सरीसृपों ही से विकसित होकर उत्पन्न हुए हैं, अपने जन्मदाताओं से अधिक चतुर तथा मानसिक तौर पर अधिक विकसित हैं, क्योंकि जहाँ सरीसृप अपने अंडे बच्चों की कुछ भी परवाह नहीं करते, अंडे को जहाँ कहीं देकर फिर वे उनका खोज नहीं करते, वहाँ पक्षी अपने अंडे के साथ बड़ा प्रेम वात्सल्य रखते हैं । तुम जब इस पर ध्यान दोगे तो मालूम होगा, कि गरमी का मौसम उनका केवल बच्चों की परवरिश के लिये है । मादा हफ़्तों अपने अंडों पर बैठा करती है, कभी-कभी अपने प्राण को हथेली पर रख कर भी और इस सारे समय नर को दोनों प्राणियों के खान-पान के लिये परिश्रम करना होता है । जब बच्चे अंडों से निकल आते हैं, तो तुम देखोगे, नर और मादा दोनों ही अपने नवजात शिशुओं के लिये आराम की सामग्री एकत्रित करने में अत्यन्त व्यस्त रहते हैं । उस वक्त वे गाना नाचना सब भूल जाते हैं । किन्तु शरट— बल्कि सभी सरीसृप—अपने अंडे बच्चों की जरा भी परवाह नहीं करते । वे कहीं पंक या रेत पर अंडे दे देते हैं, और फिर उन्हें भाग्य और सूर्य पर सेने के लिये छोड़ देते हैं, वे जरा भी परवाह नहीं करते कि अण्डे फूटे कि नहीं । वे कदापि अपने बच्चों को नहीं खिलाते । बल्कि यदि कहीं संयोग लगा, तो वे अपने बच्चों

ही को अपने पेट में रखने से बाज नहीं आते । ये प्रकांड प्राग्-ऐतिहासिक जन्तु आजकल के—सरीसृप—मगर और सर्प के सदृश ही हैं । अतः इनके अंडों का भाग्य संयोग पर अवलंबित है, और यह निश्चय है कि कभी-कभी कोई-कोई अण्डा सुरंग के रास्ते से बहकर नीचे वाली झील में पहुँच जाता होगा ।'

नरेन्द्र—'ओफ़, मैं कभी न चाहूँगा कि भगवान् मुझे फ़रट योनि में भेजें । जहाँ मातृप्रेम, फ़न्ततिप्रेम का कहीं पृथान ही नहीं है ।'

सत्यव्रत (हँसकर)—'हाँ, मैं समझ रहा हूँ, आप क्या कह रहे हैं । यह आसान काम नहीं है । फिर उस घाटी तक लौट कर जाना मुझे आसान नहीं मालूम होता ।'

वृहस्पति—'और हमें नई डेंगी बनानी होगी, बहुत सम्भव है अब हम अपनी पुरानी डेंगी को न पा सकें ।'

इस वक्त मरुवानी ने बतलाया कि सिपाही हमारी बात सुन रहा होगा, क्योंकि वह बहुत दूर नहीं है । फिर उसने धीरे से कहा:—

'मैं नाव को खोज ला सकूंगा । मैं उस स्थान को भली प्रकार जानता हूँ, जहाँ उसे छिपाया गया था ।'

वृहस्पति—'यही मेरे लिये भारी बात थी । मैं बराबर सोच रहा था कि यदि हम उसे न पा सके और दूसरी नाव बनानी पड़ी, तो अवश्य हमारा पीछा करने वाले हमें पकड़ लेंगे । इस बात को तुम्हें भली प्रकार समझ रखना चाहिये, कि हमें हाथ से निकलते देख पाली चुपचाप नहीं बैठा रहेगा । उसे अपने अधिकार का बड़ा ममत्व है । उसने मुझे स्पष्ट कहा है कि वह कदापि नहीं चाहता कि उसके राज्य के विषय में बाह्य जगत कुछ भी जाने ।'

इस वार्त्तालाप के बाद वह तीसरा दिन था जिस दिन उन्होंने भागना निश्चय किया था । आवश्यक प्रबन्ध चुपके-चुपके सब कर लिया गया था । उस रात तीन बजे के बाद चन्द्रमा उगने वाले थे । उन्होंने निश्चय किया कि अँधेरा होने के बाद जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी निकल जाना चाहिये । जैसे ही शाम की हवाखोरी से लौट कर आने पर पहिले सिपाहियों

का पहरा बदले और सोने का वक्त आये वैसे ही चल देना होगा। जितना ही पहिले वे चलेंगे उतना ही पाली के भेजे सैनिकों को वे पीछे छोड़ जायँगे।'

उनके भागने का ढंग कोई बहुत असाधारण नहीं था। वह बहुत सीधा सादा था। पाँचों आदमियों ने--जिनमें चार अत्यन्त मजबूत थे एकाएक दोनों सन्तरियों को पकड़ कर जमीन पर पटक दिया। उस समय वे विवश थे कि कुछ न कर सकते थे। बात करते-करते उन्होंने उनका हाथ, पैर, मुंह सब बाँध कर छोड़ दिया। बाकी दो सोये हुए सिपाहियों को पकड़ कर बाँधने में तो और आसानी थी। कुछ ही मिनटों के अन्दर वे प्रधान सड़क पर जाने के लिये स्वतंत्र हो गये।

उन्होंने अपने सामान को ले जाने के लिये पहिले ही से एक छोटी ठेलागाड़ी खोज रखी थी। यह उनकी गुफा में थी। सिपाहियों को बाँध चुकने के बाद बृहस्पति ने अपने पुराने बाघम्बर को उतार दिया और एक तुंगाली लुङ्गी पहिन ली। पाँचो ही आदमी अमतुंगाली के नागरिकों की पोशाक में थे। वहाँ अँधेरा भी इतना था कि उसमें उन्हें कोई पहिचान नहीं सकता था।

वे नगर के दक्षिणी द्वार तक बिना किसी आपत्ति के पहुँच गये, किन्तु वहाँ सन्तरी ने ललकारा। यह मरुवानी था जिसने बड़ी बहादुरी से आगे होकर कहा, कि हम शाही शरीर-रक्षक सेना के आदमी हैं किसी गुप्त कर्त्तव्य से बाहर जा रहे हैं। सन्तरी ने लुङ्गी पर शाही निशान देखते ही विश्वास करके उन्हें तुरन्त छोड़ दिया। दस मिनट के बाद ही वे अगले पहाड़ों में पहुँच गये। अब वे उसी रास्ते पर थे जिससे वे उस दिन अमतुंगाली लाये गये थे। जब उन्होंने देखा कि ऊँचाई बढ़ती जा रही है तो झट सभों ने अपनी-अपनी गठरी को--जिसे उन्होंने पहिले से बाँध रखा था--ले लिया। उनका इरादा था जहाँ तक हो शीघ्रता के साथ दूर पहाड़ों में चन्द्रोदय के पूर्व ही पहुँच जायँ। सभी लोग बड़े जोर के साथ आगे बढ़ रहे थे। सत्यव्रत, जो सबसे छोटा था वह भी दोनों हट्टे-कट्टे अफ्रीकनों से पीछे न था।

और बात यह भी थी कि अब उसे पहिले से आधा ही बोझा मिला था और अब पहिले ही के बोझा को ले चलने वाले पाँच आदमी थे।

जैसे-जैसे वे ऊपर चढ़ रहे थे उससे आशा थी कि ऊपर ठंडा होगा किन्तु वहाँ उससे विरुद्ध था। गरमी घाटी से भी तीव्र थी, हवा का पता न था, पसीने के मारे लोग तरबतर थे। मालूम होता था जैसे नीची छत वाली किसी गुफा में हैं। उन्हें उस वक्त साँस लेना भी कठिन मालूम हो रहा था। अनेक बार उन्हें अपने मुंह पर से पसीना पोंछने के लिये खड़ा हो जाना पड़ा। पहाड़ की चढ़ाई, हवा का रुकना, गरमी की अधिकता इन सारे ही प्राकृतिक विरोधों के रहते हुए भी वे लोग चन्द्रोदय के समय बहुत दूर चले आये थे। किन्तु आकाश के मेघाच्छन्न होने से चन्द्रोदय हुआ ही नहीं अँधेरा अब भी वैसा ही था और यह तब तक रहा जब तक प्राची दिशा में सूर्य का आगमन न हुआ। प्रातःकाल के वक्त वे एक झरने के किनारे थोड़ा दम लेने के लिये ठहर गये। सब ने दांतुवन कुल्ला करके एक हलका सा जलपान किया। बीस मिनट के भीतर ही भीतर वे लोग फिर अपने रास्ते पर थे। वे ऐसे ही बराबर बिना दम लिये चलते गये, किन्तु दोपहर के वक्त धूप असह्य हो उठी इसलिये एक वृक्ष की छाया में घण्टा भर विश्राम लेने के लिये मजबूर हुए।

इस सारे ही दिन उन्हें सूर्य का दर्शन न हुआ। जान पड़ता था सारी ही पर्वतमाला वाष्प स्नान कर रही है। नंगी चोटियों पर बादल छाया हुआ था। चट्टानों पर तरल बूंदें पड़ी हुई थीं।

और तब रात्रि एकाएक आ पड़ी, दश शब्द भी जितनी देर में आदमी न बोल सके, उतनी देर में चारों ओर अन्धेरा छा गया, सच-मुच वह रात्रि की काली छाया को, जलप्लावन की भांति घाटियों से पहाड़ों की चोटियों की ओर बढ़ते लोग देख सकते थे। अब सत्यव्रत और नरेन्द्र दोनों ही बहुत थक गये थे। उनकी जाँघ भर गई थी। पैर अब बिना दर्द के जरा भी ऊपर नहीं उठाया जा सकता था, जान पड़ता था, एक एक पैर में हजारों मन का बोझ बँधा हुआ है। अब उनका खड़ा होना भी मुश्किल

था। सब लोगों ने अपनी-अपनी गठरी जमीन पर रख दी। उन्होंने लकड़ियाँ इकट्ठा करके एक पत्थर पर जो किनारे-किनारे ऊँचा और बीच में नीचा था—धुनी लगा दी। पत्ररहित घास दोनों ओर उगी हुई थी उसकी डालियाँ ऐंठी हुई थीं। वहाँ कहीं भी जीवन का लक्षण नहीं दिखाई पड़ता था। छोटे-छोटे पहाड़ी पौधे भी वहाँ न थे, जो अन्यत्र चट्टानों के दरारों में बहुतायत से पाये जाते हैं। तरकारी की देगची आग पर चढ़ी, बृहस्पति ने अपना बोझ नीचे रखा और कहा—

'मैं समझता हूँ, यह काम बड़े मुश्किल का है। अभी हमारे सामने एक और खाईं है, जिसमें शायद हमें गिर जाना पड़े। जो कुछ भी हो, हम निश्चिन्ततापूर्वक कह सकते हैं, कि हमारी पहिली छलाँग पूरी हो गई, हम लोग शहर से बहुत दूर हैं। लेकिन तुम्हें निश्चित रहना चाहिये, कि हमारे पीछा करने वाले हमारे पीछे बड़े जोर से धावा कर रहे हैं। हम उनसे दस घंटा पहिले चले हैं, इसलिये अभी वे कितने ही मील हमसे पीछे हैं। मैं समझता हूँ, यहाँ हमें सन्तरी रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। यह बिलकुल असम्भव है, कि अगले चन्द घंटों में हम तक कोई पहुँच सके; और इसके अतिरिक्त हम सभी लोगों को भली प्रकार सो लेना चाहिये; क्योंकि मैं चाहता हूँ, कि हम एक बजे से फिर यात्रा शुरू कर दें।'

जैसे ही उनका भोजन पक गया और उन्होंने खाना खा लिया, वैसे ही उन्होंने आग को राख से ढाक दिया। इसका कारण ? एक तो उससे पता लग जाने का भय था, दूसरे गरमी इतनी अधिक थी कि वहाँ आग की कोई आवश्यकता ही न थी। टेम्परेचर बढ़ते-बढ़ते उस तूफान की हद तक पहुँच गया था जो कि नातिशीतोष्ण प्रदेश में देखे ही नहीं जाते। जैसे ही पाँचों आदमी गाढ़ निद्रा में सोये, वैसे ही आँधी आरम्भ हो गई।

यह आँधी उससे भी बढ़कर थी, जिसे इन्होंने सुरंग के मुंह पर देखी थी, इसलिये कि इसके साथ पानी न था। वे लोग उस समय खतरे से भरी हुई उस पर्वतमाला की शिखर-रेखा पर थे, जहाँ क्षण-क्षण पर तड़कने वाली बिजली के गिरने का बड़ा भय था। उनके आस-पास के चट्टान लोह-पत्थर

के थे, जिनसे चिनगारी लोहार की अहरन की भांति निकल रही थी। नरसिंह, मरुवानी सभी डर गये थे, यहाँ तक कि वृहस्पति का जी भी दहले बिना नहीं रहा।

वृहस्पति ने कहा—'मनुष्य की अकिंचनता का खयाल आये बिना नहीं रहता, ऐसे तूफानों को देख कर यदि हमारा शत्रु मनुष्य है, तो हम उससे बचने के लिये अपनी बुद्धि, अपने बल, अपनी हिम्मत पर भरोसा कर सकते हैं। किन्तु यहाँ, इस प्रकृति की महत्तम शक्ति के सम्मुख, हमारी ताकत, हमारी हिम्मत कुछ भी नहीं है।'

इस भयानक तूफ़ान में, जब कि बिजली की चमक से उस अँधेरी रात में दिन का सा प्रकाश हो रहा था, मरुवानी भयभीत हो उठ खड़ा हुआ और वह अपने दोनों हाथों को अमतुंगाली की ओर करके कहने लगा—'पाली, पाली ! बादशाह मुझे बुलाता है ! मैं लौटता हूँ।'

यह सुनते ही वृहस्पति झट उठ कर खड़े हो गये। मरुवानी ने एक निर्बल और शुष्क स्वर में कहा था; किन्तु तो भी उस तूफ़ानी हल्ले में उसका एक-एक शब्द स्पष्ट सुनाई देता था।

'पाली मुझे बुलाता है। मैं जा रहा हूँ मेरे मालिक। मैं सदा तेरी आज्ञा मानूंगा।'

वृहस्पति ने कहा—'हमें इसे बन्द करना चाहिये। पहिले की भांति फिर यह हेप्नोटाइज्ड हो रहा है। यदि आवश्यकता हुई तो जब तक कि वह पाली के प्रभाव के घेरे से बाहर नहीं निकल जाता हमें इसे जबरदस्ती घसीट कर आगे ले चलना चाहिये।'

वह उठ कर मरुवानी के पास गये और उन्होंने उसके कन्धे पर हाथ रखा, किन्तु उसने अलग हटा दिया। उन्होंने चाहा कि जबरदस्ती उसे आगे घसीट ले जायँ, किन्तु वह जानते थे, कि मरुवानी इतना मजबूत है कि अकेले यह नहीं किया जा सकता।

वृहस्पति ने चिल्ला कर कहा—'आओ ! नरेन्द्र, सत्य आओ हाथ लगाओ तो ! हमें अपनी सारी ताकत लगा देनी चाहिये।' उन्हें अत्यन्त

आश्चर्य हुआ, जब कि उन्होंने देखा कि किसी ने उत्तर नहीं दिया। फिर उन्होंने बकुंगा भाषा में चिल्ला कर कहा—'नरसिंह, इधर आओ, जल्दी जल्दी।'

अब भी उन्हें उत्तर न मिला। उन्हें इसलिये भी अत्यन्त आश्चर्य हुआ, क्योंकि उस समय आँधी भी रुक गई थी। मरुवानी को वहीं छोड़ कर वे उस जगह गये, जहाँ उन्होंने अपने तीनों साथियों को बैठे छोड़ा था। थोड़ी ही देर पूर्व उन्होंने उन्हें जागते देखा था बल्कि उनसे बातचीत भी की थी। वे अच्छी तरह से इसे जानते थे कि तूफ़ान ने उन्हें जगा दिया था। तथापि अब एक के पास एक—तीनों घोर निद्रा में मग्न थे।

नीचे घुटनों के बल बैठ उन्होंने नरेन्द्र को पकड़ कर हिलाया। वह बड़े जोर से चिल्लाये—'नरेन्द्र, भगवान् के वास्ते उठो भी।'

उनके आश्चर्य और भय का ठिकाना न था जब कि उसमें कोई जीवन का चिह्न न दिखाई पड़ा। सारे हिलाने-डुलाने का फल यही था कि नरेन्द्र का शिर कभी आगे कभी पीछे गिरता था। जान पड़ता था वहाँ न हड्डियाँ हैं न नसें। वृहस्पति ने फिर नरसिंह की ओर मुंह किया। उन्होंने बिजली का मशाल जला कर देखा। वह खूब सो रहा था उसका मुख आधा बन्द और आधा खुला था। आँखों की सफेदी दिखाई पड़ती थी। नरेन्द्र की अपेक्षा भी अधिक जोर से उसे हिलाया किन्तु व्यर्थ। अन्तिम दृश्य और भी निराशामय था। सत्यव्रत घोर निद्रा में बेहोश था।

वृहस्पति उन्हें छोड़ फिर मरुवानी के पास गये। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ जब उन्होंने देखा कि वह चला गया है। अब वह नरेन्द्र को अपने पूरे जोर से उठा कर चिल्लाये—'नरेन्द्र! नरेन्द्र! उठो, बताओ तो यह क्या बात है!'

पाँच मिनट तक वह पागलों की भांति इस सारे ही प्रयत्न में लगे रहे, किन्तु वहाँ जीवन का चिह्न तक नहीं जान पड़ता था। उन्होंने सन्दिग्ध हृदय से नरेन्द्र के फेफड़े पर हाथ रखा, देखा; वह बहुत तीव्र गति से चल रहा था।

बृहस्पति वहाँ से अलग हो गये। उन्होंने अपनी आँखों पर हाथ फेरा—निद्रा ! यह निद्रा नहीं है। यह जादू है। और इस सबका अर्थ—मृत्यु !'

तब वे अपने मुख को दो हथेलियों में लेकर बैठ गये। इस समय फिर तूफान में नया जीवन सा आया जान पड़ा। उनके शिर पर एक पीला विद्युत्प्रकाश चमक उठा। उन्होंने देखा, वे चारों वैसे ही ह्प्नाटिज़्म की मूर्छा में पड़े हैं। उनका दिमाग पाली के जादू से चकनाचूर हो गया है।

———

सोनेवाले जागे

बृहस्पति मिश्र वह आदमी न थे, जो कुछ देर भी अकर्मण्य रह सकते। वह झट उठ खड़े हुए, और एक बार फिर उन्होंने अपने साथियों को देखा। मूर्छा के अनेक भेद हैं; निद्रा, मृत्यु, गश, और अनेक प्रकार का आतंक। यह समझना बेवकूफी होती कि नरसिंह, नरेन्द्र, सत्यव्रत तीनों ही एक ही साथ एक प्रकार के आतंक से मूर्छित हो गये। इसके अतिरिक्त वहाँ मरु-वानी का प्रत्यक्ष प्रमाण था। तीनों हेप्नाटिक मूर्छा में डाल दिये गये थे।

यद्यपि वहाँ उसका और कोई अर्थ नहीं लग सकता था, तो भी बृहस्पति को इसका विश्वास करना कठिन मालूम होता था। वह जानते थे कि पाली एक असाधारण शक्तिशाली हेप्नाटिस्ट है, किंतु यह मेस्मरिज्म विद्या का अद्वितीय उदाहरण था। पाली का नाम जादूगर बादशाह ठीक है। यह आश्चर्य की बात न थी, जो उसके पड़ोसी जंगली लोग विश्वास करते थे, कि उसके राज्य का एक-एक अंगुल जादू से भरा है। उस मनुष्य में ऐसी अद्वितीय मानसिक शक्ति थी, जिसका अन्यत्र उदाहरण नहीं मिल सकता था।

बृहस्पति ने अपनी पेटी से अपना शिकारी चाकू निकाला। उससे उन्होंने एक चौरस पत्थर पर एक बाण का चिह्न बना दिया, जिसका कि शिर उत्तर की ओर था। उन्हें अपनी बन्दूक ढूंढ़ पाने में देरी न हुई। फिर अपने झोरे को उन्होंने कारतूसों से भर लिया। झोरे को कन्धे पर लटका लिया, और दोनों हाथ में बन्दूक को ले लिया। फिर उन्होंने उस रास्ते को पकड़ा, जिससे वे यहाँ तक आये थे।

उस अंधेरी तूफानी रात में दूसरा कोई भी आगे बढ़ने की हिम्मत न करता। उनकी लम्बी दाढ़ी उस वक्त उड़ रही थी। वे दाँत बन्द करके बिजली की रोशनी के सहारे आगे बढ़ रहे थे। यद्यपि वे बहुत धीरे-धीरे

आगे बढ़ रहे थे, तथापि उन्होंने रास्ते को ठीक पकड़े रखा। थोड़ी देर में तूफान रुकने लगा, बिजली की कड़कड़ाहट पूर्व की ओर जाती जान पड़ी।

कुछ देर और बीतने पर बादल आकाश से हट गया, और उस रात को पहिले-पहिल तारे दिखाई पड़े। बृहस्पति अब भी जल्दी-जल्दी आगे बढ़ रहे थे। उनके मन में जान पड़ता था, कोई निश्चित लक्ष्य है; और यह सचमुच था भी। उनके दिल में उस स्थान का खयाल आया, जिसे सूर्यास्त से जरा ही पहिले वे लोग पार हुए थे और वे चाहते थे, कि अमतुंगाली से आने वालों के वहाँ पहुँचने से पहिले ही वे वहाँ पहुँच जायें।

अब पास वाले पर्वत के शिखर पर से हँसिया के रूप में चन्द्रमा उदय हुआ। चार बजे से ऊपर का समय होगा। सूर्योदय अब आसन्न था। उनके दिल में खयाल होता था कि क्या पाली के आदमी इस आँधी के समय में भी बराबर चलते रहे होंगे। यदि वे ठहर गये होंगे, तो वे अब भी उत्तर-पश्चिम दिशा में कई मील पीछे होंगे। यदि वे बराबर चलते रहे होंगे तो उस स्थान से बहुत दूर न होंगे, जहाँ पहुँचना है।

प्रकृति का ऐसा मनोहर दृश्य बहुत कम है, जैसा पर्वत में उषा का और वह उषा भी अद्वितीय है, जो तूफानी रात के बाद होती है। यद्यपि वर्षा न हुई, तो भी वायु-मंडल ठंडा हो गया था! वह प्रचंड आँधी अब बिलकुल लुप्त हो गई थी, और उसके स्थान पर नीचे की उपत्यका से शीतल मन्द समीर आ रही थी। जब पर्याप्त उजाला हो गया, और चीजें दिखाई देने लगीं, तो बृहस्पति ने अपने चारों ओर की भूमि को पहिचाना। अब उन्हें आधा मील और जाना था। उन्हें जगह का अच्छी प्रकार स्मरण था, और यह इसलिये भी कि यह उनका तीसरी बार वहाँ आना था।

वह ठीक उसी समय अपने अभीष्ट स्थान पर पहुँचे जब कि सूर्योदय हो रहा था। जगह उनके बड़े ही काम की थी। यह कुछ हाथ लम्बा पतला दर्रा था, जिसके दोनों ओर चिकने और ऊँचे पर्वत खड़े थे। उसके बिलकुल नीचे ढालू उपत्यका थी। वे वहाँ से बहुत दूर तक देख सकते थे। अगल बगल की पहाड़ियाँ इतनी खड़ी थीं कि ऊपर चढ़ना एक प्रकार से असम्भव

था। वे बिलकुल नङ्गी थीं किसी प्रकार की घास या वनस्पति उन पर न थी, यद्यपि बीच-बीच में बरसाती पानी के द्वारा कटे रास्ते थे। सब कुछ देखने से साफ़ जान पड़ता था कि इस जगह अकेला आदमी भी एक अच्छी आधुनिक रायफल और पर्याप्त गोली बारूद के साथ सैकड़ों आदमियों का मुकाबिला कर सकता है।

वृहस्पति ने अपनी हथेलियों से आँखें मलीं और एक बार घाटी की ओर नजर दौड़ायी। बहुत दूर आदमियों का झुंड एक ही पंक्ति में आ रहा था। उस घुमाऊ रास्ते पर वे लोग उतनी ऊँचाई और दूर से पतले मालूम होते थे। वृहस्पति भूमि पर बैठ गये, और उनके आने की प्रतीक्षा करने लगे।

यद्यपि वे मजबूत थे तो भी थकावट की निर्बलता को अनुभव कर रहे थे। जब सूर्य कुछ और ऊपर उठे और धूप तीव्र हुई तो उन पर और सुस्ती आने लगी। वे बड़ी आसानी से वहाँ सो गये होते। उन्होंने फिर नीचे की ओर देखा; अब भी पाली के सैनिक काफी दूर थे। उन्होंने आँखें मूंद लीं और इरादा कर लिया कि प्रति दस मिनट पर देखना होगा। यद्यपि वे कई घण्टों से नहीं सोये थे तो भी जंगल के जीवन ने उन्हें अपने आपका स्वामी बनना सिखाया था। वह अच्छी तरह जानते थे कि यदि ऐसा नहीं किया तो बहुत जल्द गाढ़ निद्रा में चले जायँगे।

वे कुछ ही मिनट तक इस अवस्था में रहें होंगे कि किसी के पैर की आहट नजदीक से आती जान पड़ी। एक क्षण में उनका हाथ बन्दूक पर था। और एक क्षण बाद बिलकुल खड़े। उन्होंने अपने सामने मरुवानी को देखा। मरुवानी दक्षिण से आया था इससे मालूम हुआ कि अधंकार में वृहस्पति बिना उसे देखे ही आगे बढ़ आये थे।

वह सुप्तचर की भांति चल रहा था। उसकी चाल धीमी थी। उसकी आँखें विस्फारित थीं किन्तु पुतलियां चलती न थीं, वे सीधी आगे की ओर थीं जिससे जान पड़ता था कि वे कुछ नहीं देख रही हैं। तथापि उसका कदम ठीक स्थान पर ठीक से पड़ रहा था वह एक क्षण के लिये भी हिच-

किचाता या लड़खड़ाता न था। वह वृहस्पति को बिना देखे ही दर्रे से आगे बढ़ गया होता; लेकिन उसी समय पर्यटक ने हाथ बढ़ा कर उसकी गरदन पकड़ लिया। उसे झटका देकर पीछे हटाया और चिल्ला कर कहा— 'मरुबानी! पागल तुम मुझे नहीं देख रहे हो?'

उस आदमी ने विरोध नहीं किया, उसने अपने आपको उनके हाथ में रुके रहने दिया। बड़े बलपूर्वक वृहस्पति ने उसे नीचे पकड़ कर लिटा दिया। वह वहाँ चुपचाप लम्बा पड़ रहा। उसकी आँखें अब भी पूरी खुलीं हुई घूरती सी जान पड़ती थीं।

वृहस्पति ने घाटी की ओर देखा। पाली के सैनिक अब भी दूर थे। उन्होंने अपने हाथों को उठाया और उसे दाढ़ी पर फेरना शुरू किया। वे गम्भीर विचार में मग्न थे।

'यदि मैं इस अभागे को जाने देता, तो अवश्य यह वध-स्थान ही पर पहुँचता। पाली एक सेकेण्ड के लिये भी इसे अब जीवित नहीं देख सकता। तथापि मैं क्या कर सकता हूँ। मैं थोड़ा बहुत मेस्मरिज्म जानता हूँ किन्तु मैंने सुना है कि हेप्नाटिक मूर्छित का जबरदस्ती उठाना भयानक है।'

मरुबानी धरती पर निश्चल पड़ा था और एक प्रकार से बेहोश था। उसमें भारी शारीरिक क्षति के लक्षण दिखाई पड़ रहे थे। उसके ललाट पर अनेक स्वेद-कण थे। वह इतना हाँफ रहा था जैसे बहुत दूर से दौड़ा आ रहा हो। जब वृहस्पति ने पहले-पहल देखा तो वह बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था उसकी चाल श्मशान यात्रा की सी थी।

वृहस्पति ने बैठ कर उसकी आँखों को बन्द कर दिया। उन्होंने कुछ देर पलकों को बन्द करके पकड़े रखा। थोड़ी देर बाद जान पड़ा वह स्वयं बिना किसी सहायता के मुंदी रहेंगी। धीरे-धीरे उसका हाँफना भी बन्द हो गया; अब श्वास नियमपूर्वक चलने लगी। जान पड़ रहा था वह सो रहा है। वृहस्पति ने घाटी की ओर झांका। अब पाली के सैनिक गोली की दौर के अन्दर थे।

उन्होंने मरुबानी की कलाई पकड़ी, नाड़ी दृढ़तापूर्वक चल रही थी।

उसने करवट बदली थी। वृहस्पति ने अपने ओठों को उसके कानों के पास ले जाकर कहा—'मरुवानी'।

तीन बार धीरे-धीरे जब उसका नाम दुहराया, तो उसने धीरे से आँखें खोलीं, और नजर डाली।

वह एकदम चकित और भयभीत-सा जान पड़ा; यह स्पष्ट दिखाई पड़ रहा था। वह कहाँ है; इसे नहीं जानता। क्या हुआ; इसकी उसे कुछ खबर नहीं थी।

उसने पूछा—'मैं कहाँ हूँ।' फिर उसने वृहस्पति को पहिचाना, 'मेरे स्वामी!'

वृहस्पति ने मुस्कराते हुए कहा—'सचमुच मैं तुम्हारा स्वामी हूँ? मैं इसे सच नहीं समझता मित्र मरुवानी। एक कहावत है, कि प्रत्येक आदमी के दो दिमाग होते हैं, जब एक सोता है तो दूसरा जागता है। मैं एक दिमाग का स्वामी हो सकता हूँ किन्तु दूसरे का स्वामी पाली है।

दर्रा

सत्यव्रत धीरे-धीरे होश में आया। उसे एक विचित्र प्रकार का अनुभव हुआ। निद्रा से जागने से यह जागना भिन्न ही था। एक बार अपने दो दाँतों को उखड़वाने के लिये उसे क्लोरोफार्म सूंघना पड़ा था, उसे इस घबराहट भरे दिमाग में वही बात स्मरण आने लगी।

पहले-पहल उसे यह खयाल न हुआ, कि वह कहाँ है। उसे जान पड़ता था, कि उसकी चेतना का कुछ अंश उसके स्थूल शरीर से दूर कहीं तैर रहा है। वह यह नहीं कह सकता था, कि वह कहाँ गया था। वह स्वप्न में नहीं रहा था। कुछ देर तक कहने में बिलकुल असमर्थ रहा कि कितनी देर तक उसका मस्तिष्क रिक्त रहा। उसे एक बात का स्मरण अवश्य रहा कि कुछ मिनट पूर्व वह जादूगर बादशाह पाली के सम्मुख था।

वह अपनी जगह उठ बैठा उसने अपनी आँखों को मला। उसने फिर घबराहट भरी दृष्टि से अपने पास लम्बे पड़े हुए नरसिंह और नरेन्द्र की ओर देखा, अपने चारों ओर देखा, सामने उठे हुए पर्वत शिखरों को देखा, तब उसे मालूम हुआ, कि मैं कहाँ हूँ। उसने अस्पष्ट रूप से इसे भी स्मरण किया कि हुआ क्या। तूफान खतम हो गया। दिन का विस्तृत प्रकाश चारों ओर फैला हुआ था। यह दिन के आठ बजे का समय होगा क्योंकि सूर्य पर्वत पृष्ठ पर दिखाई पड़ रहे थे। उसका ध्यान एक प्रकार की आवाज से आकृष्ट हुआ।

मुंह फेर कर लड़के ने नरेन्द्र की ओर देखा। जान पड़ता था, वह एक अदृश्य शत्रु से लड़ रहा है। उसका शरीर सिकुड़ रहा था, उसके चेहरे पर बल पड़े हुए थे। वह बार-बार जम्हाई ले रहा था और एक दो बार उसने आँख थोड़ी-थोड़ी खोली किन्तु सफ़ेदी भर दिखाई पड़ती थी।

तब एकाएक वह बड़े जोर से चिल्ला उठा। उसने सिर्फ़ एक शब्द कहा था—'पाली !'

थोड़ी ही देर में वह भी उठ बैठा। फिर उसने सत्यव्रत की ओर देखा। वह कितनी ही देर तक न पहिचानते हुए सा देखता रहा। अन्त में वह फिर बोला, किन्तु अब की अपनी स्वाभाविक आवाज में—

'फ़त्य, मैं कहाँ हूँ ? क्या हुआ था ?'

सत्य—'मैं नहीं कह सकता। मैं स्वयं भी अर्द्ध-जागृत हूँ।'

नरेन्द्र—'अर्द्ध-जागृत ? मैं अवफ़्य फ़ोया था, तथापि मुझे यह फ़मझ नहीं पड़ता। फ़त्य, आओ फ़ोचें। हाँ, मुझे याद है यह पर्वत तो। हमने धुनी जलाई, फ़िर फ़ो गये। एक भारी तूफ़ान आया था। मुझे याद है। भयंकर तूफान। उफ़नें मुझे जगा दिया था। मुझे याद है, वृहफ़्पति कुछ कह रहे थे। किन्तु मुझे और कुछ याद नहीं है। वृहफ़्पति कहाँ हैं ?'

सत्य—'मुझे नहीं मालूम। मुझे जान पड़ता है, कोई भयानक घटना घटी है। बताओ, तुम स्वप्ना रहे थे क्या ? क्या तुम पाली के विषय में स्वप्न देख रहे थे ?'

नरेन्द्र—'पाली ! मुझे कुछ भी नहीं मालूम है पाली के बारे में। बहुत देर फ़े हमने उफ़े नहीं देखा।'

सत्य—'तो क्यों तुमने अभी उसका नाम लिया था ?'

नरेन्द्र—'मैंने कदापि नहीं उफ़का नाम लिया।'

सत्य—'तुमने लिया था। मैंने खूब अच्छी तरह स्पष्ट 'पाली' तुम्हारे मुंह से सुना है।'

नरेन्द्र—'तो मुझे उफ़का कुछ भी होफ़ नहीं। फ़त्य, मैं जरूर फ़ोया रहा होऊँगा।'

इसी समय एक बार और पाली का नाम ऊँचे स्वर में सुनाई दिया। यह आवाज सारी दक्षिणी घाटी में प्रतिध्वनित हो रही थी। जान पड़ा सुनसान नंगे पहाड़ स्वयं उस भयंकर जादूगर का नाम चिल्ला रहे हैं। नरेन्द्र और सत्य दोनों ने उसी समय नरसिंह की ओर देखा, वह जमीन पर पड़ा था। वह तीन बार 'पाली', 'पाली' चिल्लाया था और तीनों बार प्रातःकाल की उस नीरवता को भंग करती हुई उसकी आवाज सारी पार्वत्य

उपत्यका में गूंजने लगी थी। जान पड़ता था, वह अत्यन्त व्यथित है। उसने पहले एक ओर करवट बदली और फिर दूसरी। जान पड़ता था वह उठने की कोशिश कर रहा है। दोनों ही भारतीय उसकी ओर बड़े आश्चर्य से देख रहे थे। उनकी समझ में नहीं आता था कि क्या करें। सत्य के ऊपर एक भयानक आतंक छा गया था। वह इस सारे रहस्य का कुछ भी अर्थ न समझता था। वह स्तब्ध, निश्चल वहीं पड़ा रहा। यह सभी अद्भुत अनिर्वचनीय एक माया थी।

नरसिंह बहुत देर के बाद होश में आया। उसकी सारी ही गति एक भयंकर व्यथा प्रकाशित कर रही थी। वह दाँत पीस रहा था। उसके मुंह से फेन निकल रहा था। और जब वह भी अपने होश में आ गया तो अपने अन्य दोनों साथियों की भांति ही उसे भी सब विस्मृत हो गया। उसे इसका कुछ भी पता न था कि वह कहाँ है।

नरेन्द्र ने कुछ आन्तरिक पीड़ा अनुभव करते हुए कहा—'यह फ़भी मेरे लिये रहफ़्य है। और मेरा प्रफ़्न उत्तर बिना ही रहा। कहाँ हैं बृहफ़्पति और मरुवानी ? यहाँ उनकी विद्यमानता का कोई चिह्न नहीं है और यह क्या हुआ—बृहफ़्पति की बन्दूक कहाँ गई !'

उन्होंने देखा सचमुच बृहस्पति की बन्दूक वहाँ कहीं नहीं है।

सत्य—'वह कदापि हमें छोड़ कर नहीं जा सकते, यद्यपि मरुवानी ऐसा कर सकता था। ओफ़ ! मैंने उस बात को याद नहीं किया था। तुमने देखा नहीं, उसने कैसे हमारे साथ विश्वासघात किया था, कैसे वह पाली द्वारा हेप्नाटाइज्ड हो गया था ? और अब मुझे अस्पष्ट रूप से जान पड़ता है, कि वैसी ही बात रात भी हुई है।'

नरेन्द्र—'आह ! हाँ मुझे याद है ! मरुवानी उठ खड़ा हुआ था, और जान पड़ता था, जादूगर फ़े कुछ बोल रहा है। उफ़ी फ़मय फ़े मेरे ऊपर एक प्रकार का आलफ़्य-फ़ा छाने लगा। मैं तुरन्त फ़ो नहीं गया। जान पड़ता था, मेरी चेतना-फ़क्ति पर धीरे-धीरे पर्दा पड़ता जा रहा है। आह !

फ़त्य, जान पड़ा जैफे मैं बिलकुल एक दूफ़रे जगत् में उठा ले जाया गया हूँ—मुझे नहीं मालूम कहाँ।'

सत्य—'तो, हम दोनों भी हेप्नाटाइज्ड हो गये थे, क्यों?'

नरेन्द्र—'फ़त्य, तुम और मैं दोनों ही एक हेप्नाटिक मूर्छा में थे। मुझे इफ़में अब जरा भी फ़न्देह नहीं है। यद्यपि यह फ़ोचने में बड़ा भयंकर जान पड़ता है, किन्तु यही फ़त्य है। हमें अफ़ली जड़ पकड़नी चाहिये और और नरफ़िह भी उफ़ी झोली का चट्टा-बट्टा है। किन्तु हम अपने फ़मय को बात में व्यर्थ खो रहे हैं। पाली ने हमारे ऊपर अधिकार जमा कर, यहाँ छोड़ दिया था, जिफ़में कि पीछा करने वाले हमें पकड़ लें, और तुम्हें याद रखना चाहिये, कि यदि बृहफ़्पति होफ़ में रहे थे, और उन्होंने इफ़ फ़ारी कैफ़ियत को देखा होगा, तो वह कभी बेकार बैठे रहेंगे?'

सत्य—'बिना कोई सन्देश दिये, वह हमें न छोड़े होंगे।'

नरेन्द्र—'हाँ, यह बिलकुल ठीक है। देखो तो फ़त्य, चारों ओर। एक मिनट भी इफ़ वक्त बेकार बैठना महान् अनिफ़्टकर होगा।'

नरेन्द्र और सत्यव्रत दोनों ने आस-पास खोजना आरम्भ किया। नरसिंह अब भी भली प्रकार होश में न आया था। वह पागलों की भांति निश्चेष्ट बैठा था। उसका मुंह खुला हुआ था। उसका नीचे का स्थूल ओष्ठ नीचे गिर गया था। उसकी आँखें इतनी अधिक खुली थीं कि जान पड़ता था निकल कर गिर पड़ेंगी, तब भी जान पड़ता था कि वह कुछ नहीं देख रहा है। वह अपने सामने की नंगी चट्टान को घूर रहा था।

सत्य ने चिल्लाकर कहा—'ओह, यह देखो! यहाँ पत्थर में एक तीर बना हुआ है। इसमें बिलकुल सन्देह नहीं, कि यह बृहस्पति का काम है, क्योंकि यह शिकारी चाकू भी यहाँ पड़ा हुआ है।'

नरेन्द्र (पास जाकर)—'यह उत्तर की ओर दिखाता है, उत्तर की ओर इफ़का फ़िर है, अतः जान पड़ता है, वह इधर गये हैं। मैं फ़मझता हूँ, फ़त्य, वह अकेले ही हमारे पीछा करनेवालों के फ़म्मुख गये हैं! मैं ठीक

कहता हूँ, एक मिनट भी देरी करना अब अच्छा नहीं है । फ़ायद अब भी हम बहुत पीछे हों ।'

किसी-किसी समय कुमार नरेन्द्र बड़े कार्य तत्पर हो जाते थे । उनका मस्तिष्क उस समय बहुत शीघ्र कर्त्तव्य-मार्ग निश्चित कर सकता था । क्योंकि उस समय केवल आवश्यकता होती थी, सावधान होने की । उन्होंने देखा, नरसिंह अब भी अच्छी तरह होश में नहीं आया है । उन्होंने जाकर उसके हाथों को पकड़कर उठा के खड़ा कर दिया और उसके हाथ में बन्दूक देकर कहा--'चले आओ जल्दी, यह फ़मय फ़ुर्ती करने का नहीं है ।'

कुछ ही क्षण के बाद अपनी गठरी को वहीं छोड़ तीनों आदमी चल पड़े । वे बहुत तेजी से आगे बढ़ने लगे । दिन का प्रकाश खूब फैल गया था, किन्तु अभी अधिक गरमी न थी, रास्ता भी सीधा था, उस पर बोझ भी कोई वैसा न था । वे बिना एक दूसरे से कुछ कहे, आगे की ओर धावा कर रहे थे । सत्यव्रत आगे-आगे था ।

सत्य जल्दी ही अपने साथियों से आगे बढ़ गया । नरेन्द्र दौड़ने में उतने तेज न थे । नरसिंह का आलस्य तो अब भी पूरी तरह हटा न था । वह किसी तरह आगे बढ़ने की कोशिश कर रहा था ।

थोड़ी देर के बाद सत्यव्रत फिर कदम भर चलने लगा, जिसमें कि जरा दम ले ले । पीछे देखने पर वह नरेन्द्र और नरसिंह--किसी को भी न देख सकता था । वह फिर आगे बढ़ने लगा । कभी दौड़ता था, और कभी चलता था, किन्तु एक क्षण के लिये भी कहीं न ठहरता था ।

सत्यव्रत ने वह यात्रा दो घंटे ही में पूरी कर दी, जिसे कि रात के अंधेरे में आँधी की प्रबलता के कारण वृहस्पति ने दूने समय में तय की थी । सत्यव्रत को उस समय आगे की ओर से बन्दूक की आवाज सुनाई दे रही थी । यह आवाज थोड़ी-थोड़ी देर पर इतना नियमपूर्वक आ रही थी, कि जान पड़ता था, कहीं मशीनगन चल रही है । प्रत्येक शब्द पर्वतों में प्रतिध्वनित हो रहा था । जैसे-जैसे सत्य आगे बढ़ता जा रहा था, आवाज और भी

ऊँची सुनाई देने लगी थी। अब वह इतनी जोर से दौड़ रहा था, कि उसके हाथों और शिर से पसीने की धार बह रही थी। वह जानता था कि वृहस्पति खतरे में हैं। वह जानता था कि सैकड़ों शत्रुओं के सम्मुख वह अकेले ही हैं। किन्तु यह उसे न मालूम था कि वह कैसे स्थान पर अधिकार जमा कर अपने शत्रुओं से भिड़ रहे हैं।

एक पहाड़ की परिक्रमा पूरा होते ही अकस्मात् उसने अपने आपको घटनास्थल पर पाया। वहाँ एक चट्टान की आड़ में वृहस्पति और मरुवानी दोनों ही लेटे हुए थे। मरुवानी निःशस्त्र था। वह इस युद्ध का दर्शक मात्र था।

वृहस्पति बड़ी शान्तिपूर्वक नाप कर गोली चला रहे थे। वह लक्ष्य को खूब ठीक करके इस प्रकार थम-थम कर आवाज कर रहे थे कि जैसे उनके पास गोलियाँ निवटने लगी हों। सत्य पास चला आया तब भी उसे दर्रा से आगे कुछ नहीं दिखाई देता था। बात यह थी कि दर्रे का मुंह बोतल के मुंह के समान पीछे चौड़ा और आगे तंग था। इसी मुंह पर तीस-तीस हाथ ऊँचे दो चट्टानों के बीच में वृहस्पति लेटे हुए थे। एक क्षण और बीता और सत्य वृहस्पति की बगल में था! उसने कहा—'हम पहुँच गये आपकी सहायता के लिये।'

वृहस्पति ने मुड़कर देखा। उनके चेहरे पर आश्चर्य का चिह्न न था। उन्होंने कहा—'यदि, तुम्हारे हृदय को तीर की ख्वाहिश न हो तो अच्छा है तुम भी लेट जाओ। वह हमसे सौ गज से अधिक की दूरी पर नहीं हैं।'

जिस समय वह यह बोल रहे थे, उसी समय एक तीर सत्य के कान के पास से होकर बगल के पत्थर पर जा टकराया। सत्य ने वृहस्पति की सलाह मानने में जरा भी देर न की। वह वहीं जमीन पर पड़ गया और उसने अपनी बन्दूक को आगे कर ली।

सत्य—'लेकिन मुझे तो निशाना लगाने के लिये कुछ दिखाई ही नहीं पड़ता है!'

वृहस्पति—'तुम देखोगे, जरा आँख खोल कर देखो तो। उनको पता

लग गया है कि यदि वे रास्ते पर रहेंगे तो मैं एक के बाद एक को चित करता रहूँगा। इसीलिये वे रास्ते से इधर-उधर हट गये हैं। उस दाहिने-वाले ढोके को देखो तुम उससे एक-एक करके एक-एक शिर बाहर आते देखोगे।'

उसके बाद के कितने ही मिनटों ने सत्यव्रत को बात करने के लिये फुरसत न दी, उसने भी अपने लिये सामने काम पाया। लड़के ने बाईं ओर के हिस्से का भार लिया और वृहस्पति ने घाटी के दाहिने ओर का। उन्होंने अपने प्रतिद्वन्दियों को दूर ही नहीं रखा, बल्कि जब तक नरसिंह और नरेन्द्र आये तब तक बहुतों को लौटने के लिये बाध्य किया।

अब उनको मदद पहुँच गई थी, इसलिये घबड़ाने की कोई बात नहीं थी। वे जान रहे थे कि हमारे पास बिलकुल अभिनव बन्दूक है और दूसरों के पास धनुष-बाण और भाला के सिवाय कुछ नहीं। और सचमुच जब तक गोली-बारूद होती, तब तक वे वैसे सैकड़ों सैनिकों को दूर रख सकते थे। लेकिन तो भी वह देख रहे थे कि वह शाही शरीर-रक्षक सेना के सिपाही थे। वे कभी खाली हाथ लौट कर पाली के पास नहीं जा सकते। वह जान पर खेल कर सब कुछ करके अपने बन्दियों को पकड़ने का प्रयत्न करेंगे।

वृहस्पति—'मुझे सिर्फ एक बात का डर है कि शायद कोई और रास्ता न इस पार आने का हो। हम लोग बड़े संकट में पड़ जायँगे, यदि दोनों ओर से हम घिर गये।'

वहाँ बात करने के लिये अवसर न था, क्योंकि यद्यपि सैनिक आगे बढ़ने के लिये अब उतने उत्सुक नहीं जान पड़ते थे तो भी वह चाहते थे कि वे लोग सुस्ताने का अवकाश न पायें। कई आदमी रास्ते के दोनों ओर के चट्टानों पर चढ़ गये थे और यद्यपि वे सब दूर थे तब भी वहाँ से दर्रे के मुंह बाण छोड़ रहे थे। यद्यपि यह हानिकारक था क्योंकि ७० डिग्री के कोण से गिरता हुआ—जो करीब-करीब आकाश से ही गिर रहा था—बाण बचाने में बहुत मुश्किल था। वहाँ कोई चीज उनसे बचने के लिये न थी तो भी कोई नुकसान न हुआ, यह सौभाग्य ही था।

कई घण्टों तक वे इस प्रकार जमे रहे और अब बेला बहुत ढल गई थी। अब वह एक बड़े असमंजस में पड़ गये। अब उनके लिये निश्चय करना आवश्यक हो गया था कि रात्रि होने पर हमें पीछे हटना चाहिये या डटे रहना चाहिये।

वृहस्पति–'हम पुरानी युक्ति से पीछे हट सकते हैं–आग जला कर यहाँ रख देना, जिसमें उन्हें हमारी उपस्थिति का धोखा हो और फिर निकल चलना। तथापि इस बात को मैं पसन्द नहीं करता। क्योंकि मुझे मालूम हो रहा है, कि जैसे ही अँधेरा होगा, वे लोग हम पर धावा कर देंगे। ये लोग मूर्ख नहीं हैं, वे सब जानते हैं कि यह अँधेरा ही है, जब कि वे अपनी अधिक संख्या के बल का पूरा लाभ उठा सकते हैं।'

सत्य–'आह, हमारे पास एक लाल राकेट था। वह इस समय हमारे बड़े काम का होता।'

वृहस्पति–'लाल राकेट! उसकी हमें क्या जरूरत थी?'

सत्य–'क्या हम लोगों ने वह बात नहीं कही थी? अच्छा, हमने शंकरसिंह से वचन ले लिया था कि जार्जटाउन से लौटते वक्त इधर ही से होकर जाना। हमने यह भी कहा था कि यदि हमें सहायता की आवश्यकता होगी तो हम लोग इशारा करेंगे, यदि तुम वहाँ पहुँच सके। और इसके लिये हमने राकेटों का एक बक्स अपने पास ले लिया था। उसे उस दिन हम डेंगी पर छोड़ आये।'

वृहस्पति–'अच्छा, मैं और कुछ करने लायक तदबीर बतलाता हूँ। तुम लोग उस पर विचार करो। मैं प्रस्ताव करता हूँ, यह तुम्हारे हाथ में है चाहे स्वीकार करो या अस्वीकार।'

नरेन्द्र–'मेरे फ़द्धेय मिफ़ जी! क्या कभी आपने हमें आपकी राय काटते भी पाया? मुझे पूरा विश्वास है, कि हम कायदे के बड़े पाबन्द हैं।'

वृहस्पति (हँसते हुए)–'यह हो सकता है किन्तु अभी तो मैंने अपनी बात भी तुम्हारे सामने नहीं रखी। मैं चाहता हूँ कि जितना शीघ्र हो सके उतना तुम तीनों यहाँ से अपने डेरे पर चले जाओ। वहाँ से गठरी लेकर

जितना दूर हो सके उतना, और जितना तेज हो सके उतना दौड़ते आगे निकल जाओ। मैं तब तक यहाँ इनको रोके रखता हूँ, और फिर तुरन्त ही तुम्हारे साथ भी रहूँगा। मैं जितना ही इस बात पर विचार करता हूँ, उतना ही मुझे इसमें बुद्धिमत्ता जान पड़ रही है।'

नरेन्द्र—'जरूर क्यों न हो ? हम लोग इतनी दूर दौड़ कर इसीलिये तो आये हैं कि यहाँ से भाग कर, बोरिया-बधना बाँधकर अपना रास्ता लें, आपको यहाँ अकेला छोड़कर और कब ? जब कि आप साथ ही यह भी कहते जा रहे हैं कि पाली के आदमी अँधेरा होते ही धावा कर देंगे।'

बृहस्पति—'मुझे पूरा विश्वास है कि मैं पर्याप्त समय तक उन्हें दूर रख सकूंगा। इसके अतिरिक्त इसके लिये मेरे पास दो भारी कारण हैं, जिन पर तुमने ध्यान नहीं दिया है। प्रथम तो यह कि यदि मैं पकड़ा भी जाऊँगा, तो मेरे ऊपर कोई विपत्ति नहीं आयेगी, क्योंकि सौभाग्य से मैं पाली का धर्मभाई हूँ और दूसरे यह कि यह बहुत ही अच्छा होगा, कि तुम तीनों ही जहाँ तक जल्दी हो सके पाली के दुष्प्रभाव से दूर चले जाओ।'

सत्य जल्दी से बोल उठा—'ओह, मैं तो इसे कहना ही भूल गया था।'

बृहस्पति—'समय बहुत थोड़ा है, बात का अवसर नहीं है। असल बात यह है, कि कल रात को तुम तीनों हेप्नाटाइज्ड हो गये थे और तारीफ़ यह कि तुम हेप्नाटाइज्ड भी हुए एक ऐसे आदमी के द्वारा जो कि कितने ही कोस तुमसे दूर था, और जिसने इससे पूर्व तुम लोगों पर अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं किया था। यह निश्चिय है कि पाली जब चाहे तब तुम पर मूर्छा डाल सकता है और यह बड़ी भयानक स्थिति है। मैं समझता हूँ, उसकी इस शक्ति की कोई हद होगी, अर्थात् कुछ कोस और दूर हटने से शायद तुम उसके प्रभाव-चक्र से बाहर हो जाओगे। जितना ही तुम उससे दूर होते जाओगे, उतना ही उसे तुम पर अपना प्रभाव डालने में अड़चन पैदा होगी। अन्त में, मैं तुम्हें यह याद दिला देना चाहता हूँ, कि आज तुम अमतुंगाली की ओर—पाली की ओर—कई मील चले आये हो। इसलिये मैं तुम्हें बड़े जोर से कहूँगा, जल्दी, बहुत जल्दी दौड़ जाओ।'

उस जगह आने के बाद नरेन्द्र और सत्य को इस बात पर विचार करने का मौका न मिला था । वह एक प्रकार से इसे भूल से गये थे । और नरसिंह तो रात की बात को कुछ समझ ही नहीं रहा था, उसे यदि खयाल भी आता था, तो वह उसे भूतों-चुड़ैलों वाली बात समझता था । जब वृहस्पति ने यह बात कही तो उनके साथी कुछ देर तक चुप रहे । वह सचमुच उनके कथन से इनकार नहीं कर सकते थे । बात सचमुच आसान नहीं थी । एक दृश्य प्रत्यक्ष शत्रु उतना भयंकर नहीं हो सकता, जितना की अदृश्य, अप्रत्यक्ष, और उस पर भी जिसके हाथ में अद्‌भुत शक्ति थी ।

नरेन्द्र ने बड़ी गम्भीरता से कहा—'निफ़फ़न्देह, इफ़में जरा भी ननु नच की आवफ़्यकता नहीं । आपने अफ़ली बात कही है । किन्तु मुझे नहीं फ़मझ में आता, कि हम कैफ़े आपको छोड़ कर जा फ़कते हैं, जब कि बीफ़ों फ़त्रुओं के फ़म्मुख आपको अकेला देख रहे हैं ।'

वृहस्पति—'और तुम मेरा ही क्या भला करोगे, जब कि पाली फिर आज रात को तुम्हें मूछित कर देगा ।'

नरेन्द्र ने चिल्लाकर कहा—'मूछित ! मैं अपनी जिन्दगी भर में कभी भी हेप्नाटाइज्ड नहीं हुआ हूँ ! मैं जरा भी इफ़ पर विफ़्वाफ़ नहीं करता । मैं इफ़े वैफ़ा ही मूर्खतापूर्ण विफ़्वाफ़ फ़मझता हूँ, जैफ़ा कि तिपाई चलाना, फ़ामुद्रिक, फ़लित ज्योतिफ़ । यह अफ़त्य है ।

वृहस्पति—'असत्य हो या नहीं, रात की घटना का दूसरा अर्थ ही हमारे पास नहीं है । मुझे नहीं समझ में आता कि मैं कैसे बच गया । शायद जादूगर बादशाह ने मुझ पर प्रयोग करना ही नहीं चाहा या शायद मैं प्रभावशून्य हूँ । कुछ भी हो, यह निश्चित है, यदि उसने तुम्हें मूछित कर दिया, और इधर तुङ्गालों ने धावा बोल दिया, तो मैं कैसे तुम्हें बचा सकूंगा । मैं स्वयं शायद पीछे हटने में समर्थ हूँ, किन्तु तुम तीनों को मैं कैसे ले जा सकूंगा ।'

नरेन्द्र अब भी सन्तुष्ट न था, उसने फिर कहा—'इफ़का क्या अर्थ है ?'

वृहस्पति–'तुम्हें पाली की मंशा समझनी चाहिये, और वह बिलकुल साफ थी। वह अपने सैनिकों को हमें पकड़ने के लिये समय देना चाहता था। हमारा सौभाग्य था, जो तूफ़ान आ गया, नहीं तो सैनिक हमारे सजग होने से पहिले शिर पर आ खड़े होते। उसने इनके आने में देरी कर दी और अब इन बातों में समय बरबाद करना मेरी समझ में बिलकुल अच्छा नहीं है। यही अच्छा है, कि तुम कुल गोली बारूद, जो हो सके, मेरे पास छोड़ जाओ। सूर्यास्त से पूर्व तुम्हें डेरे पर पहुँच जाना चाहिये। सीधे नीचे की ओर घाटी की तरफ जाना। एक मिनट के लिये भी कहीं मत ठहरना। प्रत्येक कोस, प्रत्येक हाथ का अन्तर, जो तुम्हारे और पाली के बीच में पड़ता जायगा, उसे बहुत समझना। अच्छा वन्देमातरम्, हिम्मत न हारो। मैं आशा करता हूँ, कुछ दिनों में मैं तुम्हारे साथ होऊँगा।

सत्य–'आपको इसका विश्वास है ?'

वृहस्पति–'जरूर, और मैंने अपना मतलब साफ कर दिया है। हमें इस समय व्यक्ति-व्यक्ति की सुरक्षा का अधिक न ध्यान करके सबकी भलाई की बात करनी चाहिये। अच्छा बस, वन्देमातरम्।'

नरेन्द्र हिचकिचाया–'मैं इसे पसन्द नहीं करता, मुझे यह बिलकुल अच्छा नहीं मालूम होता।'

वृहस्पति (मुस्कराते हुए)–'और मेरे लिये भी वही बात है। दुर्भाग्यवश इस जीवन में, हमें अनेक समय नापसन्द कामों ही को करना पड़ता है।'

अन्त में नरेन्द्र, सत्य और नरसिंह–तीनों ने नीचे का रास्ता लिया। सूर्य डूब गया। वृहस्पति ने मरुवानी को बहुत कहा कि उनके साथ वह भी चला जाय, किन्तु उसने अपने स्वामी को छोड़कर जाने से बिलकुल इनकार कर दिया। इस पर वृहस्पति ने समझाया, मेरे साथ रहना मृत्यु को निमंत्रित करना होगा। वृहस्पति पकड़े जाने पर भी मारे नहीं जा सकते थे। किन्तु यदि मरुवानी इस युद्ध से किसी प्रकार बच भी गया, तो पाली के हाथों में पहुँचने पर वह जीवित नहीं रह सकता।

मरुवानी ने बड़ी दृढ़ता से कहा—'इसकी मुझे कुछ परवाह नहीं, मैं अपने स्वामी के पास रहना चाहता हूँ, यदि मृत्यु आती है, आवे, उसके लिये स्वागत है।'

इसके बाद वह थोड़ी दूर जा सो गया।

मरुवानी की मृत्यु

हिम्मत के भी भिन्न-भिन्न प्रकार और श्रेणियाँ हैं। एक आदमी है, जिसे खतरे से प्रेम नहीं है, लेकिन उसके हृदय में यश की कामना है और वह उसकी प्राप्ति के लिये विपत्ति, सम्पत्ति को कुछ नहीं समझता। दूसरे प्रकार का आदमी है, जिसके दिल में भय नहीं, जो कभी नहीं खयाल करता, यह बिलकुल सम्भव है कि वह मारा जाय। एक तीसरा भी आदमी है जो बड़े आश्चर्य में डालने वाले काम को करता है जब कि उस भयानक स्थिति में मृत्यु निश्चित मालूम पड़ती है, कारण उसमें नाटकीय साहस है। और अन्तिम आदमी वह है जो विरला मिलता है, वह स्वाभाविक वीर है। ऐसा व्यक्ति खतरे का स्वागत करता है, वह मृत्यु के लिये तैयार रहता है और अपने कर्त्तव्य को पूरा करने के लिये अत्यन्त इच्छुक। उसकी नसें फ़ौलाद की होती हैं और मन वज्र का।

वृहस्पति मिश्र इसी प्रकार के आदमी थे। सूर्य अस्त हो गया, रात्रि ने अपनी कालिमा को उस भयंकर घाटी पर फैला कर उसे और भीषण बनाना आरम्भ किया। उस समय वृहस्पति चुपचाप अपनी बन्दूक हाथ में लिये; आनेवाले संकट की प्रतीक्षा में वैसे ही बैठे थे, जैसे कोई दर्शक नाट्यशाला में परदे के उठने की प्रतीक्षा करता है।

वस्तुतः उनका सम्पूर्ण जीवन ही संकट में व्यतीत हुआ था। पिछले दस वर्षों में, जब कि वे अल्प परिचित अफ्रीका के भागों की छान-बीन कर रहे थे, शायद ही कोई ऐसी रात्रि आई हो जब कि मृत्यु के स्थान पर उन्होंने सोने के लिये अपना सिर न दिया हो; शायद ही कोई ऐसा दिन गया हो जब कि किसी न किसी बला में वे न फँसे हों। चन्द मिनटों में या बहुत हुआ तो चन्द घण्टों में उस घोर अन्धकार में कम से कम पचास सुशिक्षित और शस्त्र सुसज्जित सैनिक उन पर हमला करेंगे। उस समय चन्द्रमा भी न होगा। उन्होंने आकाश की ओर देखा वह निरभ्र था। युद्धक्षेत्र अब

नक्षत्रों की टिमटिमाहट से ही प्रकाशित हो सकेगा और यह बन्दूक के उपयोग के लिये पर्याप्त नहीं है। इन सब बातों पर ध्यान करने से स्पष्ट था कि वृहस्पति का जीवित निकलना असम्भव था।

वे उस प्रतीक्षा के समय, अपनी सफलता के उपायों को गिन रहे थे जो कि बहुत कम थे। तो भी वे भयातुर न थे। वे उस सब के लिये तैयार थे जिसे कि भविष्य ने उनके लिये निश्चित कर रखा था। उन्होंने जैसे ही तैसे अपने जीवन को सुरक्षित रख कर, तुंगाला-सैनिकों को दूर रखने का निश्चय कर लिया था।

उस वक्त उनके चित्त में अनेक विचार उठ रहे थे। अब वे अपने को जवान नहीं कह सकते थे। उन्हें मालूम हो रहा था कि जब से संसार की इन भयानक यात्राओं में उन्होंने पैर रखा; तब से कितनी ही बातें उनके साथ हुईं। एक बार वे शेर के पंजों में पड़ गये थे; एक घायल अरने की सींगों से वह बाल-बाल बचे थे; एक बार उनका जहाज मैडगास्कर के पास एक सामुद्रिक तूफ़ान में पड़ कर एक चट्टान से टकरा कर टूट गया और वह किसी प्रकार तैर कर उसी चट्टान पर पहुँच गये। इन आपत्तियों और समय-समय पर मलेरिया के प्रकोप के अतिरिक्त उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में कभी भी और किसी बीमारी को नहीं देखा। उन पाँच वर्षों के प्रतिज्ञाबद्ध कुली जीवन के अतिरिक्त उन्होंने और प्रकार के दुःखों को भी नहीं अनुभव किया। इन सब बातों से वे अपने को बड़ा सौभाग्यवान समझते थे और सबसे बड़ी सौभाग्य की बात अपने लिये वे इसे समझते थे कि उनके लिये कोई बन्धन नहीं। अपने सम्पूर्ण जीवन में वे एक स्वतंत्र पुरुष के तौर पर रहे; वे जहाँ चाहते वहाँ घूम सकते थे, जहाँ चाहते अपने जीवन को खतरे में डाल सकते थे।

कैसे भी हो, उनका जीवन् एक सुन्दर जीवन था। वह खुली हवा और चमकते सूर्य-प्रकाश में व्यतीत हुआ था। वे मृत्यु के लिये बिलकुल तैयार थे यदि भविष्य ने वैसा ही रच रखा है। उन्होंने सोचा मैं सदा कुछ स्वार्थी सा रहा हूँ। मुझे कभी स्त्री और बच्चों के लिये फिक्र न करनी पड़ी,

क्योंकि उनके पाने के लिये कभी मैंने स्वप्न भी नहीं देखा था। मैंने अपने धन को अपनी इच्छानुसार और प्राय: अपने ही ऊपर व्यय किया। इसके लिये मुझे प्रसन्नता है कि मैंने यशस्वी और स्वच्छ जीवन व्यतीत किया। किन्तु यदि मैंने पहिले अपने लिये बहुत ख़याल किया तो उसके प्रायश्चित्त का यह अच्छा मौका है। यदि मैं अपने तीनों साथियों के प्राणों को बचा सका तो बस सारी ही इच्छाएँ पूर्ण हैं, फिर कुछ और स्पृहणीय नहीं रह जाता।

उनके हृदय में सत्यव्रत के लिये बड़ा प्रेम था। यह प्रेम लड़के की मातृ-पितृ-विहीनता ही से नहीं बल्कि उसके व्यवहार, उसके साहस, उसके चातुर्य से उत्पन्न हुआ था। वृहस्पति ने निश्चय कर लिया था कि यदि किसी तरह वे सभ्यजगत में पहुँच सके, तो अपनी सम्पत्ति की वसीयत उसके लिये कर जायेंगे। वृहस्पति धनी आदमी थे, अर्थात् उनके खर्च से अधिक आमदनी की सम्पत्ति उनके पास थी। इस जंगल के जीवन में तो बल्कि वे कुछ व्यय भी न कर सके थे। वहाँ, कुछ दाने और लाल धागा, मोती के हारों से भी बढ़कर थे। एक अच्छी बन्दूक और कारतूसों की माला बनारस बैंक के सारे ख़जाने से बढ़कर थी।

नरेन्द्र भी एक सज्जन पुरुष था। उसका हृदय बहुत स्वच्छ था, और वह वैसे अल्पबुद्धि भी नहीं था, जैसा कि बनना चाहता था। यही विचार तरंगें थीं, जो कि उस सारे वक्त में वृहस्पति के हृदय में उठ रही थीं। इसी समय एक पत्थर के लुढ़कने का शब्द थोड़ी ही दूर पर उत्तर की ओर से आया।

वे थोड़ी देर से कान लगा कर सुन रहे थे। उन्होंने सोचा इस अंधेरे में आँखों के बदले कान ही अधिक उपयोगी हो सकते हैं। उन्होंने यह भी समझ लिया, कि पत्थर आदमी के ही द्वारा लुढ़क सकता है, क्योंकि वहाँ किसी प्रकार के जीवधारी को उन्होंने नहीं देखा था। उनके हृदय में जरा भी किसी प्रकार का भय न था। वे चुपचाप शान्तभाव से बैठे चट्टान की आड़ में लेट गये। बन्दूक उनके हाथ में उत्तर की ओर मुंह किये पड़ी थी। इसी समय मरुवानी भी चुपके से उठ कर उनकी बगल में आ गया।

वे इस तरह देर तक पड़े रहे, किन्तु शायद दस मिनट से अधिक नहीं। तब उन्होंने अपने सामने आदमी की काली प्रतिमा हिलती देखी। वह उनकी ओर साँप की भांति जल्दी-जल्दी किन्तु चुपचाप आ रही थी। देखते के साथ ही बृहस्पति ने ऊँचे स्वर से तुंगाला भाषा में कहा:—

'मेरे मित्र, मुझे तुम्हारे मारने की इच्छा नहीं है। तुंगाला लोगों से मुझे कुछ भी दुश्मनी नहीं है। मुझे अपने धर्मभाई पाली से भी कोई झगड़ा नहीं है। मैं इसके अतिरिक्त कुछ नहीं चाहता, कि शान्तिपूर्वक अपना रास्ता लूं। यदि तुम इसमें बाधक होना चाहते हो, तो अपने जीवन की आशा छोड़ कर ऐसा कर सकते हो।'

जान पड़ता था, वह आदमी कुछ भौंचक सा हो गया था, उसने कुछ देर थम कर जवाब दिया—'बादशाह की आज्ञा पूरी करनी होगी।'

बृहस्पति—'और वह आज्ञा क्या है ?'

'कि ज्ञानी जीवित पकड़ा जाना चाहिये। और दूसरों के लिये सजीव निर्जीव की कोई बात नहीं, उन्हें किसी प्रकार देश से बाहर न जाने देना चाहिये।'

बृहस्पति ने हँस कर कहा—'मुझे जीवित पकड़ पाना आसान नहीं है। मैं नहीं समझता, तुम कैसे इसे कर सकते हो; क्योंकि मेरे पास आग उगलने वाला हथियार है, जिससे जो भी तुममें से मेरी ओर आने का प्रयत्न करेगा, मारा जायगा।'

वह आदमी, जो और कोई नहीं, स्वयं शरीर रक्षकों का कप्तान था, जान पड़ता था, कुछ सोच रहा था, वह थोड़ी देर चुप रहा, फिर बोला—'दूसरे भी आपके साथ हैं ?'

बृहस्पति—'दूसरे मेरे पीछे हैं। किन्तु वह प्रसंग से बाहर की बात है। याद रखो, कि मैं तुम्हें अच्छी तरह देख रहा हूँ। जहाँ तुमने मेरे पास आने का प्रयत्न किया, कि मैंने दागा।'

कप्तान—'मैं यहाँ, आपको आत्म-समर्पण के लिये कहने आया हूँ।

बृहस्पति—'तो तुमने मूर्खता की।'

कप्तान—'तो आप अपने धर्मभाई पाली के हाथ में अपने आपको अर्पण न करेंगे ?'

वृहस्पति—'मैं आखिरी दम तक लड़ूंगा ।'

इस पर वह आदमी अलक्षित हो गया । वह अन्धकार में विलीन हो गया । इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि वह पता लेने के लिये आया था कि स्थान कैसा है और विरोधियों की शक्ति कैसी है । जिसमें कि वह अपने सिपाहियों को ठीक से हमला करने के लिये आज्ञा दे सके । निस्सन्देह वह एक वीर योद्धा था और स्वयं पता लेने के लिये आया था, अन्यथा यह काम वह अपने एक सिपाही द्वारा भी करा सकता था । उसे यह भी आशा रही हो कि शायद वह बिना खून-खराबी के अपने कर्त्तव्य को पूरा कर सके । अब उसे मालूम हुआ कि उसे लड़ना आवश्यक है और साथ ही उसे यह भूला न था कि उसे एक ऐसे महान् शक्तिसम्पन्न पुरुष से लड़ना है, जिसने अखाड़े के बीच में मेगेथेनियम को मार डाला था; अतः काम आसान नहीं है ।

पाली के शरीर-रक्षकों का कप्तान मूर्ख न था । उसे अपने शस्त्रों के उपयोग का अच्छा ज्ञान था । यद्यपि उसने समर्पण के लिये कहा किन्तु उसे इसकी आशा न थी और इसीलिये उसने अपना इन्तजाम ठीक कर रखा था । संध्या से पूर्व ही उसने एक टोली साहसी और युवक सैनिकों की पूर्व दिशा से पर्वत पर चढ़ कर पार होने के लिये भेज दी थी । उन्हें खड़े पहाड़ पर पहिले चढ़ना था और फिर दूसरी ओर उतरना, तब फिर पैदल रास्ते पर होकर दर्रे के पास दक्षिण ओर से आक्रमण करना था ।

वृहस्पति ने पहिले ही इसे सबसे भारी खतरा निश्चय कर लिया था । वे जानते थे कि यद्यपि पर्वत सीधा, नंगा, बहुत ऊँचा और चढ़ने के लिये बहुत कठिन है तथापि दूर या समीप इसमें ऐसे भी स्थान अवश्य होंगे जहाँ पहाड़ी चढ़ाई में चतुर मनुष्य बिना भारी कठिनाई के पार हो सकते हैं । उनके दिल में सिर्फ एक आशा थी कि शायद रास्ता चक्कर का हो जिससे उनके यहाँ तक पहुँचने में देर हो और ऐसा प्रत्येक क्षण बहुमूल्य था ।

एक घण्टा बीत गया, तब धावा शुरू हुआ। तुंगाला एकाएक आक्रमण करना नहीं चाहते थे। पहिले उन्होंने वाणों की वर्षा की जो आ-आकर दोनों ओर के आस-पास के लौह-पत्थरों पर खटखटाते हुए गिर कर उनमें से चिनगारी निकाल रहे थे।

वृहस्पति और मरुवानी दोनों चट्टान की आड़ में लेटे हुए थे। वे समझते थे कि इसकी आड़ में उनके आक्रमणों से बहुत सुरक्षित हैं। तब एकाएक आक्रमण ज़ोर से आरम्भ हुआ। तुंगाला सैनिक जयघोष करते हुए एक साथ दर्रे के दाहिने बायें दोनों ओर जमा हो गये। वृहस्पति की बन्दूक ने अन्धकार में आवाज की। यह आवाज जोर की थी। प्रत्येक धांय के साथ कोई आगे बढ़ने वाला सैनिक गिर कर लुढ़कता हुआ नीचे जा पड़ता था।

केवल अपनी अधिक संख्या के कारण आखिर वह दर्रे के मुख पर पहुँच गया, और अब मरुवानी की वीरता का समय था। यह पहिले ही कहा गया है, कि उसके पास कोई हथियार न था; तथा वह अत्यन्त इच्छुक था, कि उस पुरुष की वह सहायता करे, जिसकी वह देवता की भांति पूजा करता था। वृहस्पति अपनी जगह जमे हुए थे, और सैनिक हर वक्त कुछ न कुछ आगे बढ़ते आ रहे थे। मरुवानी दौड़कर शत्रुओं के बीच में जा पड़ा।

उसने अपने घूंसे से, विरोधियों को तितर-बितर कर दिया, और जब तक वह उसे मार गिरावें, तब तक उसने एक के हाथ से एक भाला पकड़ कर खींच लिया। भाला लेकर वह फिर दौड़ कर दर्रे के भीतर आगया, और वृहस्पति की बगल में पहुँच गया।

उस संकीर्ण बोतल-मुख दर्रे में वस्तुतः दो से अधिक आदमियों के लिये स्थान भी न था। वहाँ एक ओर वृहस्पति बन्दूक को नली की ओर से पकड़ कर डंडे के तौर पर लिये खड़े थे और दूसरी ओर मरुवानी भाला लिये हुये। जैसे ही कोई आगे बढ़ता, दोनों के प्रहार के सम्मुख पीछे हटने के लिये मजबूर होता था।

बार-बार सैनिकों ने दर्रे में आगे बढ़ने का प्रयत्न किया, किन्तु प्रत्येक

बार वह दोनों ही वीर पुरुष उन्हें भगा देने में समर्थ हुए। और तब अपने कप्तान की आज्ञा से वह पीछे हटे। कप्तान ने कोई दूसरा ही कर्त्तव्य मार्ग निश्चित किया था। अब उसे मालूम हो गया था, कि वृहस्पति और मरुवानी दो ही यहाँ पर अधिकार किये हुए हैं। और इस बात ने उसकी कठिनाई को कम न करके और बढ़ा दिया। क्योंकि पाली ने वृहस्पति के मारने वाले के लिये भारी दंड देने को कहा था। चाहे कुछ भी हो 'ज्ञानी' को जीवित पकड़ कर बिना जरा सी चोट के अमतुंगाली ले जाना था।

किसी आदमी को जीवित पकड़ने के लिये उसके पास पहुँचने की आवश्यकता होती है, और यही बात थी, जिसे तुंगाला बहुत प्रयत्न के बाद भी निश्चित न कर सकते थे। क्योंकि वृहस्पति को बन्दूक को घुमाकर मारने को वहाँ पूरा स्थान था, और दूसरे मरुवानी भी अलग से अपने भाले के प्रयोग के लिये स्वतंत्र था। यह निश्चय था कि जो आदमी उनके ऊपर हाथ डालना चाहता था, वह ऐसा करने से पहिले ही या तो खोपड़ी फोड़वा कर या घातक घाव खाकर जमीन पर जा गिरता था। कप्तान को अब इसकी विशेष आशा न थी कि वह सामने से दर्रे पर अधिकार कर सकते हैं। उसने अब अपने उन जवानों की प्रतीक्षा करनी आरम्भ की जो कि पर्वत लाँघ कर हरावल की ओर से उन पर आक्रमण करने वाले थे।

और यह वृहस्पति के लिये बड़े फ़ायदे की बात थी। एक घंटा बीता—दो घण्टा बीता—और तब चन्द्रमा आकाश में उदय हुए। और इन सारे ही समयों में नरेन्द्र और उसके साथी उस झील की ओर जोर से भाग रहे थे जहाँ कीचड़ में वे भयंकर प्राग्-ऐतिहासिक जन्तु बसते हैं।

प्राची दिशा में सूर्य के उदय होने का लक्षण दिखलाई देने लगा और इस समय वृहस्पति को दक्षिण ओर से एक टोली के आगे बढ़ने की आहट मिली। अब उन्हें दिखाई देने लगा कि अन्तिम घड़ी करीब है, क्योंकि वह और मरुवानी दोनों, दोनों ओर के आक्रमण को नहीं रोक सकते। वृहस्पति ने मरुवानी की ओर फिर कर कहा—'मरुवानी, मेरे प्यारे भाई, अब भी समय है, अच्छा है तुम चले जाओ। मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे

अकेला छोड़ दो और तुम अपना रास्ता लो। यदि मैं इन आदमियों के हाथों में भी पड़ गया तो भी मेरे लिये कोई डर नहीं, क्योंकि मैं बादशाह का धर्मभाई हूँ।'

मरुवानी ने शिर हिलाते हुए कहा—'मैं तुम्हारे साथ रहूँगा, मेरे स्वामी।'

वृहस्पति—'मरने के लिये?'

मरुवानी—'हाँ, मरने लिये।'

वृहस्पति—'तुम क्यों अपने से मृत्यु के मुख में पड़ते हो?'

मरुवानी—'इसलिये कि अपने स्वामी के चरणों में रहूँ। मैं तो ऐसे भी पाली के हाथ में कितने दिनों से मरा ही था, मेरे लिये मृत्यु कोई दुख की बात नहीं है। किन्तु हाथ जोड़ता हूँ मेरे स्वामी, मुझे अपने चरणों से धक्का देकर दूर न करो। यदि मृत्यु आती है तो इन्हीं चरणों ही में मुझे मरने दो।'

अब इस बात पर और विचार करने का अवसर न था; क्योंकि दूसरी टोली जल्दी-जल्दी दक्षिण की ओर से नजदीक आ रही थी। वृहस्पति ने गोली इसलिये न चलाई कि उससे कप्तान और उसके आदमियों को दूसरी ओर के आक्रमण की खबर लग जायेगी। थोड़ी देर तक दोनों वीरों ने उन्हें पास न आने दिया; किन्तु उसी समय आक्रमणकारियों वीरों ने बड़े जोर से जयघोष किया जिससे उत्तर की ओर से भी आक्रमण शुरू हो गया। अपने कप्तान की आज्ञानुसार लोगों ने आगे बढ़ कर दर्रे के उत्तर वाले भाग पर अपना अधिकार जमा लिया।

मरुवानी ने उनका आगे बढ़ना रोक रखा था। वह बीच में खड़ा होकर अपने भाइयों से बड़ी भीषणता के साथ लड़ रहा था। युद्ध सम्बन्धी चातुर्य और उत्साह उसका जन्म-सिद्ध अधिकार था। यद्यपि उसने अपने ही भाइयों को वहाँ मारा, तो भी इतने आदमियों के साथ लड़ने वाले उस एकाकी वीर के हृदय में इस युद्ध से बड़ा आनन्द आ रहा था। वह उस वक्त तक लड़ा और इस आनन्द में मग्न रहा, जब तक कि आक्रमण-कारियों ने एक साथ आक्रमण करके उसे भूतल पर गिरा कर निश्चल न कर दिया।

उसके शत्रु उसके मृत शरीर पर पैर रख कर आगे बढ़ पाये । मरुवानी के अभाव में अब काम कुछ मिनटों का था । अकेले वृहस्पति कब तक दोनों ओर के आक्रमण को रोक सकते थे । थोड़ी ही देर में उनकी बन्दूक छीन ली गई और जमीन पर पटक दिये गये । कुछ देर में बिना कठिनाई के उनकी मुश्कें बाँध ली गईं ।

कप्तान ने पूछा—'और दूसरे कहाँ हैं ?'

वृहस्पति—'यह तुम्हारा काम है, जाओ पता लगाओ; और यह आसान काम न होगा क्योंकि वे इस समय तक बहुत दूर निकल गये होंगे ।'

कप्तान ने घबराहट में लम्बी साँस ली । तो भी उन्होंने अपने कर्त्तव्य का आधा अंश—शायद कठिन अर्द्धांश—समाप्त कर लिया था; यह अवश्य पाली को प्रसन्न करने के लिये कुछ होगा उसने तुरन्त एक सैनिक की भांति आगे के काम का निश्चय कर लिया । उसने छः सिपाहियों को चुन कर वृहस्पति को उनके हवाले करके अमतुंगाली जाने के लिये कहा और स्वयं अवशिष्ट सैनिकों के साथ दक्षिण ओर का रास्ता लिया, क्योंकि चाहे जो भी हो उसे फरारियों को पकड़ना है ।

उधर कप्तान तो दक्षिण ओर रवाना हुआ और इधर दूसरे छः सिपाही, वृहस्पति—जिसने रात भर विश्राम न किया था—को लेकर अमतुंगाली की ओर चले । उन्होंने भली प्रकार समझ लिया कि उन्हें भागने का कोई मौका नहीं दिया जायेगा । उनके रक्षक, अपने अफसर की आज्ञा, और पाली के प्रकोप से चारों ओर जोंक की भांति लग गये—उनमें दो आगे, दो पीछे और एक-एक दोनों बगल में थे । मध्याह्न की धूप में खाने-पीने और विश्राम करने के लिये रास्ते में ठहर गये और पिछले पहर फिर चले । अब कुछ ठंडा भी हो गया था । उन्होंने कहीं आराम नहीं किया, इस प्रकार बहुत रात बीते वे अमतुंगाली पहुँचे ।

वृहस्पति सीधे पाली के पास ले जाये गये । उसे उन्होंने उसी संगखारा के महल में पाया, वह उसी लाल रोशनी से प्रकाशित हो रहा था, जो कि पाली को उसके गद्दीघर में बड़ा भयंकर बना देती थी ।

जब जादूगर ने वृहस्पति पर दृष्टि डाली तो ठठा कर हँसा, और दोनों हाथों को पीट कर बोला—'हाँ तो, मेरे धर्मभाई लौट आये ! बहुत अच्छा । पाली का हृदय बहुत सुखी हुआ ।'

वृहस्पति—'और वृहस्पति का भी, लेकिन, पाली ! तुमने अब मेरे मित्रों पर आँख गड़ाई है ।'

इस पर पाली उठ खड़ा हुआ और कमरे के मध्य में आया । उस कमरे में वह बड़ा ही भीमकाय और भयंकर जान पड़ता था । उसकी लम्बी चौड़ी हड्डियाँ और प्रकांड ढांचा मन्दिर वाले पर्वत के शिखर पर के देवता का स्मरण दिलाता था ।

पाली—'तुम ऐसा सोच रहे हो, किन्तु मैं इसे और रूप में दिखाऊँगा । मेरे धर्मभाई, अभी भी तुम्हें पाली के ज्ञान और बल को समझना चाहिये । मैं तुमसे कह रहा हूँ कि सूर्य के तीन बार डूबने से पहिले ही मैं उन्हें अमतुंगाली बुला लूंगा ।'

उसने अपने मुंह को उस लाल आग की ओर किया जो कि पत्थर की वेदी पर जल रही थी । यह एक अद्भुत मुख था जो मनुष्य की अपेक्षा पशुओं से अधिक मिलता था और उनमें भी गोरीला बानर से । तथापि उसका ललाट ऊँचा था । उसका बौद्धिक मस्तिष्क खंड पूर्ण विकसित—विचारक के ललाट की भांति—था । उसके विस्फारित प्रकाशमान कृष्ण नेत्र उसकी मानसिक शक्ति की महत्ता को प्रकाशित कर रहे थे । अग्नि के लोहित प्रकाश द्वारा प्रकाशित हो वह भयंकर जान पड़ता था ।

पाली—'वह अमतुङ्गाली को लौट रहे हैं । जब महान् देव अमरोकी बलि मागेंगे तो बलि खोजनी न पड़ेगी ।'

यह अमरोकी वही तुंगाला का सर्वश्रेष्ठ देवता था, जिसे वृहस्पति प्राचीन कार्थेजियों का अग्निदेव—मलक—समझते थे और जो स्त्री और बच्चों तक को खाये बिना नहीं छोड़ता था ।

मन्दिरवाला पर्वत

वृहस्पति को फिर वे लोग, उस गुफा में ले गये, जहाँ, वे पहिले अपने साथियों के साथ रहा करते थे। उनके ऊपर एक मजबूत पहरा रखा गया। पता लगता था कि पाली अब फिर वैसा नहीं होने देना चाहता था। अव की बादशाह का एक अत्यन्त विश्वास-पात्र अफसर बन्दी के ऊपर देख-रेख करने के लिये नियुक्त हुआ था।

वृहस्पति—'जान पड़ता है, बादशाह अब नहीं चाहते कि मैं फिर पर्वतों के उस पार की यात्रा करूँ।'

अफसर मुस्कुराया। वह एक लम्बा और सुन्दर मनुष्य था, वृहस्पति ने पहिले भी अनेक बार उससे वार्त्तालाप किया था।

अफसर—'बादशाह कहता है कि मैं अपने धर्मभाई को इतना प्रेम करता हूँ कि एक दिन भी उसे अपनी नजर की आड़ में नहीं जाने देना चाहता।'

वृहस्पति—'मुझे नहीं मालूम था कि बादशाह इतना मजाकपसन्द है।'

अफसर—'हाँ, कभी-कभी पाली दिल्लगी पसन्द करता है।'

वृहस्पति—'तुम्हें कुछ इसका पता है कि वह मेरे साथ क्या करना चाहता है?'

अफसर—'कल मन्दिरवाले पर्वत पर भारी मेला है, सारे ही धर्माचार्य और गृहस्थ वहाँ एकत्रित होंगे।'

वृहस्पति—'क्यों?'

अफसर'अगर मैं जानता भी तो भी मुझे कहने की आज्ञा न थी, बादशाह जो हुक्म देता है, उसे शिरोधार्य करना चाहिये। मुझे सन्देह है, कि शायद प्रधान धर्माचार्य भी न जानते होंगे, कि बादशाह ने क्यों सबको एकत्रित करने का हुक्म दिया है।'

वृहस्पति—'कुछ धार्मिक विधि-व्यवहार?'

अफसर—'यदि तुम अमतुंगाली की सड़कों पर किसी से पूछो कि तुंगाला

के भगवान् का नाम क्या है, तो तुम्हें बतलाया जायेगा कि उसका नाम अमरोकी है जो इस जाति का भाग्य-विधाता उस समय ही से है जब से कि वे लोग महारण्य से दूर के मैदान से दक्षिण ओर आये। मैं, स्वयं एक सैनिक हूँ और धर्माचार्यों में से अनेक मेरे मित्र हैं। वे मूर्ख स्त्री पुरुषों द्वारा अमरोकी की चरण पर चढ़ावे को खा-खाकर मोटे हो गये हैं। जो कुछ कि मैंने अपनी आँखों-कानों से देखा सुना है उससे मेरा विश्वास है कि धर्माचार्य, बल्कि स्वयं प्रधान धर्माचार्य भी अपने हृदय में उसके लिये कुछ भी भाव नहीं रखते, जिसकी कि पूजा-पाठ का वह इतना ढोंग रचते हैं। इस देश में अमरोकी से भी अधिक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति है और यह पाली है। पाली में शक्ति है; उसकी आँखें जादूगरों की हैं, वह आदमी के मन की बात को जान सकता है; उससे कोई भी रहस्य छिपा नहीं है। कोई भी ऐसा भेद नहीं जिसे उसने न जाना हो। वह किसी आदमी पर अपना विश्वास नहीं करता। वह अकेला बैठता है, और अन्य मनुष्यों से शक्ति में अधिक होने से वह किसी से भय नहीं खाता और सभी लोग उसके हुक्म को आँख मूंद कर स्वीकार करते हैं। निस्सन्देह, अभी वह आदमी पृथ्वी पर पैदा हुआ ही नहीं, जो पाली को हरा दे। अमरोकी के पास यह शक्तियाँ नहीं हैं। वह सिर्फ एक गढ़ी हुई मूर्ति है, जो शताब्दियों से चली आती है। वह स्वयं अपनी बलि को ढकेल कर कुंड पर नहीं ले जा सकता। यह काम पुजारियों का है जो कि अमरोकी के नाम पर पाली की आज्ञा मानते हैं। जब कोई जंगली जानवर और आदमी के अखाड़े में युद्ध की बात आती है, तो पाली ही हुक्म देता है। जब कभी पर्वत पर कोई मेला होता है तो हुक्म पाली देता है, अमरोकी नहीं।'

वृहस्पति—'कब मेला होगा ?'

अफसर—'कल दोपहर के बाद, सूर्यास्त से एक घण्टा पूर्व। चारों ओर हुक्म दे दिया गया है। प्रत्येक आदमी कल वहाँ रहेगा।'

वृहस्पति ने समझ लिया कि अब आगे कोई नई बात का पता लगाना मुश्किल है, इसलिये अपनी चटाई पर वह लम्बे पड़ रहे। अभी उन्हें नींद

न आ रही थी । अपने शिर के नीचे दोनों हाथों को रख कर वह एक गम्भीर विचार में मग्न हो गये ।

उनका हृदय शोक से परिपूर्ण था । वह कभी भी भक्त मरुवानी और उसकी वीरता उसके अद्भुत आत्मोत्सर्ग को भूल नहीं सकते थे । वह जान बूझकर आग में कूदा था, जान पड़ता था वह मृत्यु के लिये अत्यन्त उत्सुक था । वह दक्षिण की ओर भाग सकता था, किन्तु उसने बड़े साहस से इसका विरोध किया । वह बृहस्पति को उसी तरह देखता था जैसे एक स्वामी-भक्त कुत्ता अपने स्वामी को । यह अकसर होता है गहरा प्रेम और भक्ति से प्रायः अपना ही अनिष्ट करता हैं । स्वयं मरुवानी ने प्रेम के लिये बड़े आनन्द और उत्साह के साथ अपने प्राण दे दिये । यह निश्चय है कि ऐसे पुरुषों को पारितोषिक इसी जगत् में बहुत कम मिलता है ।

बृहस्पति का खयाल अब मृतक से लौट कर जीवितों की ओर आया । वह सोचने लगे नरेन्द्र, नरसिंह और सत्यव्रत का क्या हुआ । वे अवश्य इस समय तक झील पर पहुँच गये होंगे । उनको विश्वास था कि नाव उन्हें मिल जायेगी; क्योंकि यदि उन्हें बनाने की जरूरत पड़ी तो कप्तान और उसके साथी अवश्य जा पकड़ेंगे । 'यदि एक बार वे झील के पानी पर पहुँच गये, यद्यपि तब तक भय से पूर्णतया पिंड न भी छूटा हो, तो भी तुंगाला से वह बच जाँयगे ।'

यदि वे सुरंग की द्वार तक कुशलपूर्वक पहुँच गये तो उन्हें आगे जाना कठिन न होगा । किन्तु सुरंग द्वारा नीचे का रास्ता और भी भयंकर है । अपने अनुभव से बृहस्पति जानते थे कि बुद्धिशून्य आलसी दीनोशरट और ब्रण्टोशरट से बच निकलना उतना कठिन नहीं है, किन्तु यदि कहीं उनका भीषण शरट या इसी प्रकार के दूसरे भयंकर, बुद्धि में अधिक विकसित जानवर से सामना पड़ गया तो परिणाम बहुत खराब होगा ।

बृहस्पति की उत्सुकता के अनेक कारण थे । उन्हें भय था कि यदि वे झील पर पहुँच भी गये तो भी शायद वे आगे न बढ़ें, क्योंकि वे जानते हैं कि वहाँ एक ही नाव है उसके चले जाने पर बृहस्पति फिर आगे नहीं

बढ़ सकते। उनकी एकमात्र आशा थी कि वे रक्षकों के पहुँचते-पहुंचते रवाना हो जायँगे। वे समझ लेंगे कि वृहस्पति तो बादशाह के धर्मभाई हैं इसलिये उनके ऊपर खतरा नहीं है, यह विचार कर वे आगे चलते जायँगे और अन्त में सभ्य जगत् में पहुँच जायँगे। ऐसा वे सुरंग द्वारा ही कर सकते हैं, जो ऊपर की झील से नीचे की झील को मिलाती है और जिसमें तीक्ष्ण जलधार है और पानी किसी समय भी बढ़ जा सकता है, फिर उनके लिये वहाँ कोई शरण नहीं।

पर्यटक का सोचना कोई आनन्ददायक सोचना था। अपने बारे में उसे कुछ भी भय या अन्देशा न था। वे इसे जानते थे कि यदि मैं चाहूँगा तो अपने अवशिष्ट जीवन को अमतुंगाली में पाली का महामंत्री और दाहिना हाथ और एक बड़े आदमी की भांति रह कर बिता सकूंगा। उनकी सारी ही चिन्ताएं अपने मित्रों के सम्बन्ध में थीं। तथापि उन्हें यह समझते देर न लगी कि सन्देह और भय कुछ भी लाभ न पहुँचायेंगे। इन सभी बातों का खयाल छोड़ देना ही अच्छा है।

अन्त में नींद ने उन्हें आ घेरा। कई दिनों के थके-माँदे और न सोये रहने से वे दूसरे दिन बहुत देर तक सोते रहे। जब वे जागे तो उनके लिये भोजन पान सब तैयार था। तुंगाला लोग अधिकांश में निरामिषाहारी थे। मांस में वहाँ पहाड़ी चूहों का मांस मिलता था। उनके भोजन की प्रधान वस्तुएं थीं फल और तरकारियाँ—केला, खजूर, जामुन, शकरकन्द, मटर, और मूंग आदि कई अन्न।

दूसरे दिन, दिन भर बन्दी को गुफा छोड़ कर बाहर जाने देने का हुक्म नहीं था; किन्तु शाम को चार बजे के लगभग आदमियों की एक टोली आयी। सभी सशस्त्र तथा माला, अंगद आदि आभूषणों से सुसज्जित थे।

वृहस्पति को इन आदमियों के साथ जाने को कहा गया और कुछ देर के बाद वे उनके साथ अमतुङ्गाली की प्रधान सड़क पर थे। उस समय उन्होंने देखा, वह सारी ही भीड़ जो चारों ओर सड़क पर जमी थी, धीरे-धीरे मन्दिरवाले पर्वत की ओर जा रही है। वृहस्पति शहर में एक प्रसिद्ध

पुरुष थे। जिन लोगों ने उन्हें आँख से न भी देखा था वे भी अखाड़े की उनकी वीरता को सुन चुके थे। इतना ही नहीं वह बात, एक कान से दूसरे कान में होती हुई सारे तुंगालामें फैल गयी थी। यद्यपि अब उनके शरीर पर बाघम्बर न था, वे वही शाही चिह्नयुक्त तुंगाला लुंगी पहिने हुए थे, तो भी तुरन्त वे पहिचाने जा सकते थे। उन्होंने रास्ते में कई नागरिकों को अपनी ओर इशारा करते देखा।

जब वृहस्पति मन्दिरवाले उस पर्वत पर पहुँचे जहाँ अमरोकी की प्रतिमा थी। देखा तमाम मैदान आदमियों से भरा है। जान पड़ता था सारा शहर उठ कर चला आया है। वह जमावड़ा एक जातीय अखाड़े-सा जान पड़ता था। उसमें चारों ओर काले-काले आदमी ही आदमी दिखाई दे रहे थे। मैदान के पर्वतों की जड़ में सैनिकों की पलटन ने चारों ओर से घिरावा दे दिया था। इसके अन्दर अधिक प्रतिष्ठित व्यक्ति—धर्माचार्य, सरदार, प्रधान प्रधान नागरिक और दरबारी लोग बैठे थे। वृहस्पति को पहाड़ की उत्तर ओर मलक—जिसे इस देश में अमरोकी कहा जाता है—के पीछे ले गये। यहाँ चारों ओर अच्छी तरह नजर डाली जा सकती थी। पास ही एक थोड़ी सी ऊँची पहाड़ी थी, जिसमें बहुत सी गुफाएँ थीं। वहाँ भूमि पर बहुत से आदमी बैठे हुए थे; जिन्हें वृहस्पति ने पहचान लिया, वे राज्य के प्रधान प्रधान व्यक्ति थे।

वृहस्पति के आने के दस मिनट बाद तक कुछ न हुआ। सारी जनता बड़ी उत्सुकता, किन्तु शान्तिपूर्वक प्रतीक्षा कर रही थी। उसी समय शहर की ओर से एक भारी जुलूस आता दिखाई पड़ा, जिसमें आगे-आगे बादशाह के शरीर-रक्षक थे, तब शाही लाल झंडा और फिर स्वयं जादूगर बादशाह था जो अपने आस-पास के सभी आदमियों से ऊँचा था। बादशाह के पीछे प्रधानाचार्य और प्रधान मंत्री थे। वह अब भी वही बाघम्बर पहिने हुए था। उसके हाथ में एक भारी भाला था, जिसमें तरह-तरह के आभूषण जड़े हुए थे। उसके बालों में जगह-जगह हड्डियाँ गुथी हुई थीं। उसकी

गरदन में मनुष्य के दाँतों की माला थी। उसकी ये सभी बातें पूर्व अफ्रीका के झाड़फूंकों की भांति थीं।

वह सीधे अमरीकी के पीछे आया और एक चबूतरे पर बैठ गया। तब प्रधान धर्माचार्य ने लोगों से कहना शुरू किया। प्रधान धर्माचार्य एक छोटे कद का दुबला पतला आदमी था, उसका सिर नंगा किन्तु शरीर पर लम्बा लाल चोगा था। उसकी आवाज बहुत पतली थी। इसमें सन्देह नहीं कि उसकी बात को सभा के शतांश आदमी भी नहीं सुन सकते थे, किन्तु उससे कोई हर्ज न था। यह ऐसा देश था जहाँ समाचार-पत्र और मुद्रित पुस्तकाएं नहीं हैं, तथापि हर एक नई बात बिजली की भांति एक कान से दूसरे कान में होती हुई सारे देश में फैल जाती है। सभा के अन्त भाग में बैठे आदमी यद्यपि व्याख्याता के शब्दों को अपने कान से न सुनेंगे, किन्तु उन्हें दूसरों से सुनने में जरा भी देर न होगी। वृहस्पति समीप थे, अतः वे वक्ता के प्रत्येक शब्द को सुन सकते थे और जिस शब्द का अर्थ न भी आता था, उसके अर्थ को भी प्रकरण के अनुसार अनुमान कर लेते थे।

यह व्याख्यान पाली की स्तुति के साथ आरम्भ हुआ। पाली सबसे महान् है, उसकी शक्ति की सीमा नहीं। वह सभी बातें जानता है। वह संसार के सभी राजाओं से बढ़ कर है। तुंगाला देश में कोई भी भूत चिकित्सक नहीं है, उसका कारण यह है कि आज तक के सभी भूत चिकित्सकों से वह बड़ा है। सब लोग यहाँ इस सभा में इसलिये बुलाये गये हैं, कि पाली के जादू को देखें। सारे राज्य में प्रसिद्ध है कि तीन भारतीय कैदी बनाये गये हैं, जिनमें से एक बादशाह का धर्मभाई बना है। सभी कैदी भाग निकले थे, किन्तु पाली का धर्मभाई पकड़ा गया है; किन्तु बाकी दो दूर निकल गये। पता लगा कि वे पहाड़ पार कर गये हैं, इसलिये शरीर रक्षकों का कप्तान सरुना पकड़ने के लिये भेजा गया। किन्तु वह भी खाली हाथ लौट आया। और अब बादशाह स्वयं अपना जादू चलावेंगे। भगवान् अमरीकी भी जातीय अखाड़े में बलि चाहते हैं। त्यौहार का दिन सिर पर चला आया है। अमावस्या के दिन जब कि द्वितीय त्यौहार पड़ेगा, तो भगवान् की सेवा

में दोनों भारतीय बलि दिये जायँगे। यद्यपि वे जानते होंगे कि हमारा उधर जाना मरने के लिये होगा, तथापि उस दिन सूर्यास्त से पूर्व ही तीनों फ़रारी बादशाह के जादू के जोर से अमतुंगाली लौट आवेंगे। अपने व्याख्यान को समाप्त करते हुए प्रधान धर्माचार्य ने कहा, लोगों को स्वयं अपनी आँखों से इन बातों का प्रमाण देखना चाहिये। इसके बाद वह बैठ गया और एक बड़ी ढोल को सामने रख कर पीटने लगा। अब पाली स्वयं गफाओं की ओर चला। वह एक भयंकर जंतु की भांति चल रहा था। उसकी चाल बाघ की सी थी। उसके चेहरे की आकृति हृदय विदारक और बड़ी भयानक थी। वह इधर-उधर टहल रहा था, जान पड़ता था, अपने खड़े होने के लिये उपयुक्त स्थान ढूंढ रहा है।

अन्त में वह निश्चल खड़ा हो गया, उसी समय गुफा से बीसियों पुजारी दौड़ पड़े। उनके हाथों में नाना प्रकार की हड्डियाँ थीं। उनमें मनुष्य की हड्डियाँ, गोरीला की हड्डियाँ और प्राग्-ऐतिहासिक जन्तुओं की हड्डियाँ थीं। इन्हीं हड्डियों से उन्होंने चार हाथ व्यास का एक घेरा पाली के चारों ओर बना दिया। फिर तुरन्त वे वहाँ से हट गये मानों पाली की भयानक मुस्कराहट और क्रूर दृष्टि से वे भयभीत थे।

पाली उन हड्डियों के चारों ओर घूमने लगा, बीच-बीच में वह खड़ा होकर उन्हें अच्छी तरह देखता था। जान पड़ता था, उसे उनके देखने में आनन्द आ रहा था। पाली हब्शी वंश का था। यह बन्तू जाति नीगर नदी से नील तक, सहारा से ओरेन्ज फ्री स्टेट तक एक ही प्रकृति रखती है। ये लोग भूत-प्रेत पर बड़ा विश्वास रखते हैं। सयानों और तांत्रिकों पर उनका बहुत विश्वास है। वह उनके हँसने, चिल्लाने, हुँकारने—सभी से बहुत डरते हैं।

पाली इन सभी बातों को जानता था। आखिर वह भी तो बन्तुओं में से ही था। वह खूब जानता था, कि कैसे वह अपनी प्रजा पर अपना आतंक जमा सकता है, कैसे उन्हें मानसिक दास बनाया जा सकता है।

अकस्मात् वह पाँच फुट ऊपर उछल पड़ा, उसी समय उसने ऐसा

चीत्कार किया, जान पड़ता था, उसके पैर जलते कोयलों पर पड़ गये। जरा देर में वह चीत्कार गीत के रूप में परिणत हो गया। उसकी आवाज सिंह की सी थी। उससे सारा ही पर्वत प्रतिध्वनित होने लगा। लोग चुप-चाप बड़े आतंक और उत्सुकता से मुंह और आँखों को फाड़-फाड़ कर देख रहे थे। उसकी हरकत, उसकी गति-विधि सचमुच भयंकर दिखाई पड़ती थी। यद्यपि वह ढाई मन से अधिक भारी और न्यूनातिन्यून साठ बर्ष का था, तो भी वह बिल्ली की भांति तेज था। वह चौदह वर्ष के लड़के से भी अधिक फुर्तीला और पाँच वर्ष के बच्चे से भी अधिक लचीला था।

वह अपने सिर को इधर उधर हिलाता तो सिर में बँधी हड्डियाँ आपस में लग कर कटकटाती थीं। उसके कण्ठ की दन्तमाला भी एक दूसरे से लग कर ठकठकातीं। बीच-बीच में वह अपनी छाती भी जोर से पीटता था। एकाएक वह अस्थिचक्र के मध्य में खड़ा हो गया। उसके हाथ आकाश की ओर हथेली किये हुए उठे थे। इसी समय सूर्य पहाड़ी की आड़ में हो गया। उसने चिल्ला कर कहा–'आते हैं।'

उस समय सारी जनता पर सन्नाटा छा गया था, कोई श्वास भी जोर से न लेता था। उसकी आवाज इतनी तेज थी कि वह सबसे पिछले आद-मियों को भी स्पष्ट सुनाई देती थी। फिर चिल्ला उठा–'आते हैं! पाली का जादू इन अभागों को पकड़ लाया। देखो, अमरोकी पूजा चाहता है।'

लाखों आदमियों की उपस्थिति में भी वहाँ श्मशान की नीरवता छायी हुई थी। कोई खांसता भी न था, कोई हिलता न था। यह सन्नाटा पाँच मिनट तक छाया रहा। इस सारे ही समय, पाली हाथ ऊपर किये खड़ा था। तब उसकी एक भुजा गिर गयी। उसने अँगुली उठा कर शहरसे मन्दिर की ओर आनेवाले रास्ते की ओर इशारा किया–

'देखो! प्रत्येक आदमी और अपने ही नेत्रों से देखो!'

प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि उधर घूम गई, जिधर आने वाले मार्ग की कई सीढ़ियाँ थीं। एकाएक इन सीढ़ियों में से ऊपर वाली पर तीन आदमी

धीरे-धीरे आते दिखायी दिये, वे धीरे-धीरे और कष्ट के साथ देवता की पत्थरवाली मूर्ति की ओर बढ़ रहे थे।

उसी समय वृहस्पति अपने पैरों पर खड़े हो गये। एक मिनट में हड्डी को पैर से ठोकर मार कर वे पाली के पास पहुँच गये। उन्होंने चिल्ला कर पूछा—'यह कौन राक्षसी काम है ?'

पाली ने ठठाकर हँसते हुए कहा—'जादू, टोना, मंत्र—जो तुम्हें पसन्द हो कहो, मेरे धर्मभाई।'

वृहस्पति ने मारने के लिये घूंसा ताना। उसी समय राजा ने हुक्म दिया—'पकड़ रखो।'

एक ही क्षण में वृहस्पति जबरदस्ती पकड़े जाकर अपनी जगह पर पहुँचाये गये। वहाँ वे बहुत घबराये हुए अपने सामने की ओर ताकने लगे। वह तीनों आदमी भी सुप्त-आत्मा की भांति थे। पहिले नरेन्द्र आ रहा था, उसके पीछे सत्यव्रत और अन्त में नरसिंह। तीनों ही आगे बढ़ कर पाली के पास पहुँच गये। वह अब भी हाथ उठाये खड़ा था। पाली ने उन्हें खड़ा होने के लिये कहा। वे पत्थर की मूर्ति सदृश निश्चल हो गये।

वृहस्पति ने नरेन्द्र का नाम लेकर कई बार पुकारा, लेकिन नरेन्द्र ने जवाब ही न दिया। उसी समय बड़े जोर की आवाज आयी—

'पाली महान् है, तुंगाला का बादशाह महान् है।'

दो बलवान

उस सारे विचित्र विधि व्यवहार के होते समय बृहस्पति दखल देने में असमर्थ थे। अपने मित्रों को कष्ट भोगते देख कर भी वे असमर्थ, हाथ-पैर बाँधे दर्शक की तौर पर रहने के लिये मजबूर थे। क्या बात है, यह उन्हें निश्चय मालूम हो गयी थी। नरेन्द्र, सत्यव्रत और नरसिंह तीनों हेप्नाटिक मुग्धावस्था में डाल दिये गये थे। यह अनुमान करना असंभव था, कि वे उसी शाम को मुग्ध कर दिये गये, क्योंकि वे अमतुंगाली से कम से कम बीस कोस दूर जरूर पहुँच गये थे।

पीछे बृहस्पति को असली बात मालूम हो गयी। नरेन्द्र और उनके साथी सकुशल झील के तट पर पहुँच गये थे, उनको सौभाग्य से उसी समय डेंगी भी मिल गयी थी, किन्तु यह खयाल करके, कि बृहस्पति भी पीछे आ रहे हैं, वे ठहर गये। उन्होंने निश्चय किया कि अगले सबेरे तक प्रतीक्षा करके तब चला जाये।

बीच में सरुना उनका पीछा कर रहा था। जब उन्होंने सड़क छोड़ कर नीचे का रास्ता लिया था, तो गीली जमीन में उनके पैर बराबर उगते चले जा रहे थे। उस रात, यद्यपि नरेन्द्र स्वयं चौकसी करने पर थे, तो भी सरुना के आदमियोंने एकाएक पहुँच कर पकड़ ही लिया। वे वहाँ से दर्रे तक लाये गये, जहाँ सरुना ने बड़े शोक और सम्मान से वीर मरुवानी के शव को दफ़नाया। मरुवानी स्वयं उसका एक बड़ा ही विश्वासपात्र और प्रिय अफसर रहा था। उसी शाम को तीनों बन्दी मुग्ध कर दिये गये। सरुना को पाली की शक्ति का परिचय था, इसलिये इसके लिये उसे अचम्भित न होना पड़ा। वास्तवमें वह रक्षक सैनिकोंका कप्तान ही न हो सकता था, यदि वह पाली का माध्यम न होता। पाली जैसे तैसे पर विश्वास नहीं कर लेता था। केवल वीरता और योग्यता ही को पाली जरूरी नहीं समझता था। वह यह भी चाहता था, कि उसका मन, उसकी आत्मा भी

मेरे हाथ में हो। इसी से पाली ने बिना किसी हरकारे के अपनी आज्ञा उसके पास पहुँचा दी थी।

कप्तान अपने सिपाहियों से अलग एकान्त में जहाँ कोई छेड़ने वाला न था—एक पत्थर पर जाकर बैठ गया। उसने अपने नेत्र बन्द कर लिये। अभी बहुत देर प्रतीक्षा न करने पाया था, कि उसे पाली का दर्शन और हुक्म मिला। फिर वहाँ से उठकर, वह अपने सिपाहियों के पास आया।

यह सूर्यास्त का समय था, किन्तु अब भी इतना प्रकाश था, जिसमें चारों ओर की भूमि और वृक्ष अच्छी तरह दिखायी पड़ते थे। सैनिकों ने वहाँ ही रात भर विश्राम करने के लिये आशा की थी, किन्तु उन्होंने बड़े आश्चर्य से सुना कि बंदियों को यहीं छोड़ अमतुंगाली चलना है। वे दो सौ गज भी आगे न बढ़े थे, कि पीछे फिर कर देखते हैं, तीनों कैदी एक पंक्ति में धीरे-धीरे उनके पीछे आ रहे हैं।

जब सरुना शहर में पहुँचा, तो उसने झट पाली को इसकी सूचना दी। पाली को यह मालूम हो गया था कि कब उसकी कठपुतलियाँ उसके पास पहुँचेंगी। उसने अपने प्रभाव को अपनी प्रजा पर और दृढ़ करने का इसे अच्छा मौका समझ कर; पर्वत पर सबको जमा कराया था। उसका चिल्लाना, कूदना, नाचना, हड्डियों और खोपड़ियों का आसपास लगाना, यह सब बाहरी दिखावा था, जिसमें वह भोले-भाले आदमी असली तत्त्व को जरा भी न समझ, इसे पाली का जादू-मंतर समझ लें। और वैसा ही सचमुच हुआ भी, लोगों ने चिल्लाकर कहा—'पाली महान है।'

जब तीनों आदमी उसके पास आ गये, तो उसने उनके ऊपर अपना हाथ वैसे ही फेरा, जैसे मेस्मेरेजिष्ट फेरते हैं। जनता पर प्रभाव डालने तथा असलियत पर परदा डालने के लिये उसने नीचे से एक जन्तु की हड्डी उठा ली, और उससे पहिले नरेन्द्र को छुआ, फिर सत्यव्रत को, और अन्त में नरसिंह को। छूते मात्र ही तीनों सचेत हो गये। उनके मुखों पर भारी श्रम के चिह्न थे।

नरेन्द्र कितनी देर तक भौंचक से खड़े रहे, इसी समय उनकी दृष्टि

एकाएक वृहस्पति पर पड़ी। वह आश्चर्य से चिल्ला उठे, और उन्होंने आगे बढ़ने के लिये कदम भी बढ़ाया।

'मिफ़ जी ! आह, मुझे बड़ा ही आनन्द हुआ आपको देख कर।'

उन्होंने और कुछ भी न कहा। उन्हें जान पड़ता था, जैसे दशाश्वमेध या मणिकर्णिका पर किसी मित्र से मिल रहे हैं। वृहस्पति के सिवाय उनकी दृष्टि में उस समय और कोई था ही नहीं। उन्हें उस असंख्य जनता, उन हजारों सैनिकों, पुजारियों और सरदारों की कुछ भी खबर न थी, जो कि उनके चारों ओर बैठे और खड़े थे। उन्हें स्वयं पाली की उपस्थिति का भी पता न था। कुछ भी न मालूम था कि क्या हुआ।

सत्यव्रत और नरसिंह की अवस्था कुछ और ही थी। सत्य, जान पड़ता था, अत्यन्त थक गया है। वह जमीन पर बैठ गया, और उसने अपने सिर को दोनों हाथों से दाब लिया। जान पड़ता था, उसके सिर में बड़ा दर्द है। नरसिंह अत्यन्त भयभीत हो गया। जिस वक्त उसकी दृष्टि पाली पर पड़ी। उसकी आँखें निकल आईं। उसकी काली पुतली के चारों ओर की सफ़ेदी बिलकुल साफ़-साफ़ दिखायी पड़ रही थी। उसका शरीर काँप रहा था।

उसी समय पाली ठठा कर हँसा। नरेन्द्र का ध्यान उधर आकृष्ट हुआ। वह घबड़ा कर चिल्ला उठा—'ओह ! मैं यहाँ कैफ़े आ गया ?

नरेन्द्र ने यह बात हिन्दी में वृहस्पति को सम्बोधित करके कही थी। जिसके उत्तर में पाली बोला—'तुम्हें तुंगाला भाषा में बोलना होगा।' फिर वृहस्पति से कहा—'यह क्या पूछता है ?'

वृहस्पति, जो अब भी बँधे हुए थे, बोले—'वह पूछता है, कि मैं कैसे अमतुङ्गाली आ गया ?'

पाली—'इसलिये कि मेरी इच्छा हुई; और वह मरेगा भी, क्योंकि मेरी वैसी ही इच्छा है।'

वृहस्पति—'वह मेरा मित्र है, ओ बादशाह, और तुम मेरे धर्मभाई हो। पाली को अपनी शपथ कदापि न भूलनी चाहिये।'

पाली ने वृहस्पति के मुख की ओर सीधे देखा। उन भयंकर काली

आँखों को इस प्रकार अपने ऊपर पड़ते देख कर बहुत कम आदमी स्थिर रहने का साहस करते।

बृहस्पति—'मेरे मित्र, तुम्हारे मित्र होंगे, क्या यह वाक्य तुम्हें याद है, जिसे उस दिन इसी पर्वत पर अमरोकी के सम्मुख तुमने कही थी ?'

पाली (शान्तिपूर्वक)—'इन्होंने अपने आपको मेरा दुश्मन सिद्ध किया है और मेरे दुश्मन तुम्हारे दुश्मन हैं। इस तरह मेरे, धर्मभाई यहाँ शपथ से कोई विरोध नहीं आता। निश्चय ही यह जवान और वह लड़का, यह दोनों अमरोकी की भेंट होंगे। बाकी रहा वह हब्शी, सो वह गुलाम है, उसका यह सौभाग्य कहाँ कि देवता पर चढ़ाया जाये।'

इस समय तीनों अभागे मनुष्यों को असली बात का पता लग गया। स्थिति की भीषणता भी हद को पहुँच गयी थी। वह स्मरण करनेमें भी असह्य मालूम होती थी। नरेन्द्र और सत्यव्रत दोनों को अब साफ़-साफ़ मालूम होने लगा कि उनके जीवन का खातमा करीब है। बल्कि उससे पहिले ही उनका सब कुछ उनके हाथ से गया। अब वे अपने को स्वतंत्र कहने के योग्य नहीं रहे। वे आध्यात्मिक, मानसिक, शारीरिक तीनों तरह से एक क्रूर मनुष्य के दास थे। बृहस्पति की अद्‌भुत वीरता से पहिले उनके प्राण बच गये थे, किन्तु अब निश्चय है कि पाली उनकी बात नहीं सुनेगा।

बृहस्पति भी अपने हृदय में निराश हो गये। उन्होंने पाली का तर्कानुमत उत्तर पा लिया था। अब कोई उपाय न था जिससे वे पाली पर कुछ प्रभाव डाल सकते। दया के लिये पाली के हृदय में स्थान न था। उसके चेहरे के रंग से जान पड़ता था कि अब दुनिया में कोई भी उसके इरादे को न बदल सकेगा।

बादशाह ने तुरन्त दूसरी ओर मुंह करके सरुना को बुलाया। सरुना तुरन्त पुजारियों के समूह में से बाहर निकल आया। पाली ने बन्दियों को ले जाने के लिये कहा। उसी समय उस जगह से वे लोग शहर की ओर रवाना हुए। बृहस्पति वहीं पाली के सामने ही रहे।

पाली–'और अब मेरे धर्मभाई, तुम्हारे लिये दो रास्ते हैं, तुम अपनी प्रसन्नता से चाहे जिसे स्वीकार करो। चाहे तुम मेरे शत्रु बनो, चाहे मित्र, बस यही दो बात है। मेरा रक्त तुम्हारे रक्त में मिल चुका है, अतः सच कहता हूँ मैं तुम्हें अपना मित्र देखना चाहता हूँ। लोग तुम्हारी बुद्धि और ज्ञान की प्रशंसा करते हैं मुझे स्वयं भी तुम्हारी हिम्मत और शक्ति का परिचय मिला है।'

पास आकर उसने धीरे से कहा–'मुझे कुछ तुम्हारे कानों में रहस्य की बात कहनी है। मैं नहीं चाहता कि और कोई भी इस रहस्य को जाने। तुमने स्वयं देख लिया कि कैसे मैं अपनी इच्छा शक्ति से दूसरों के मन और शरीर पर अधिकार जमा सकता हूँ। लेकिन यह तो बताओ क्या तुम भी इसके विषय में कुछ जानते हो?'

वृहस्पति–'मैं थोड़ा सा जानता हूँ। हमारे देश में कितने ही आदमी हैं, जिनके पास यह शक्ति है।'

पाली–'तो वे फिर इसका प्रयोग अच्छे या बुरे–किस काम में करते हैं?'

वृहस्पति–'कदाचित् ही बुरे काम में, अन्यथा प्रायः अच्छे ही काम के लिये प्रयोग करते हैं, और बहुधा इसके द्वारा बीमारी दूर की जाती है।'

पाली–'हाँ, और मैं भी अपने स्वास्थ्य के लिये इसे प्रयुक्त करता हूँ। जबसे मुझे अपनी इस शक्ति का ज्ञान हुआ है, तब से कभी भी मैं बीमार नहीं पड़ा। मुझे बुढ़ापे की कोई भी निर्बलता नहीं सताती। मैं दृढ़, बलिष्ठ और फुर्तीला हूँ, यह इसीलिये कि मैं ऐसा रहना चाहता हूँ। किम्बदन्ती है, मुझे मृतसंजीवनी बूटी मिल गयी है, जिसके कारण मैं वृद्ध नहीं होता, और न मरता हूँ। मैं इस किम्बदन्ती को भी उसी प्रकार फैलने देता हूँ, जैसे कि और कितनी ही बातों को, जो वास्तव में सत्य नहीं होतीं। लेकिन तुमसे एक बात कहना चाहता हूँ। जानते हो, अपने एकान्त और शान्त कमरे में बैठे हुए मैंने तीन बार जोर जोर से प्रत्यत्न किया, कि तुम्हें अपनी इच्छा-शक्ति–जिसे लोग जादू कहते हैं–की अधीनता में लाऊँ, किन्तु प्रत्येक बार

में असफल रहा। सचमुच मैं इस प्रकार से असफल हुआ कि दूसरा आदमी इस असफलता से क्रोध और द्वेष करने पर तुल जाता। किन्तु द्वेष क्षुद्र हृदयों के लिये है, पाली का हृदय महान् है।

'मेरी धारणा है, कि मेरे राज्य भर में सिर्फ तुम्हारे ही में कुछ है, जो पाली की इच्छा से बलवत्तर है। वह, जादूगर बादशाह की आत्मा के सामने परास्त हो नहीं सकता। इसी कारण से मैं तुम्हें अपने राज-सिंहासन की दाहिनी भुजा बनाना चाहता हूँ। मैंने तुम्हें अपना धर्मभाई बनाया यह इसीलिये कि मैं तुम्हें सर्वदा अपना मित्र देखना चाहता हूँ।'

पाली इतना कह कर चुप हो गया। वृहस्पति उस समय किंकर्त्तव्य-विमूढ़ से हो गये थे। वे दोनों आदमी लोगों से अलग खड़े हुए थे। सारी जनता सभा विसर्जन की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रही थी। सचमुच ऐसे दो आदमियों का एक जगह पर मिलना भी मुश्किल है, जो कुछ बातों में एक दूसरे से सर्वथा मिलते हों, और कुछ बातों में जमीन और आसमान का फ़र्क़ रखते हों।

दोनों ही भीमकाय थे। उनके सामने उस जनता का प्रत्येक आदमी छोटा मालूम होता था। दोनों विशाल वक्ष, वृष-स्कन्ध, कदली-स्तम्भ-जानु, परिघ बाहु थे। दोनों के ललाट प्रशस्त और उच्च, तथा नेत्र तीक्ष्ण थे। किन्तु जहाँ एक सौम्य और शान्त था, वहाँ दूसरा क्रूरता और उग्रता की साक्षात् मूर्ति। एक था देवता और दूसरा राक्षस। एक का श्वेत श्मश्रु-कूर्च-केशधारी गौरमुख ऋषि का सा था, और दूसरे का कोयलेसे भी काला बन्दर से भी भयानक मुख पिशाच का सा।

वृहस्पति—'बादशाह सलामत, जो कुछ तुमने कहा वह ठीक हो सकता है, किन्तु इससे परिणाम क्या निकलेगा?'

पाली—'ठीक, बिलकुल पते की बात पूछी। मैं भी तुम्हें साफ़ दो शब्दों में बतलाना चाहता हूँ। या तो मेरे साथ मेरे गुफा-महल में मेरे मित्र बनकर चलो, अथवा मेरे विश्वास के अयोग्य बन कर, अपने कैदखाने में लौट जाओ।'

बृहस्पति पहिले हिचकिचाये, फिर बोले–'मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ, क्या फिर दूसरी शपथ की आवश्यकता है ?'

पाली–'नहीं, वही धर्मभाई होने की शपथ पर्याप्त है। जिसकी तुमने शपथ खा ली है, कि मैं तुम्हारा विरोध न करूँगा।'

बृहस्पति–'बादशाह के शरीर या जीवन के विरुद्ध मैं कुछ भी न करूँगा। किन्तु क्या मुझे अपने मित्रों को बचाने का मौका मिलेगा। मैं तुम्हें सजग कर देना चाहता हूँ, मैं एक क्षण के लिये भी वैसा करने से बाज नहीं आ सकता।'

पाली ने हँसकर कहा–'इसके लिये तुम बिलकुल स्वतंत्र हो। ऐसा अवसर ही तुम्हें मिलने न पायेगा। दोनों भारतीय बड़े कड़े पहरे में रखे गये हैं। बाकी रहा हब्शी, उसकी कोई परवाह नहीं। वह बाजार में गुलाम बनाकर बेंच दिया जायगा। इस दशा में बहुत से ऐसे जंगली असभ्य हैं।'

बृहस्पति जंगलों के विषय में पाली की अपेक्षा अधिक जानते थे। तथापि उन्होंने कहना उचित न समझा। वे जानते थे कि तुंगालों के दास नितान्त असभ्य नरभक्षक घोर जंगलों में पकड़े गये हब्शी हैं, और नरसिंह बकुंगा जाति का है, जो उसकी अपेक्षा अधिक सभ्य है।

पाली–अच्छा, निश्चय तुम्हारे हाथ में है।'

बृहस्पति–'निश्चय हो चुका, मैं तुम्हारे साथ आ रहा हूँ।'

पाली इस पर अत्यन्त आनन्दित हुआ, उसने दोनों हाथों को पीसकर कहा–'तो आओ मेरे धर्म के भाई, यह बड़ा ही अच्छा हुआ, जो मुझे एक मनुष्य, एक मित्र–सुख-दुख का साथी मिला। आज रात को ज्ञानी, जादूगर बादशाह के साथ भोजन करेंगे।'

पाली बृहस्पति के कन्धे पर हाथ रख कर खुली जगह की ओर चल पड़ा। वहाँ से वह सीढ़ी द्वारा शहर की सड़क पर आ गया। उसके साथ-साथ शाही शरीर-रक्षक और आगे-आगे शाही झंडा-बरदार था।

जब बादशाहकी सवारी मैदान से चली गयी, तो लोगों में फिर हल्ला होना शुरू हुआ। मालूम हुआ पानी का बाँध टूट गया। आवाज क्या थी,

जैसे सहस्रों महाकाय मधुमक्खियाँ भनभना रही हों । उनकी बातों में और कुछ न था, सिर्फ़ जादूगर बादशाह की शक्ति और उसका जादू, अमरोकी का पर्व जो तीन सप्ताह में आनेवाला था । उस समय एक दूसरा भीमकाय जानवर अखाड़े में छोड़ा जायगा । या—यदि वह न मिल सका, तो बलि के मनुष्य जीवित आग में डाल दिये जायँगे ।

पिंजड़ा

पाली और वृहस्पति की मित्रता बिलकुल सीधी सादी थी। जादूगर बादशाह सब प्रकार से बलिष्ठ मनुष्य था। वह अपनी शारीरिक और मानसिक उत्कृष्टता को अपनी प्रजा से अधिक समझता था।

वृहस्पति में उसने अनेक शुभ गुण देखे। उसने यह भी देखा, कि वे अपने आप पर काबू रखने वाले हैं। उसने यह भी बहुधा सुना था, कि भारतीय विज्ञान और आविष्कार में निपुण होने के साथ-साथ स्वार्थी नहीं होते, वे जैसे हो तैसे दूसरों के घर में मेहमान के रूप में प्रवेश करके, असली मालिक को निकाल कर स्वयं मालिक नहीं बनना चाहते। वे संसार में अपने को छोड़ कर सभी को बर्बर और निर्बुद्धि नहीं मानते। बल्कि संसार में सभी को समुन्नत और स्वतंत्र देखना चाहते हैं। अनेक विषयों में पाली एक बड़ा आदमी था। उसकी योग्यता बड़ी थी, किन्तु वह एक चतुर मनुष्य था, अतः वह यह भी समझता था कि न मैं सर्वज्ञ हूँ, और न सर्वशक्तिमान्। वह उन लोगों की सहायता और सम्मति से लाभ उठाना चाहता था, जो उससे अधिक ज्ञान और अनुभव रखते हैं।

इसी प्रकार का आदमी उसने वृहस्पति को पाया। उसने कभी भी ऐसा आदमी न पाया था, जिसने इतना प्रभाव उस पर डाला हो। यह ठीक है कि वह बर्बर, क्रूर और बहुत कुछ वहशी था, किन्तु उसमें इन अवगुणों के साथ-साथ अनेक गुण भी थे। तिलमात्र भी डाह के बिना, बड़ी उदारता से उसने वृहस्पति के लिये अपने हृदय में स्थान दिया। यह एक बलवान पुरुष का दूसरे बलवान के साथ प्रेम था।

इस घनिष्ठता के कारण अगले कुछ दिनों में वृहस्पति ने बादशाह के दरबार के सम्बन्ध की अनेक नयी बातें जान लीं। पाली का स्नेह और विश्वास अब उन पर बहुत बढ़ गया था। सभी सार्वजनिक अवसरों पर वह बादशाह के साथ रहने लगे।

तुंगाला बड़ी विचित्र जाति है। किन्हीं-किन्हीं बातों में वह साधारण हब्शी जातियों के समान है। वहाँ शहर के चारों ओर के खेतों का काम स्त्रियाँ करती हैं और मरद मरदानगी के काम—शिकार और युद्ध। किन्तु शिकार का धावा रोज-रोज तो होता नहीं और युद्ध का अवसर भी तुंगाला में बहुत कम है, अतः वे बहुत आलसी हो गये हैं। तो भी अधिकांश हब्शियों की भांति वे भी मद्यप नहीं होते। उनका धर्म भी उस भूत-प्रेत की पूजा से कहीं ऊँचा है, जो कि सारे अफ्रीका के हब्शियों में फैली हुई है। जितना ही बृहस्पति अध्ययन करते गये, उतना ही उनका यह विश्वास और पक्का होता गया, कि वह एक संकर जाति के हैं। अन्य बहुत से पर्यटकों की भांति वे एक अच्छे मानव-विज्ञानवेत्ता थे। उन्होंने मनुष्य जाति के अनेक परिवारों और वंशों का अध्ययन किया था। उन्हें पता लगा कि तुंगाला की रगों में भी उन्हीं सामीयों—यहूदियों और अरबों—का रक्त है, जिनसे कार्थेजीय उत्पन्न हुए थे।

वहाँ भी कार्थेजीयों की भांति दरबारमें बड़ी तड़क-भड़क रखी जाती थी। एक विशेष रीति-रस्म अदा किये बिना एक भी काम नहीं होता था, और रीति-रस्म में बड़ा हाथ, वहाँ के धर्माचार्यों और पुजारियों का था। पाली के खाने-पीने के बरतन सोने के थे। यद्यपि वहाँ के लोग सोने और पीतल की बहुत सी चीजें बनाते थे, किन्तु चाँदी और लोहे को वे जानते भी न थे।

पाली के गुफ़ावाले महल की एक-एक बात को वर्णन करने के लिये एक पृथक् पुस्तक की आवश्यकता होगी। बीच वाले बड़े बैठके के चारों ओर छोटी-छोटी अनेक गुफाएं थीं, जिनमें राजा और कितने ही दरबारी लोग रहते थे। सिंहासन भवन के समान ही सारे कमरों में लाल मशाल जलते रहते थे। बृहस्पति को इस लाल रोशनी के विषय में जानने की बड़ी उत्सुकता थी, क्योंकि उन्होंने कभी ऐसा नहीं देखा था। वे मशाल लगातार बहुत देर तक जलते रहते थे। उनका लाल प्रकाश इतना तीव्र था, कि उससे बहुत दूर तक अच्छा प्रकाश होता था। पूछा, पैरवी करने से पता

लगा कि शहर के पास कितने ही तेल के कूएं हैं। यह कोई आश्चर्य की बात न थी। यह तेल निस्सन्देह प्राफिन था, और ऐसा होने का कारण भी था, क्योंकि आस-पास के चट्टानोंके स्तर अधिकतर स्लेट के थे, और इसी के कारण पहाड़ों का ऊपरी भाग चौरस था। यह स्लेटों की तह अखाड़े की दीवारों, सड़कों के किनारों तथा गुफाओं की दीवारों में भी देखने में आती थी।

वहाँ एक विचित्र प्रकार का वृक्ष था। यह अधिकतर पर्वतों की जड़ में होता था। इस वृक्ष की छाल बहुत ही लाल, तथा खमीरी रोटी की भांति बहुत से छोटे-छोटे छिद्रों से भरी होती थी। तुंगाला लोग इस छाल का छोटा-छोटा टुकड़ा करके धूप में सुखा लेते थे, फिर उसे तेल में डुबा दिया जाता था, जिससे कि वह अधिक देर तक जलती रहे। इसका प्रकाश बहुत तेज और लाल होता था। ये मशाल उन गुफाओं में रात-दिन जलते रहते थे। इस छाल का रासायनिक योग ऐसा था कि तेल जलते वक्त किसी प्रकार की अरुचिकर गन्ध न आती थी।

वृहस्पति सभी अभिनव वस्तुओं के तत्त्व को जानने के लिये अत्यन्त उत्सुक थे। सचमुच यदि इस सारे समय उन्हें अपने मित्रों के दुर्भाग्य की चिन्ता न होती तो वे बड़े आनन्दित होते। तो भी समय-समय पर वे इन विषयों पर तुंगाला के प्रधान-प्रधान पुरुषों और स्वयं पाली से भी प्रश्नोत्तर करते रहते थे।

यह मालूम हुआ, कि अमरोकी को चढ़ाया जाने वाला पुरुष अखाड़े में लोगों के सामने किसी भयानक जन्तु द्वारा मरवाया जाता है। तथापि यह निश्चित नहीं है कि ऐसा जन्तु बराबर ही मिलता रहे, अतः जन्तु के अभाव में वह व्यक्ति प्राचीन कार्थेजीय प्रथा के अनुसार प्रज्वलित अग्नि में मन्दिर के पास जला डाला जाता है। बादशाह स्वयं अखाड़े द्वारा दी जाने वाली बलि ही को पसन्द करता था, क्योंकि लोगों का भी इससे मनोरंजन होता था। वह इसे लोकरंजन का अच्छा जरिया समझता था।

वृहस्पति को दरबार में रहते चार दिन बीते थे, इसी समय एक आदमी

जंगल से हाँफता हुआ आया। वह उस शिकारी टोली का आदमी था, जो वृहस्पति के लौटने के दिन भेजी गयी थी। उस आदमी ने सूचना दी, कि उन्हें एक महाभयंकर जन्तु मिला है। उसके बराबर बड़ा और भयंकर जन्तु सारी दक्षिणी घाटी में कभी नहीं देखा गया। उसे एक ऐसे तंग नाले में कर दिया गया है, जहाँ से वह नहीं निकल सकता, क्योंकि शिकारियों ने निकलने के रास्ते को बड़ी-बड़ी धुनी जला कर रोक दिया है। जानवर बिलकुल बेबस है, किन्तु बिना पिंजड़ा और बहुत से आदमियों की सहायता से हम उसे पकड़ कर नहीं ला सकते।

जब पाली ने इस समाचार को सुना तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ। यह सवेरे ही का वक्त था, उसने तुरन्त अपना शिकारी भाला माँगा। आध घंटा बीतते-बीतते बादशाह वृहस्पति के साथ उस घाटी की ओर चल पड़ा। उसके साथ पचास शरीर-रक्षक और एक भारी संख्या उन मजदूरों की थी जो कि अखाड़े वाले बड़े पिंजड़े के टुकड़ों को लिये थे।

पिंजड़े की पीतल वाली सीखें इतनी मोटी थीं, जितनी आदमी की कलाई। यह पिंजड़ा पचास हाथ लम्बा और कोई बीस हाथ ऊँचा था। इसकी शकल एक प्रकाण्ड मालगाड़ी की सी थी। इसके एक सिरे पर एक दरवाजे का मजबूत फाटक था। वह एक जंजीर के जरा से खींचते ही अपनी जगह पर गिर कर दरवाजे को बंद कर देता था। पहियों की पुट्ठियों के गिर्द बहुत से डंडे लगे हुए थे, जिससे उनकी आकृति मथानी की तरह मालूम होती थी। पिंजड़ा जब ठीक तरह पुर्जे-पुर्जे जोड़कर तैयार कर दिया जाता था, तो सैकड़ों हब्शी गुलाम रस्से लगा कर तथा पहियों के हैंडिलों को पकड़ कर खींचते थे।

यह पिंजड़ा अखाड़े के निकास पर बराबर रखा रहता था। उस जगह से पिंजड़ा खींच कर शहर में लाया गया। शहर के पश्चिमी अन्त वाले चौक पर शाही अफसरों की देख-भाल में इसका एक-एक टुकड़ा अलग किया गया। वृहस्पति आदि से अन्त तक इस कार्य को बड़े ध्यान से देख रहे थे। उनको यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसमें कोई भी ऐसा

टुकड़ा नहीं जो अलग न किया जा सकता हो । ये सभी पुर्जे उतने ही वजन के थे जिसे एक आदमी आसानी से ले चल सके ।

सारे गुलाम एक पंक्ति में सैनिकों की भांति खड़े किये गये थे, उन सब के हाथ में एक-एक सीखचा था । इन आदमियों की संख्या इतनी थी कि सड़क पर उनकी दोनों पंक्तियाँ आगे-पीछे एक मील से कम दूर में न रही होंगी ।

बादशाह की टोली बहुत जल्दी-जल्दी जा रही थी, इसलिये थोड़ी ही देर में कुली लोग पीछे रह गये । पाली उस जानवर को देखने के लिये बड़ा उत्सुक था । उसने वृहस्पति से कहा भी कि वह एक बड़ी भयंकर जाति का है । पाली ने जो कुछ उसकी हुलिया बयान की उससे उन्हें निश्चय हो गया कि एक बार फिर भीषण शरट से मुकाबिला पड़ा । उन्हें यह विचार करके बड़ा दुःख हुआ कि बेचारे नरेन्द्र और सत्यव्रत ऐसे भयंकर जन्तु के सामने डाले जायँगे ।

अब वृहस्पति को उनकी सभी चीजें मिल गयी थीं । वे उस वक्त अपनी बन्दूक को लिये हुए थे । उनके साथ नरसिंह भी था, क्योंकि पाली ने उन्हें अपनी इच्छानुसार दास रखने की अनुमति दे दी थी और उन्हें वकुंगा से बढ़ कर प्रिय और विश्वासपात्र संगी मिल ही कहाँ से सकता था ।

इस सारे ही समय नरसिंह एक स्वप्न देखने वाले मनुष्य की भांति था । तरह-तरह की विचित्र बातें जो उसकी आँखों के सम्मुख रोज घट रही थीं वह मुश्किल से उन पर विश्वास कर सकता था । तथापि वृहस्पति पर उसका पूर्ण विश्वास था । उसको इस बात का विश्वास था कि जब तक मैं इनके साथ हूँ तब तक कोई खतरा नहीं है ।

अबकी बार वे उस रास्ते से दक्षिणी घाटी में न गये, जिससे कि पर्यटक लोग आये गये थे; बल्कि यह और ही कोई रास्ता था । यह रास्ता और पश्चिम एक पहिले से भी सुनसान प्रदेश में होकर गया था । वहाँ के नंगे पर्वतों की चोटियाँ आकाश से बातें कर रही थीं । वह उस जगह से बहुत दूर आगे बढ़ कर भाप वाली घाटी के नीचे जहाँ कि उन्होंने अपनी

डेंगी छोड़ी थी पहुँचे । लेकिन प्रदेश वैसा ही था । झील का पानी क्या था, निरा पंक, जिसके ऊपर भाप का परदा पड़ा था और करील की तरह पुरातन पौधे उगे थे ।

वायुमंडल भारी था । मालूम होता था कि साँस लेने के लिये वहाँ हवा नहीं है । घाटी दोनों ओर से ऊँचे-ऊँचे पर्वतों द्वारा घिरी हुई थी । जान पड़ता था एक प्रकांड कड़ाह चूल्हे पर रखा हुआ है । आस-पास के पर्वत उसी की बारियाँ हैं, और नीचे की आँच से भीतर का कीचड़ अभी ही जरा-जरा गरम होने लगा है और उसके कारण चारों ओर गरम भाप फैल रही है ।

झील के तट पर पहुँच कर बादशाह की टोली दक्षिण ओर को मुड़ी । हरकारे के पीछे-पीछे वह एक गहरे नाले के पास पहुँची । यहाँ बहुत से सिपाही छोड़ दिये गये और पाली तथा वृहस्पति छः अन्य आदमियों के साथ एक ओर से पर्वत पर चढ़े । उनके बिलकुल आगे एक ऊँची पहाड़ी थी, उसमें एक दरार सा था जो कि उठते हुए धूएं के कारण भली प्रकार दिखाई न दे रहा था ।

यह धुआँ बिलकुल खम्भे या दीवार की भांति सीधा उठ रहा था जिससे जान पड़ता था कि उस नाले में साँस लेने के लिये जरा भी हवा नहीं है । जैसे ही बादशाह के आने की खबर मिली वैसे ही शिकारियों का सरदार सामनें आया और उसने भाले को ऊपर उठा कर सलाम किया ।

बादशाह ने पूछा, जानवर सुरक्षित है न ? और जब उसने सुना 'हाँ' तो वह बहुत खुश हुआ । उसने कहा कि पिंजड़ा देर में आवेगा इसलिये पकड़ने का काम रात में होगा ।

वृहस्पति ने पूछा कि किस तरह वह जानवर को पिंजड़े के भीतर लावेंगे । इस पर पाली ने हँस कर कहा—'हमारे पास उसका ढंग है, मेरे ज्ञानी, आज रात को तुम अपनी आँखों से उसे देखोगे । पहिले तुम्हें उस जन्तु को देखना चाहिये । हम नाले के ऊपर से उसे देख सकते हैं ।'

बादशाह अत्यन्त उत्सुक था, बल्कि एक तरह से घबड़ाया हुआ भी

था। यद्यपि वे कई मील चल कर आये थे तो भी ऊपर चढ़े। पाली की इच्छा थी, नाले के मुंह के ऊपर वाले भाग ही पर कहीं चढ़ा जाय, जहाँ से कि नाले के भीतर उस भयानक जन्तु को देखा जा सके।

किन्तु, वहाँ सीधा कोई रास्ता न था, क्योंकि ऐसा होने पर जानवर को भागने में भी बड़ी आसानी होती। अतः उन लोगों को बहुत सा चक्कर खाकर चढ़ना पड़ा; यद्यपि दोनों आदमी बड़े मजबूत थे तो भी ऊपर पहुँचने में उन्हें देर लगी और बहुत जगह तो उन्हें एक दूसरे की सहायता लेनी पड़ी।

पाली ऐसा आदमी न था जो बिना अपने लक्ष्य पर पहुँचे कहीं रुक सकता। अन्त में चट्टान के ऊपर वे पहुँच गये। वहाँ से नीचे नाला दिखाई दे रहा था। यद्यपि उस समय भाप और जोर से उठ रही थी और नाले की जड़ पर एकदम धुन्ध छा रही थी; तथापि वे उस जन्तु के प्रकांड शरीर का ढांचा देख सकते थे। बृहस्पति ने अपना खयाल दुरुस्त पाया। यह वही भीषण शरट था, जिसके भाई ने उस दिन विशाल दीनोंशरटों के मध्य में कुहराम मचा दिया था।

वह उस समय आधा खड़ा हुआ सा था। उसके शरीर का भार पीछे के पैरों और स्थूल पूंछ पर था। उसके अगले पैर ऊपर उठे हुए थे। वह व्यर्थ में ऊपर चढ़ने का प्रयत्न कर रहा था। यद्यपि वह ऊपर चढ़ने में असमर्थ था तथापि बड़े-बड़े पत्थरों को पंजों से खोद-खोद कर वह और भी नाले को गहरा बना रहा था।

यहाँ ऊपर से देखने में वह और भी भयंकर और दीर्घकाय जान पड़ता था। वास्तव में बृहस्पति ने जब पहिले भीषण शरट को देखा था, तो आधे से अधिक उसका शरीर पानी में डूबा हुआ था। सृष्टि में शायद ऐसी भयंकर आकृति का जानवर न कभी पैदा हुआ न होगा। उसका शिर बाघ का, जबड़े मगर के, शरीर कंगारू का, चमड़ा छिपकली का, और आकार हाथी का था। क्या और भी ऐसा भयानक जन्तु कोई हो सकता है? मध्यजीवक महायुग के मांसाहारी जन्तुओं में भीषण शरट सबसे भयानक और जबरदस्त

था। उसके सामने खड्गदन्ती व्याघ्र, ऊन वाले गैंडे और महागज भी कुछ न थे। वस्तुतः उसके पास इन तीनों के गुण थे, और उनसे अधिक यह था कि वह पानी में भी गुजारा कर सकता था। हाँ, पानी उसके आकार से अधिक गहरा न होना चाहिये।

पाली ने जानवर को अच्छी तरह देख कर वृहस्पति से पूछा—'तुम जानते हो, इसकी जाति क्या है?'

वृहस्पति—'मैं इसके बारे में बहुत कम जानता हूँ। हमारे देश में बहुत से पुरुष इसके विषय में अध्ययन करते हैं, किन्तु, वहाँ प्रसिद्ध है कि भूतल से यह जन्तु लाखों वर्ष पूर्व ही निर्जीव हो चुका। केवल इनकी पथराई हड्डियाँ, सो भी बहुत कम, कभी-कभी मिली हैं, जिनके द्वारा हमारे वैज्ञानिकों को इनके विषय में ज्ञान हुआ।

हम लोग इसे भीषण शरट कहते हैं, जिसका अर्थ है भयंकर छिपकली या गिरगिट।'

पाली—'यह बहुत अच्छा नाम है, हम लोग इसे खूब जानते हैं, और इसे सारे भीमकाय जन्तुओं का राजा कहते हैं। कोई ऐसा जानवर नहीं, जिसे यह मार न सकता हो। इस घाटी में एक और जानवर है, जो इतना बड़ा नहीं है, किन्तु उसकी खाल दीवार के ऐसी मोटी है। उसकी नाक पर तीन सींगें होती हैं, सबसे छोटी नाक की नोक पर और बाकी बड़ी-बड़ी दोनों उसके ऊपर एक के बाद एक।'

वृहस्पति—'और उसे एक बड़ी हड्डीवाली चोंच होती है, जो पक्षी की चोंच से शकल में मिलती है?'

पाली—'क्या तुमने उसे देखा है?'

वृहस्पति—'नहीं, किन्तु तुम्हारे कहने से उसकी आकृति एक पुरातन जानवर से मिलती है जिसे हम लोग त्रिखङ्गी कहते हैं, और जो आधुनिक गैंडों का पूर्वपुरुष था। तुमने गैंडों को बड़ी-बड़ी नदियों की घाटियों में देखा होगा?'

पाली—'हाँ, वही जानवर। और मैं तुमसे बताऊँ, मेरे शिकारियों

ने उस जानवर को; इस तुम्हारे भीषण शरट द्वारा इतनी जल्दी चिथड़े चिथड़े किये जाते देखा है, जितनी जल्दी कि मैं उसका वर्णन भी नहीं कर सकता।'

पाली जहाँ खड़ा था, वहाँ से नीचे एक सीधी दीवार थी और वहीं बिलकुल नीचे जानवर खड़ा था।

पाली–'आग छोड़ कर यह किसी चीज से भी नहीं डरता। इस आग ही के द्वारा हम इसे पकड़ते हैं।'

वृहस्पति–'और क्यों मेरे भाई! तुम इसी भयानक जानवर के मुंह में उन दोनों मेरे मित्रों को डालना चाहते हो जो मुझे प्राणों से भी प्यारे हैं!'

पाली, उस समय हाथ बाँध कर छाती पर रखे खड़ा था। उसने सिर हिलाते हुए कहा–'हाँ।'

वृहस्पति–'पाली, खयाल करो, जब से तुम यहाँ खड़े होकर बात कर रहे हो, तब से तुम्हारा प्राण मेरे हाथ में है। मेरे ज़रा से धक्के में तुम्हें सैकड़ों हाथ नीचे इस भीषण जन्तु के मुंह में गिर जाना होगा।'

पाली एक अंगुल भी वहाँ से न हटा, उसने मुस्करा दिया और फिर कहा–'तुम मेरे धर्मभाई हो, और यह मेरे लिये काफी है।'

वृहस्पति–'वे आदमी भी मेरी ही जाति के मेरे रक्तमांस के सम्बन्धी हैं, वे भी मेरे धर्मभाई और रक्तभाई हैं।'

पाली–'सो हो सकता है, किन्तु ये कैसे तुम्हें तुंगाला के बादशाह को मारने पर राजी कर सकते हैं? तुम्हारा नाम व्यर्थ में ज्ञानी नहीं रखा गया है–और जो ज्ञानी होगा, वह कभी मूर्खता-पूर्ण कार्य नहीं करेगा।'

वृहस्पति–'तथापि, बादशाह, तुम मेरे लिये उन पर दया कर सकते हो?'

पाली–'यह व्यर्थ की बात है। पाली का इरादा पत्थर का है। उन आदमियों को मना कर दिया गया था। उन्होंने मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया, इसलिये उन्हें इसका फल अवश्य मिलना चाहिये। इसके अतिरिक्त

भगवान अमरोकी बलिदान चाहते हैं। पर्व का दिन समीप आ रहा है। लोगों को सन्तुष्ट करना आवश्यक है।'

बृहस्पति ने सीधे पाली के मुख की ओर देखा। पाली ने उनकी ओर दृष्टि की। मालूम होता था दो देव हैं, जो चारों ओर विकट पहाड़ियों से घिरे खड़े हैं।

बृहस्पति—'अब भी यदि मैं चाहूँ, तो तुम्हें मार सकता हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि मैं तुमसे बलवत्तर हूँ।

पाली—'मैं ऐसा नहीं समझता। यदि तुम ऐसा खयाल करते हो, तो देख लो, लेकिन यह निश्चय समझो, यदि एक मरेगा तो दूसरा भी अवश्य मरेगा, क्योंकि हमारी ताकत करीब-करीब बराबर है, इसलिये दोनों साथ ही काल के गाल में जायँगे और यहीं पाली और ज्ञानी के धर्मभाईपने का अन्त हो जायगा।'

बृहस्पति—'यह ठीक है, और मेरे हृदय में अपने धर्मभाई के मारने का खयाल भी नहीं है।'

पाली—'सो मैं खूब जानता हूँ, क्योंकि यद्यपि मैं तुम्हारे मन पर अपना प्रभाव नहीं डाल सकता, किन्तु तुम्हारे हृदय की कोठरियों की तलाशी लेने का मुझे अधिकार है। मैं तुम्हारे विचारों को देख और पढ़ सकता हूँ। वह मेरे लिये हस्तामलकवत् है।'

बृहस्पति—'तुम मेरे विचारों को, मेरे मन के भावों को पढ़—जान—देख—सकते हो।'

पाली—'हाँ, मैं जानता हूँ, कि तुम्हारे दिमाग में यही बात इस वक्त बराबर आ रही है कि किस तरह उन दोनों को भाग जाने में सहायता दूँ। किन्तु, मुझे इसकी चिन्ता नहीं, क्योंकि मैं जानता हूँ कि वे ऐसे पचास सैनिकों के पहरे में हैं, जो जानते हैं—जरा भी हुक्मअदूली, हमें भी उसी घाट उतारेगी, जिस पर से वे उतरने वाले हैं और अब देखो रात भी आ रही है। अब हमें उतर चलना चाहिये, नहीं तो ऐसा न हो कि रात भर यहीं रह जाना हो।'

जैसे ही बात समाप्त हुई पाली चल पड़ा। वृहस्पति चुपचाप पीछे चल रहे थे। बीच-बीच में कभी पाली को हाथ का सहारा देते, कभी पाली के हाथ को पकड़ते दोनों नीचे पहुँचे। नीचे आने पर उन्होंने देखा कि पिंजड़ा भी आ गया है। दास जल्दी-जल्दी इस वक्त पुर्जे के जोड़ने में लगे हुए थे। वे उन्हें बहुत जल्दी और प्रशंसनीय ढंग से जोड़ रहे थे। वे उस काम के अच्छे अभ्यासी थे। एक-एक आदमी को एक-एक भाग जोड़ने को मिला था।

उधर सिपाहियों ने बीच ही में कई वृक्ष काट कर गिरा दिये थे। वे उनकी मोटी और लम्बी डालियों को गाड़-गाड़ कर नाले के मुंह को रूँध रहे थे। इस बाड़े के बीच में पिंजड़े के बराबर जगह छोड़ दी गयी थी।

यह सब काम दो घंटे रात तक समाप्त हुआ। तब पिंजड़ा बाड़े के बीच में किया गया। उसका दरवाजा उठा हुआ था। ऊपर एक आदमी तैनात रखा गया था, कि समय पर झट से दरवाजे को बन्द कर दे। वृहस्पति यह देखने के लिये बड़े उत्सुक थे, कि कैसे वे प्रकांड जन्तु को पिंजड़े में बन्द करते हैं।

यह देखने में बहुत देर न होने पाई। सब ठीक-ठाक होते ही आग बुझा दी गयी। अब सिपाहियों की दो टोली बनाई गई, एक टोली तो पिंजड़े के दोनों ओर की बाड़ के पीछे रखी गयी। यहाँ सब भाला लिये तैयार थे जिसमें जानवर को बाड़े को तोड़ने की कोशिश न करने दें और दूसरी टोली नाले के दोनों ओर के पहाड़ों पर चढ़ गयी, इन लोगों के पास वही तेल में भिगोयी हुई छाल के टुकड़ों से भरे थैले थे। इन छालों की छोटी-छोटी गठरी बाँधी गयी थीं। उन्हें जला-जला कर वे नाले में फेंकने लगे। वहाँ बड़ी-बड़ी लाल लपटें उनसे निकलने लगीं, इस प्रकार सारा ही स्थान अच्छी तरह प्रकाशित हो गया।

इस प्रकार धीरे-धीरे उन्होंने जानवर को पीछे की ओर से भगा कर मुंह की ओर किया। आग की ज्वाला को देख कर भीषण शरट चूहा हो

रहा था और यदि वह न भी डरता तो भी उसके लिये वहाँ रहना कठिन था, क्योंकि उन बड़ी-बड़ी लवरों के बीच में कहीं उसके खड़े होने भर के लिये स्थान न था। यदि वह वहाँ ठहरता तो अवश्य जल मरता। जिस समय वह एक जगह से हटता था, उसी समय और कई गठरियाँ धधकती हुई फेंकी जाती थीं।

अन्त में वह बाड़ के पास गया। वहाँ भी दोनों ओर से उस पर हमला होने लगा और उसे मजबूरन बीच में आना पड़ा। अब भी वह भयंकर प्राणी भयभीत या भीरु नहीं हुआ था, बल्कि वह बहुत उद्विग्न-सा जान पड़ता था। उसके प्रकाण्ड जबड़े खुले हुए थे। वह बड़ी फुर्ती से नाले के एक किनारे से दूसरे किनारे की ओर घूमता था। यह समय बड़ा ही हृदय-वेधक था, खासकर उन लोगों के लिये जो बाड़ के सामने खड़े थे, क्योंकि अब भी यह नहीं कहा जा सकता था कि वह पिंजड़े के द्वार में घुसेगा अथवा अपने शरीर के महान् बोझ से बाड़ को तोड़ फेंकेगा।

थोड़ी देर तक वह आगे पीछे, एक ओर से दूसरी ओर घूमता रहा। फिर एकाएक उसने अपने अगले पैरों को भूमि पर रख दिया और एक दीर्घकाय बिल्ली की भांति आगे बढ़ पिंजड़े में घुस गया।

तुरन्त ही पीतल का दरवाजा गिर कर बन्द हो गया और उसी समय ठनठनाहट लिये हुए गरज सुनाई दी। सिपाहियों ने पता लगाया कि उसकी पूंछ दरवाजे के नीचे दब गयी है। इसका छुड़ाना बहुत सरल था। पाँच छः आदमी फिर पिंजड़े के ऊपर चढ़ गये, उन्होंने दरवाजे को थोड़ा सा ऊँचा किया और जानवर ने अपनी पूंछ खींच ली।

जादूगर बादशाह ने दोनों हाथों को पीट कर बालक की भाँति अपने आनन्द को प्रकट कर, वृहस्पति से कहा—'तुंगाला के जीवित मनुष्यों में से किसी ने भी इससे पहिले एक बार से अधिक इसे जीवित पकड़ा गया नहीं देखा।'

वृहस्पति—'और कार्य बड़ी ही सावधानी से सम्पन्न हुआ, इसे मैं स्वीकार करता हूँ। तथापि मुझे बड़ा सन्देह है कि कैसे तुम इसे अमतुंगाली ले चलोगे।'

पाली—'यह दो चार दिन का काम नहीं है। इसके लिये पहाड़ों पर रास्ता ठीक करना होगा। इस काम में हजारों गुलाम लगाये जा चुके हैं। लेकिन कोई चिन्ता नहीं, अभी समय भी पर्याप्त है। अभी पर्व भी पन्द्रह दिन से अधिक है। और अब ज्ञानी भूख का आर्तनाद मेरे कानों में आ रहा है, चलो अब देर न करो। कल हम लोगों को अमतुंगाली लौटना होगा।'

आशा की किरण

उस रात को वृहस्पति न सो सके। केवल यही नहीं कि वह अपने मित्रों के भविष्य के लिये चिन्तित थे, प्रत्युत वह सोना भी न चाहते थे। पाली ने उनके मन को ठीक पढ़ा था। उन्होंने सममुच उन सारे दिनों को अपने मित्रों को मुक्त करने की तदबीर सोचने में बिताया था।

स्थिति निराशाजनक प्रतीत हो रही थी। वह बिलकुल अकेले थे। नरसिंह से भी उस समय बहुत आशा न हो सकती थी। गुलाम और बहुत से सैनिक, नीचे घाटी में डेरा डाले हुए थे। शाही शामियाना वहाँ से थोड़ा हट कर पहाड़ के ऊपर था। वहाँ उतनी धुन्ध न थी, वायुमंडल अपेक्षाकृत स्वच्छ और शीतल था। वह पक्ष भी शुक्ल पक्ष का था। यद्यपि चन्द्रमा अभी न उगे थे,किन्तु जगमगाते हुए तारे चारों ओर दिखाई दे रहे थे।

घंटों वृहस्पति अपने जुड़े हुए हाथों को सिर पर रखे आकाश की ओर देखते रहे, पीछे नींद आना असम्भव समझ वह उठ बैठे और उन्होंने अपने आस-पास नजर दौड़ाई।

पाली उनसे थोड़ी दूर हट कर भूमि पर लम्बा पड़ा था। वह गम्भीर निद्रा में खर्राटे ले रहा था। उसके आस-पास उसके कुछ प्रधान-प्रधान अफ़सर थे, और थोड़ी दूर हट कर एक सन्तरी भाले को पकड़े, उसी के सहारे झुक कर खड़ा था, जान पड़ता था उस पर भी थकावट ने पूरा असर डाला है।

वृहस्पति उठ खड़े हुए। वह अब तक उसी जन्तु का खयाल कर रहे थे, जो अब भी पिंजड़े के बीच में सुरक्षित था; उन्होंने सोचा कि नींद और विश्राम मेरे लिये कब योग्य है,जब कि मेरे बन्धुओं के सर्वनाश की तैयारी हो रही है। कैसे बन्धु ?—जो कि ऐसे अद्वितीय और भयानक पर्यटन में मेरे साथी रहे।

अपने विचारों में मग्न बिना और कुछ सोचे ही वह अपने डेरे से आगे चले गये। वह सन्तरी के पास से गये, किन्तु उसने कुछ न कहा। बात यह थी कि पाली का हुक्म था, कि ज्ञानी को बन्दी मत समझो। वृहस्पति जाकर एक चट्टान पर बैठे। अपने चिबुक को घुटनों पर रखे और अपने गालों पर दोनों हाथों को दिये वहाँ उसी तरह कितनी देर तक विचार में मग्न बैठे रहे। उन्हें कितनी ही देर के बाद पता लगा, कि कुछ जगह की दूरी पर और भी कितने ही आदमी सोये हैं। वे लोग इस तरह घेर कर सोये थे, कि उनके पैर एक धुनी की ओर थे। उनके पास ही एक छः हाथ ऊँचा उन्हीं छाल की गठरियों का ढेर था, जिन्हें जलाकर ऊपर से नाले में फेंका जाता था। ये गठरियाँ छोटे-छोटे थैलों में रखकर एक के ऊपर एक करके रखी थीं।

कैसे मैं गुफा में बन्द उन दोनों साथियों को निकाल सकता हूँ? जब कि उनके ऊपर पचास सिपाही बराबर पहरा दे रहे हैं। शक्ति के भरोसे कुछ करना मूर्खता है और युक्ति भी यहाँ कौन सी चल सकती है? पाली भोला-भाला अशिक्षित जंगली नहीं है, जिस पर, जादू टोना या भूत-प्रेत के नाम से कोई चाल चलायी जा सके। वह उतना ही चतुर है जितना निर्दयी, वह उतना ही मजबूत है जितना दृढ़मनस्क। दया की भिक्षा उसके सामने व्यर्थ है। उसे किसी प्रकार भी नरम नहीं किया जा सकता।

जान पड़ता है, बन्दियों के बचने का कोई उपाय नहीं, सिवाय इसके कि कोई दैवी घटना, या मोजिजा या चमत्कार घटित हो।

अकस्मात् इसी समय वृहस्पति को शंकरसिंह का नाम स्मरण आया। उन्होंने खयाल किया, कहीं वह दक्षिणी अमेरिका से लौटते वक्त इस जंगल पर से होते हुए भारत को लौट तो नहीं गया। शायद हफ़्तों—महीनों पूर्व वह पूर्व की ओर चला गया। लेकिन यह बात पक्की हुई थी कि यदि पर्यटकों को कोई विपत्ति पड़ेगी तो वह आकाश में लाल बाण छोड़ेंगे। किन्तु; अमतुंगाली में लाल बारूदी बाण कहाँ?

तथापि यहाँ लाल आग है। यह खयाल बिजली की भांति वृहस्पति के सामने आया। उसी समय उनकी विचारमाला में भारी परिवर्तन उप-

स्थित हुआ । एक क्षण पूर्व वह किंकर्त्तव्य विमूढ़ अकर्मण्य बैठे हुए थे, अब विचार पर विचार मस्तिष्क में उतरने लगे । उन्हें एक तदवीर याद आई ।

अमतुंगाली में लाल बाण नहीं है, किन्तु लाल आग है जिसे आसानी से जलाया जा सकता है । सचमुच सामने का ढेर लाल प्रकाश देने वाली छालों के थैले की है । यह एक मुट्ठी छाल घण्टों जलती रह सकती है ।

तो क्या यह सम्भव नहीं है कि ऐसी आग एक ऊँचे पर्वत शिखर पर बराबर जलाई जाय ? नीचे वालों को दिन में ऐसी आग दिखलाई न पड़ेगी । और रात को धुन्ध से घिरे रहने से भी वही बात है । लेकिन ऐसी आग को लगातार बहुत रातों तक जलाये रखना है । इस कठिनाई को कैसे दूर किया जा सकता है ?

यद्यपि इन बातों की सम्भावना न थी किन्तु; डूबता आदमी तिनके का भी सहारा पकड़ता है । पहिले तो शंकर का तुंगाला के ऊपर से उड़ना, दूसरे दो सप्ताह के भीतर-भीतर । तिस पर भी कि वह उस पर से होकर रात को उड़े, और उस पर्वत पर की जलती आग उसे दिखाई दे । किन्तु दिखाई देने पर भी कौन कहता है, कि वह उसे अपने उतरने का संकेत ही समझ लेगा ।

दूसरी कठिनाई पर्यटक को यह मालूम हुई, कि उड़ाका कभी रात को अपरिचित स्थान पर नहीं उतर सकता, यह भी कहना कठिन था, कि नरेन्द्र और सत्य ने कितने दिनों पहिले कांगो के मुहाने पर शंकर को छोड़ा था । जब से वे जंगल में भूले, फिर घाटी में पहुँचे, पुनः पहाड़ों से होकर अमतुंगाली में आये, तब से उन्हें समय की गणना ही विस्मृत हो गयी थी । वृहस्पति ने खयाल किया, कि समय पर्याप्त व्यतीत हो गया । लेकिन शंकर को काम भी तो बहुत था ।

उड़ाके ने वचन दिया है, कि मैं जंगल से होकर ही लौटते वक्त आऊँगा । लेकिन यह भी संदिग्ध है । यह जंगल भी तो सारे उत्तरी भारत के बराबर है और इसमें सन्देह नहीं कि उसका सीधा रास्ता सूदान से होकर जाता है । बोमा से मोम्बासा जाने में भी यह प्रदेश रास्ते में पड़ेगा, इसमें

सन्देह है । यह स्थान महारण्य के दक्षिण-पश्चिम में है, जो कुछ भी हो—
'यत्ने कृते यदि न सिद्धयति कोऽत्र दोषः ।'

किन्तु; तो भी तो बराबर पन्द्रह रात तक आग को जलाये रखना होगा और इसके लिये एक आदमी कोबराबर तैनात रहना चाहिये,जो आग को बुझने न दे । लेकिन यह काम मैं नहीं कर सकता,क्योंकि यदि फिर मैं भागा तो, पाली के सैनिक बिना ढूंढ निकाले न रहेंगे । क्योंकि रात को जलती लाल आग और भी उनके लिये आकर्षक होगी । तथापि कोई आदमी इस काम के लिये चाहिये जो उत्सुक हो और जिसके गुम होने से कोई गड़बड़ी न मचे ।

इसी समय वीर मरुवानी की स्मृति बृहस्पति के हृदय में जाग उठी । यदि आज वह शूर-हृदय होता तो अवश्य इस गाढ़े में काम आता । किन्तु; मरुवानी इस लोक में अब कहाँ ? उसका शरीर तो उस दर्रे के पास में सोया है, जहाँ उसने अपने मित्रों के लिये अपनी जान दी । अब उनका खयाल नरसिंह की ओर गया ।

हाँ, यह इस विषम समस्या का उत्तर है । नरसिंह निर्भीकता से इस कर्त्तव्य पर डट सकता है । उसकी अनुपस्थिति का कोई खयाल भी न करेगा, क्योंकि तुंगाला उसे गुलाम, जंगली, अशिक्षित, मूर्ख और विचारशून्य समझते हैं । पाली समझेगा कि वह भाग गया किन्तु; वह इसके लिये सैनिक भेजना उचित न समझेगा ।

और नरसिंह ? वह तो रात दिन यही चाहता है कि कब इस जादू के मुल्क से निकल पाऊँ । कहाँ, उसका वह हृष्ट-पुष्ट सिंह सदृश शरीर और कहाँ पाली के भय के मारे उसका यह झुका हुआ सिर, मुरझाया मुख ?'

बृहस्पति धीरे से उठे । वह हाथों और पैरों के बल बिना थोड़ा भी शब्द किये डेरे में आये । वह नहीं चाहते थे कि सन्तरी उन्हें देखें; बड़े शिकारों का शिकारी होने से उनका पुराना अनुभव इस जगह काम आया । सौभाग्य से अब भी अंधेरा था, इसलिये बिना किसी दूसरे को आहट दिये वह नरसिंह के पास पहुँच गये ।

उन्होंने नरसिंह के कान में, बकुंगा भाषा में कुछ कह कर उसे उठाया। उनको भय था कि वह चिल्ला उठेगा, क्योंकि उस समय उसकी मानसिक अवस्था ऐसी ही भयपूर्ण थी। तथापि वैसा न हुआ, और वृहस्पति ने स्वयं भी ऐसा करने का मौका न दिया, क्योंकि ज्योंही उसने आँखें खोलीं वृहस्पति का हाथ उसके मुंह पर था।

वृहस्पति ने कान में धीरे से कहा—'सब ठीक है, डरो मत। मैं हूँ मिश्र, तुम्हारा स्वामी। मैं कुछ बातें करना चाहता हूँ। जैसे ही तुम्हारी नींद भली प्रकार खुल जाये बिना ज़रा भी किसी को दिखाई सुनाई दिये चारों—हाथ पैरों—से सरकते मेरे पीछे चले आओ।'

इसके बाद वृहस्पति वहाँ से हट गये। जिसमें नरसिंह को भली प्रकार होश सँभालने का अवसर मिल जाय। वह प्रतीक्षा कर रहे थे और ज़रा ही देर में बकुंगा उनकी बगल में आ गया। उसने पूछा—''मेरा स्वामी मुझे बुलाता है?'

वृहस्पति (बहुत धीरे से)—'हमें यहाँ नहीं बोलना चाहिये। मेरे साथ आओ, मुझे तुमसे बहुत बातें करनी हैं।'

दोनों मूर्तियाँ अन्धकार में विलीन हो गयीं। आगे-आगे वृहस्पति थे, वे बराबर बड़ी चट्टान की आड़ पकड़े-पकड़े चल रहे थे। अब वे अपने डेरे से सौ कदम दूर चले गये। वृहस्पतिने खड़ा हो बकुंगा के कन्धे पर अपना हाथ रखा।

वृहस्पति—'सुनो और सच-सच जवाब दो। तुम इस देश से घृणा करते हो और हर वक्त तुम्हें जीवन का भय लगा रहता है? तुम जादूगर बादशाह की शकल ही से भयभीत हो जाते हो?'

नरसिंह—'हाँ, मेरे स्वामी, यह देश जादू से भरा है।'

वृहस्पति—'तो तुम चाहते हो कि फिर अपने उस बड़ी नदियोंवाले देश में, अपने बन्धु-बान्धवों में पहुँच जाओ?'

नरसिंह—हाँ, मेरे स्वामी।'

वृहस्पति—'तो फिर जंगल के खतरे को झेलने के लिये तैयार हो जाओ?

तुम्हें बौनों और गोदने वालों के बीच में जान देने तक के लिये तैयार होना पड़ेगा, तब कभी बड़ी नदियों का देश मिल सकेगा ।'

नरसिंह–'मेरे स्वामी, यह बिलकुल सच है। बराबर मेरे दिल में खयाल होता है कि इस देश से भाग जाऊँ और मैंने शायद ऐसा कर भी डाला होता यदि यह डर न होता कि जादूगर बादशाह फिर मुझे अपने जादू से पकड़ मँगावेगा ।'

वृहस्पति–'नरसिंह, हम सभी के लिये अब सिर्फ एक अवसर बचने का है; और वह ऐसा है कि हमें उसे हाथ से न खोना चाहिये। कौन जानता है किस्मत में क्या है । अथाह समुद्र में गोते लगाते हैं जहाँ कि मगर और नाकों का बसेरा है । क्या सदा मोती ही हाथ आती है ? जानते हो, जब तुम बोमा में रहे तो एक पंछी-आदमी हिन्दुस्तान से उड़ता हुआ कांगो की ओर आया था ?'

नरसिंह–'हाँ, मुझे खूब याद है। हम लोग बहुत से आदमी इस तमाशे को देखने के लिये इकट्ठे हुए थे । हमें यह कभी न मालूम था कि आदमी पंछी बन जायेगा ।'

वृहस्पति–'अच्छा, तो वही पंछी-आदमी ही हमें बचा सकता है, दूसरे का वश नहीं। यदि वह पहुँच आया तो कम से कम हम और तुम तो बच सकते हैं। किन्तु मैं; हम दोनों के लिये नहीं खयाल कर रहा हूँ; बल्कि अपने उन बन्दी बन्धुओं के लिये भी, जिन्हें मृत्यु-दंड मिला है और जो इसी भयानक जन्तु के सामने खाये जाने के लिये डाल दिये जायँगे, जिसे तुंगालों ने आज यहाँ पकड़ा है। नरसिंह, उनको बचाने के लिये जो कुछ हम से हो सकता है, करना चाहिये। आशा है, कि इन्हीं पन्द्रह दिनों के भीतर-भीतर पंछी मानुष इसी देश, जिस पर कि यह जादूगर राज्य करता है, के ऊपर से उड़ता हुआ लौटेगा और जब वह इधर से होकर जाने लगे, तो उसे हमें किसी प्रकार नीचे बुलाना चाहिये, जिसमें वह आकर हमसे बात करे। पहिले इस बात की उससे सलाह हुई थी, कि लाल बारूदवाला बाण आकाश में छोड़ा जायगा, किन्तु हमारे पास वह चीज नहीं है। लेकिन मैंने सोचा

है कि लाल आग किसी ऊँचे पर्वत के शिखर पर बराबर रात-दिन जलाई जाय, तो हमारा काम हो सकता है। पहिले-पहिल जब पंछी-मानुष इसे देखेगा, तो वह समझेगा, कि जंगली लोग कुछ पूजा-पाठ कर रहे हैं, किन्तु; जब उसे लाल देखेगा, तो अवश्य उसे अपने मित्रों की याद आयेगी और फिर अपनी प्रतिज्ञा भी। इसलिये वह इसी लाल आग की ओर सूर्योदय तक चला आयेगा, फिर दिन में वह वहीं किसी अच्छी जगह पर उतर जायगा—क्योंकि यद्यपि पंछी-मनुष्य अन्धकार में उड़ सकते हैं, किन्तु पक्षियों की भांति उन्हें भी अपने बसेरे को देखने के लिये प्रकाश की अपेक्षा है, अब बताओ नरसिंह, तुमने हमारी बात समझी या नहीं ?'

नरसिंह ने बड़ी उत्सुकता से कहा—'यह बिलकुल साफ़ है।'

बृहस्पति—'तो, बस इतना ही। मैं तुम्हें दो थैला लाल ईंधन दूंगा, जिसे कि तुंगाला जलाते हैं। उसे लेकर तुम उसी बड़े पर्वत की चोटी पर चढ़ जाना, जिस पर सूर्य को अस्त होते आज तुमने देखा था। वहाँ दिन भर धूप में सूखी लकड़ियों और घासों से आग तैयार रखना। रात को उस पर इस तेल में डुबाई छाल में से कुछ रख देना और यह आग ऐसी जगह रखना जहाँ वह चारों ओर से देखने में आवे। बहुत आग भी मत तैयार करना नहीं तो तुम्हारा थैला जल्द ही खतम हो जायगा और इसके अतिरिक्त यदि पर्वत बादल से ढँका न होगा तो अमतुंगाली से भी यह दिखाई देगी। इस आग को इसी प्रकार लगातार पन्द्रह रात तक जलाते रहना होगा। तुम दिन भर सोना और रात भर जाग कर यह काम करना। यदि पन्द्रह रात तक पंछी-मानुष न आवे तो तुम बड़ी नदियों के देश का रास्ता लेना। जिधर सूर्य डूबते हैं उधर ही देखते हुए आगे बढ़ना। यदि किसी तरह तुम जंगल के घिरावे को पार हो गये तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हें जल्द ही बकुंगा-भाषा बोलने वाले आदमी मिलेंगे। क्या तुम यह सब करने के लिये तैयार हो ?'

नरसिंह—'बिलकुल तैयार, मेरे मालिक।'

बृहस्पति—'बहुत अच्छा। यहाँ ठहरो, मैं तुम्हें दो थैला ईंधन ला देता हूँ, तुम उन्हें अपनी बगल में दबा कर ले जाना।'

बृहस्पति वहाँ से यह कह कर फिर चले गये और पाँच मिनट के बाद दो थैले हाथ में लेकर आये। उन्होंने उसे नरसिंह के सामने रख कर कहा—'पाँच मिनट के भीतर-भीतर तुम्हें दूर पहाड़ में चला जाना चाहिये। पहाड़ को पार करते हुए पश्चिम ओर जाओ। देखो वह लोधवा तारा है चमक रहा है, इस पर्वत को दाहिनी ओर छोड़ते हुए आगे बढ़ते जाना। इसका खयाल न करो कि तुंगाला तुम्हारा पीछा करेंगे। चन्द्रमा के उगते-उगते तुम्हें काफी दूर पहुँच जाना चाहिये। मुझे विश्वास है कि तुम्हारी अनुपस्थिति पर कोई शंका न करेगा और इसके अतिरिक्त मैं बहाना भी कर सकता हूँ कि वह मेरे काम से कहीं गया है और यह सच भी है। जहाँ तक हो सके नीचे-नीचे जाना। खयाल रखना जिसमें कोई आदमी पहाड़ पर चढ़ते तुम्हें न देख पाये। खेतों पर काम करते हुए किसान तुम्हें मिलेंगे किन्तु तुम भरसक उनसे बचने की कोशिश करना। उनके खेतों, बगीचों का पता लगाये रखना, क्योंकि तुम्हें अपने भोजन का भी प्रबन्ध करना है। पहाड़ों में पानी तुम्हें आसानी से मिल जायेगा, इसमें सन्देह नहीं। अच्छा, तो अब जाओ क्योंकि समय तुम्हारे लिये बहुत कम है जाओ। जाओ, तुम्हारा मंगल हो और तुम्हारे प्रयत्न से उन भाग्य के मारे, मृत्यु की घड़ी जोहते मनुष्यों का भी मंगल हो।'

बकुंगा ने अब तक बृहस्पति के सत्संग में रह कर भारतीय संस्कृति की कई बातें जान ली थीं। उसे अपने मस्तिष्क के अनुसार भारतीय संस्कृति का कुछ ज्ञान हो गया था। नरेन्द्र ने उसे भारतीय नाम दिया था और बृहस्पति ने उसे संस्कृति से दीक्षित किया था, तथापि अभी उसके दिल से बाल्यकाल से अभ्यस्त भूत-प्रेत का डर एक दम नहीं गया था। उसने एक बार झुक कर दोनों हाथों को बृहस्पति के चरण पर रखा और फिर कहा—'वन्दे मेरे स्वामी। जो कुछ आपने कहा है मैं वैसा ही करूँगा। मैं अपने गुरु, अपने स्वामी की बात को कैसे टाल सकता हूँ जबकि उसे मैंने अनेक बार

मंगलकारक देखा है और यदि इस बार मैं फिर आपके चरणों को न देख सकूं तो दूसरे जन्म में फिर आपका शिष्य बनने का सौभाग्य मिले।'

नरसिंह दोनों थैले दोनों बगल में दबाये उस नीरव अन्ध रात्रि में दबे पाँव चल पड़ा। वृहस्पति फिर सरकते-सरकते अपने बिस्तरे पर जा लेटे। उन्हें किसी ने भी आते-जाते न देखा। उनकी साँस से जान पड़ता था कि गाढ़ निद्रा में हैं। किन्तु; उनकी आँखें खुली हुई थीं। वह कुछ सोच रहे थे। एक घण्टा बीता—दो घंटा बीता और अब पर्वत शिखर पर चन्द्रमा दिखायी देने लगे। नरसिंह अब खतरे से बाहर चला गया था। वृहस्पति ने अपनी आँखें बन्द कीं और जरा ही देर में वह गाढ़ निद्रा में चले गये।

अन्तिम घड़ी

शहर में चारों ओर यह समाचार बिजली की भांति दौड़ गया कि अमरोकी देवता के लिये अखाड़े में एक भारी बलिदान होने वाला है, जिस अमरोकी ने तुंगाला जाति को अनन्त काल से सुरक्षित और सुसम्पन्न रखा है। तुंगाला लोगों में खूनी दृश्य देखने का प्रेम अपने पूर्वजों कार्थेजियों के समान ही था। कार्थेजीय अपने विरोधी रोमकों से इसमें किसी प्रकार भी कम न थे। अमतुंगाली के आनन्द, जोश और उत्सुकता का उस समय ठिकाना न रहा, जब कि उसने सुना कि भयंकर जन्तु भीषण शरट जिसे तुंगाला में निया कहते हैं, पकड़ा गया है।

पहाड़ों के उस पार उस बड़ी झील में यद्यपि अनेक प्रकांड शरट रहते थे। तथापि वे जातीय अखाड़े में नहीं देखे जाते थे। इसके दो कारण थे— प्रथम तो ऐसा पिंजड़ा बनाना ही असम्भव था जो उनके जैसे लम्बे-चौड़े शरीर के लिये पर्याप्त हो, तथा वह खींच कर अमतुंगाली लाया भी जा सके। और दूसरे अनुभव से पता लगा था कि वह जन्तु देखने ही में भारी है, युद्ध में वह मांस के केवल ढेर हैं। खास कर सूखी भूमि में तो वह सर्वथा अपनी रक्षा करने में असमर्थ है। वहाँ उनके लिये चलना-फिरना भी आसान नहीं है। पानी में चाहे वह कितने ही भयंकर क्यों न हों, किन्तु; उनका छोटा दिमाग़ और पहाड़ जैसा शरीर सूखे में एक फुर्तीले आदमी के सामने जिसके हाथ में एक तेज तुंगाला भाला हो बिलकुल असमर्थ है।

तुंगाला के क्रीड़ा प्राङ्गण में अधिकतर मेगेथेरियम् ही देखा जाता था। शहर से कई मील पश्चिम एक भारी मैदान है जिसमें बड़े-बड़े वृक्ष लगे हुए हैं। उसी जगह ये चमगादड़ की भांति पत्तियाँ तथा फल खाने अकसर आया करते हैं। कितनी ही बार शिकारी टोली वहाँ घूम-घाम कर खाली भी आती। निया का प्रथम तो दिखायी देना ही कठिन है, और दिखायी देने पर भी उसे जीवित पकड़ना बड़ा कठिन काम है। बादशाह के शिकारी

चर बराबर उसकी तलाश में रहा करते थे । मरुवानी भी उस समय इसी काम पर गया था,जब कि उससे भारतीयों की मुलाकात हुई । साल भर में एक बार से अधिक कभी भी भीषण शरट या शरभ के दिखायी देने की खबर नहीं मिली थी और हर बार वह निकल जाता था । उसके पद-चिह्न पर चलना भी कठिन था, क्योंकि तुरन्त ही वह पानी में घुस जाता था । यद्यपि इसके मानने के लिये कोई प्रमाण नहीं, कि वह तैर सकता है ।

प्रकांड शरटों और मेगेथेनियम का भक्ष्य जैसा निश्चित है वैसा इसका नहीं है । ब्रण्टो शरट किसी झील के पानी में मिल सकता है, और मेगेथे-नियम केवल उसी जगह पाया जाता है, जहाँ वे वृक्ष बहुतायत से उगे होते हैं,जिनके पत्तों पर वह गुजारा करता है । किन्तु; भीषण शरट या शरभ के लिये कोई नियम नहीं । वह कभी-कभी ऊँची जगहों और पर्वतों के ऊपर देखा जाता है, और कभी-कभी पानी के भीतर भी स्वभावतः मांसाहारी या क्रव्याद होने से वह उन सभी जन्तुओं को खा जाता है, जिसे वह मार सकता है । प्रकांड शरटों से पहाड़ी खरगोश तक सभी उसके भक्ष्य हैं ।

मांसाहारी या क्रव्याद प्राणी उन प्राणियों से अधिक बुद्धिमान होते हैं, जो कि अन्न और फूल पर गुजारा करते हैं; इस नियम का अपवाद सिर्फ हस्तधारी—वानर जातियाँ हैं । इसका कारण यह नहीं कि नत्रजनिक भोजन अधिक मस्तिष्क पोषक होता है; बल्कि इसलिये कि मांसाहारी जन्तुओं को, अपने भक्ष्य निरामिषाहारी जन्तुओं से अधिक बुद्धिमान होना आव-श्यक है, अन्यथा उन्हें भूखे मर जाना पड़े, और उनकी जाति उच्छिन्न हो जाय । सिद्धान्त है कि सभी प्राणधारियों की वह शक्ति, इन्द्रियाँ या अंग, अधिक विकसित होते चले जाते हैं, जिनकी कि उनकी भलाई और परि-स्थिति के लिये आवश्यकता है । किन्तु; इसके विरुद्ध वह शक्तियाँ जिनका उपयोग नहीं किया जाता, धीरे-धीरे निर्बल होते-होते, अन्त में सर्वथा नष्ट हो जाती हैं ।

जब हम भीषण शरट जाति के उच्छिन्न होने पर विचार करते हैं, तो मालूम होता है कि मांसाहारी होने पर भी उसमें सचमुच कुछ कमियाँ

रही होंगी। यह अवश्य आधुनिक शेरों और बाघों से कुछ बातों में कम रहा होगा। यह चीते या तेंदुए की भांति कूद या चढ़ नहीं सकता था, और न किसी नाले में शिकार की ताक में अपने आपको छिपा सकता था। दीनों शरट और उसके बाद के छोटे-छोटे सरीसृपों के निर्मूल होने का यह भी एक मुख्य कारण हुआ होगा, और अन्त में यही उसके आत्म-विनाश का भी कारण हुआ। क्योंकि जीविका का कोई नया ढंग वह ग्रहण नहीं कर सकता था, जब कि पुराने भक्ष्य सारे निर्जीव हो गये।

परिस्थिति के परिवर्तन के साथ प्राणी भी बड़ी विचित्रता से अपने में योग्य परिवर्तन कर डालते हैं और वह परिवर्त्तन भी, देखने पर मालूम होता है, उनका अपना किया हुआ है। यहाँ एक बहुत अच्छा उदाहरण है, शफी या खुरवाले जन्तुओं का। घोड़े और हिरन आरम्भ में बहुत छोटे छोटे चार पैर रखते थे। इनके रहने का स्थानप्राग् ऐतिहासिक जगत के बड़े-बड़े जंगल थे। आज-कल उनके सदृश दो एक ही जातियाँ बच रही हैं। जैसे अमेरिकन जंगलों का छोटा सुवर-हरिना, जिसके पैर कुछ इञ्च ही लम्बे होते हैं। प्राग्ऐतिहासिक हिरन अपने अन्य सवर्गियों की भांति ही बूटियों और विशेषकर नवरोहित बूटियों को खाते हैं। अब, ऐसी घासे तो बड़े-बड़े वृक्षों से भरे जंगलों में होती नहीं, और वह निष्पत्र करील आदि को खायेंगे नहीं। एक बालवृक्ष, या अमोले को, बारहसिंगे से लेकर घोड़ा तक सभी शफी पशु खा सकते हैं। यह क्षुद्र-पाद हिरन और अश्व, जो खरगोश से बड़े नहीं थे, अपने आधुनिक वंशजों से नहीं मिलते। केवल अंकुरों और पौधों को खाते-खाते इन्होंने जंगलों को साफ कर दिया, क्योंकि पुराने वृक्ष जब गिर गये, तो उनकी जगह लेने के लिये इन्होंने किसी को बाकी न रखा था। इस प्रकार शताब्दियाँ बीत जाने पर इन वृक्ष-वनों वाले प्राणियों ने, वृक्षों से रहित बड़े-बड़े मैदानों को एक मात्र अपने रहने का स्थान पाया। यहाँ यद्यपि उनके खाने के लिये घास पर्याप्त थी, तथापि आड़ लेने के लिये वृक्ष न थे। अतः शिकारी जानवर उन्हें दूर से ही देख सकते थे। अतः आज-कल के चीता, तेंदुआ सदृश जानवरों से प्राण बचाने

के लिये, उन्हें अधिक जोर से दौड़ने एवं छलाँग मारने की आवश्यकता प्रतीत हुई। अन्त में उनके झुण्ड में से—जैसा कि आज भी यह जानवर झुंड बाँध कर रहते हैं—सिर्फ वह बच सके, जो द्रुतगामी थे। द्रुतगामी होने के लिये पैरों का लम्बा होना आवश्यक था, अतः इन सभी जातियों के पैर धीरे-धीरे बढ़ने लगे। और इस प्रकार, हजारों वर्षों के अभ्यास के बाद आज घोड़ा, बारहसिंगा, और हरिन सबसे अधिक द्रुतगामी जानवर हैं।

तुंगाला में भीषण शरट का बहुत कम दिखायी देना भी कारण रखता है। जान पड़ता है, अब वहाँ इनकी बहुत कम संख्या रह गयी है, अन्यथा दीनो शरट कभी के उच्छिन्न हो गये होते। अमतुंगालीं के बहुत कम आदमियों ने उसे क्रीड़ा-प्राङ्गण में देखा था और जिन्होंने देखा था, वे बूढ़े लोग उसके विषय में बड़े चाव से बात करते थे। दिन पर दिन लोगों का कौतूहल बढ़ता गया; और जब उत्सव का दिन समीप आ गया तो हजारों आदमी दूर और नजदीक के गाँवों से तमाशा देखने के लिये आ गये। इन लोगों ने मन्दिर वाले पहाड़ तथा अन्य आस-पास के पहाड़ों पर डेरा डाला।

वृहस्पति बिलकुल लाचार थे। वह जानते थे कि क्या होने जा रहा है, किन्तु; वह उसके रोकने में असमर्थ थे और सबसे बढ़कर खराबी की बात तो यह थी, कि पाली भी अब उन दोनों भारतीयों को बचाने में असमर्थ था। उन पर निरन्तर कड़ा पहरा पड़ रहा था।

वृहस्पति को अपने मित्रों से मिलने की आज्ञा न थी। इस समय वह भी एक बन्दी से थे। वह जहाँ इच्छा हो वहाँ नहीं जा सकते थे; उनका रहना अधिकतर गुफा-प्रासाद में होता था। बाहर निकलने पर बराबर दो शाही रक्षक उनके साथ रहते थे।

अपने जीवन भर में, यही एक समय था, जब कि महान पर्यटक की आँखों से निद्रा भाग गयी थी। कई रातों बाद जैसे ही मुश्किल से पलक पर पलक लगी कि वह एकाएक चौंक उठते। निद्रा कभी आती भी थी, तो चन्द मिनटों के लिये और सो भी भयानक स्वप्नों से पूर्ण। उनके जागने के वक्त के विचार आनन्दप्रद न थे। वह सोते-जागते सर्वदा भयंकर स्वप्न

में रहते थे। अब भी अखाड़े की पश्चिमी हद पर, प्रकांड पिंजड़े में वह वीभत्स जन्तु बन्द था। वहाँ उसे सिर्फ जीवित रहने मात्र के लिये खाना दिया जाता था, अधिक नहीं। जान-बूझकर उसे उस भयंकर दिन के लिये भूख से अधमरा करके रखा जाता था। इसी तरह नगर की दूसरी तरफ दो निस्सहाय भारतीय बन्द थे। उनके लिये आशा और सहायता का नाम न था, वह उस अन्तिम घड़ी को गिन रहे थे, जब उन्हें हजारों दर्शकों के नयनानन्द के लिये, एक पत्थर के देवता की पूजा के लिये, उस भीषण जानवर के सामने डाल दिया जायगा।

निस्सन्देह, यहां आशा के लिये जगह न थी। बृहस्पति के लिये नरसिंह एकमात्र आशा का स्थान था। बकुंगा के संकेत को शंकरसिंह का देखना, और युवक उड़ाके का उधर से होकर उड़ना यह दोनों सन्देहास्पद सम्भावनाएं मिलकर, सारी आशा ही को असम्भव बना देती थीं। संसार में कभी-कभी अतिसन्दिग्ध बातें भी घटित हो जाती हैं, क्योंकि मनुष्य का सन्देह उसकी अल्पज्ञता के कारण भी हो सकता है, किन्तु; असम्भव का घटित होना ही सर्वथा नामुमकिन है, क्योंकि संसार का प्रत्येक कार्य किसी कारण की अपेक्षा से है, संसार की प्रत्येक घटना तर्कानुमोदित है, इसीलिये सारे दर्शन और विज्ञान नित्य नियमों पर अवलम्बित हैं। नरसिंह अपने कर्त्तव्य को पालन करेगा, और जब अपने प्रयत्न को निष्फल देखेगा, तो वह वहाँ से कांगो-उपत्यका की ओर लौटने का प्रयत्न करेगा। इस तरह अपने ईप्सित स्थान पर उसका पहुँचना भी मुश्किल से सम्भव प्रतीत होता है। यद्यपि वह ईमानदार और सीधा मनुष्य है,किन्तु; अकेले उस भयानक यात्रा का पूरा करना उसके लिये असम्भव सा मालूम होता है।

बृहस्पति के विचार में सिर्फ अपने ही लिये लौट कर सभ्य जगत में जाने की सम्भावना थी। अनेक बार उन्होंने अपने मित्रों के दुर्भाग्य के विषय में पाली से कहा। उन्हें यह भी मालूम था, कि उसका क्या उत्तर मिलेगा। उनको आशा थी, कि वह कोई युक्ति-युक्त उत्तर देगा, क्योंकि वह पाली को असभ्य, बर्बर नहीं समझते थे।

पाली ने कहा—'तुम्हारे साथियों को बचाने की इच्छा करने पर भी मैं नहीं बचा सकता, यह तुम भी, मेरे धर्मभाई, जानते हो। कितने ही वर्षों के बाद अबकी यह जानवर जीवित पकड़ा गया है। उसका अखाड़े में छोड़ा जाना, लोग अपना हक समझते हैं। यदि मैं इसे बन्द करना चाहूँ, तो निश्चय यहाँ क्रान्ति हो जायगी। इसके अतिरिक्त यह समय बड़े देवता अमरोकी की वार्षिक यात्रा का है। मेरा व्यक्तिगत विश्वास पूछो, तो मैं उस पत्थर की मूर्ति पर कुछ भी विश्वास नहीं रखता। राजनैतिक दृष्टि से ही मैं इन सारे पर्वों में भाग लेता हूँ। अपनी यात्रा के दिनों में,जब कि मैं जवान था, मैंने देखा कि भिन्न-भिन्न जातियाँ नाना प्रकार के भूत-प्रेतों को पूजती हैं मैंने यह भी पता पाया, कि यह सारे ही भूत बैताल, अधिकांश में चालाक-सयानों और ओझों की कारस्तानी हैं। अमरोकी एक प्राचीन देवता है, इससे मुझे इनकार नहीं और इसी कारण से मैं दिखाना चाहता हूँ, कि मेरा उस पर विश्वास है। चतुर बादशाह वही है, जो अपनी प्रजा पर उसकी इच्छा के अनुसार शासन करता है। पुजारी और धर्माचार्य मेरी सहायता न करेंगे, यदि मैं उनको, उनके पूजा-अर्चा के व्यवसाय में सहायता न दूँ। इसलिये मेरा कर्त्तव्य है, कि मैं अति प्राचीन काल से होते आये तुंगाला लोगों के कर्मकांड को, उसी प्राचीन रूप में होने में मदद दूँ। इस अवसर पर अखाड़े में कम से कम दो नर-बलि अमरोकी के लिये चाहिये और यदि कोई हिंसक पशु न मिलता, तो उन्हें मन्दिर में जीते जी जला देना होता। यह रिवाज शताब्दियों से चला आ रहा है, इसका रोकना मेरे बस से बाहर की बात है।'

बृहस्पति ने देखा, उस पर और कुछ कहना व्यर्थ है। बादशाह इस हत्याकांड को नहीं रोक सकता। दुःस्वप्न ज्यों का त्यों बना रहा। इससे भी अधिक हृदयवेधक बात का ध्यान में आना असम्भव था।

भयंकर यातना के साथ मरने के सैकड़ों ढंग हैं। मृत्यु शायद उनकी बहुत शीघ्र हो। भीषण शरट (शरभ) के दाँत कुत्ते की दाढ़ों के सदृश, और एक एक-फुट लम्बे थे।

कैसी यातना, कैसी भीषण-स्थिति ? एक हब्शी जाति, जिसने एक प्राचीन सभ्यता के अनेक रीति रवाजों को अब तक क़ायम रखा है। हजारों आदमी एक विस्तृत तथा प्राकृतिक क्रीड़ा-प्रांगण में,—जिसे प्रकृति ने स्वयं अपने हाथों से, इस अद्भुत देश के स्तरीकृत चट्टानों को काट कर बनाया है—बैठे एक ऐसा तमाशा देख रहे हैं, जो कि अनेक अंशों में प्राचीन रोम के अखाड़े के समान है। फरक इतना ही है कि वहाँ अभागे मनुष्य को शेर या बाघ टुकड़े-टुकड़े करता था और यहाँ एक भीषण जन्तु जो कि आधा शेर और आधा शरट है, तथा किन्हीं-किन्हीं अंशों में महागज और कंगारू से मिलता-जुलता है। यह, निस्सन्देह दुःस्वप्न है, इसमें जरा भी वास्तविकता नहीं है।

और तिस पर भी यह यथार्थ था। वृहस्पति स्वयं इसी अखाड़े में एक ऐसे ही अद्भुत किन्तु इससे कम भयानक जन्तु के सम्मुख गये थे। उन्होंने अपनी आँखों से उन प्राणियों को देखा, जो मनुष्य के उत्पन्न होने से करोड़ों वर्ष पूर्व, पृथ्वी पर वास करते थे—ब्रण्टो शरट, स्टेगो शरट मेगेथेनियम और भीषण शरट। इससे पहिले भूगर्भशास्त्र पर उनका उतना विश्वास न था। विज्ञान ने यद्यपि उसी बात की शिक्षा दी जो, कि सत्य थी, किन्तु तो भी वह विश्वास के योग्य न थी। इस विषय में भूगर्भशास्त्र, ज्योतिष-शास्त्र के समान ही है— अर्थात् विचारने में अत्यन्त विचित्र, मनुष्य की समझ से बाहर। और वह अद्भुत जन्तु, एक विचित्र राज्य में वर्त्तमान है, जो कि सारे संसार से अलग है और जिस पर राज्य करता है, एक हब्शी हेप्नाटिस्ट, एक मनुष्य जो मदारी और वैज्ञानिक दोनों है, जिसमें जुलू योद्धा की क्रूरता और नेपोलियन की इच्छा-शक्ति है! वृहस्पति ने भू-गोल भ्रमण किया है, उन्होंने विचित्र-विचित्र मनुष्य और विचित्र विचित्र-वस्तुएं देखी हैं; किन्तु अब उन्हें जान पड़ता था, संसार विश्रृंखलित है।

यह केवल शब्द थे। इनसे उनकी या उनके मित्रों की कोई भलाई न हो सकती थी। जैसे-जैसे दिन नजदीक आता जाता था, शहर में चारों ओर विशेष तैयारियाँ होने लगीं। एक दिन सड़कों पर से धर्माचार्यों और

अन्य मनुष्यों का भारी जुलूस निकला। मन्दिर तथा राजप्रासाद में भोज हुए। आखिरकार, उस भयंकर दिन से एक रोज पहिले सायंकाल को पाली ने वृहस्पति को बुला भेजा।

पर्यटन ने पाली को उसके शयनागार में पाया, जो कि पत्थर में कटा हुआ था, और जिसकी दीवारें नाना जन्तुओं के चमड़ों से ढँकी थीं। बादशाह मोटे-मोटे बिस्तरों से ढँके एक पलंग पर लेटा हुआ था।

पाली—'मैंने तुम्हें इसीलिये बुलवाया है, मेरे भाई कि तुम्हें बताऊँ कि जो कुछ मुझसे हो सकता है मैं दोनों भारतीयों को बचाने के लिये करूँगा, यद्यपि मैं इसका कारण नहीं बतलाना चाहता।'

वृहस्पति ने बड़ी जल्दी से उसकी ओर देखा। पाली कितने ही क्षणों तक चुप रहा, और फिर बोला—

'पहिले यह निश्चय था, कि दोनों को बारी-बारी से अखाड़े में छोड़ा जायगा, पहिले लड़का और उसके बाद युवक। मैंने धर्माचार्यों को किन्तु अब ,इस बात पर राजी किया है कि दोनों एक साथ छोड़े जायँ। लोग भी इसे पसन्द करते हैं, क्योंकि ऐसा होने से उन्हें और भी भयानक युद्ध देखने को मिलेगा। मुझे इस पर विश्वास नहीं, कि दोनों आदमी निया जैसे भयानक जन्तु के सम्मुख देर तक ठहर सकेंगे। किन्तु; दोनों बहादुर हैं, और लड़का बड़ा फुर्तीला है; इसके बाद मैं उन्हें अपने प्रभाव द्वारा अधिक शक्ति दूंगा। तुम शायद इसे सम्भव नहीं समझते ? मैं तुम्हें दिखाऊँगा कि यह ठीक है। मैंने अपने प्रभाव से मुग्धावस्था में मनुष्यों से वैसे-वैसे काम करवाये हैं, जो कि अपनी सामान्य शक्तिसे वह कभी नहीं कर सकते थे। क्या कारण है, यह मैं नहीं कह सकता। मैं इसे भी स्वीकार करता हूँ कि मुझे इसका कारण मालूम नहीं। मैं सिर्फ इतना ही जानता हूँ, कि जो कुछ मैं तुमसे कह रहा हूँ, वह बिलकुल ठीक है। मेरा प्रभाव उन्हें सिर्फ मनुष्य की शक्ति से बाहर की ताकत और हिम्मत दे सकता है, और कुछ नहीं। मैं आशा करता हूँ, कि इस प्रकार वह कुछ देर तक युद्ध जारी रख सकते हैं, और यदि तब भी दोनों भारतीय जीवित रहे, तो मैं स्वयं लोगों से निवेदन करूँगा, कि

जो कुछ उन्होंने देखा उससे पता लगता है, कि अमरोकी देवता इनकी बलि नहीं चाहता।'

वृहस्पति—'और लोग इसे स्वीकार कर लेंगे?'

पाली—'सो मैं नहीं कह सकता। यह उनकी उस समय की मानसिक अवस्था पर निर्भर है। किसी जनता के मानसिक भावों को पहिले से कह देना असम्भव है।'

वृहस्पति—'तुमने, क्यों अपने विचार बदल डाले?'

पाली ने मुस्कुरा दिया, और इस समय की उसकी मुस्कुराहट किसी कदर मधुर कही जा सकती थी।

पाली—'यहाँ विचार बदलने की कोई बात नहीं। मैं तुम्हारे साथियों के मरने-जीने की कुछ परवाह नहीं करता। लेकिन, हे ज्ञानी, मैं तुम्हें अपना मित्र, सलाहकार और सेनापति बनाना चाहता हूँ। तुम्हीं मुझे अकेले ऐसे आदमी मिले, जिस पर मेरा प्रभाव नहीं पड़ सका। मैंने बार-बार इसके लिये प्रयत्न किया, किन्तु; तुम्हारा मन पराजित होते न दिखाई पड़ा। इस पर मेरे लिये दो ही रास्ता था, या तो तुमसे घृणा करूँ या प्रेम। मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। मैंने तुम्हारे मन का अध्ययन करके देखा, वह सीधा है। यदि मैं तुम्हारे मित्रों को बचा सकूं—या बचाने के लिये प्रयत्न भी कर सकूं, तो तुम उसके लिये अपने आपको कृतज्ञ मानोगे। है न?'

वृहस्पति ने सिर झुका दिया।

पाली—'बहुत ठीक! मैं चाहता हूँ कि कल तुम मेरे साथ रहो। तुम्हारी उपस्थिति आवश्यक है, क्योंकि लोग जानते हैं कि यह तुम ही हो, जिसने मेगेथेनियम पर विजय प्राप्त की।'

वृहस्पति ने बड़ी व्यथित दृष्टि से उसके चेहरे की ओर देखा, और कहा—'मैं अपने मित्रों की हत्या देखने चलूं!'

पाली—'या उनकी मुक्ति, क्या होगा, इसे मैं नहीं कह सकता; यद्यपि मुझे कुछ विचित्र और भयंकर सा होने वाला जान पड़ता है। अच्छा तो, अल्विदा, मैं अब सोऊँगा।'

जादूगर बादशाह की शपथ

उस दिन रात भर नींद न आई। यह भिनसार का समय था जब कि वृहस्पति सो गये। शरीर और मन दोनों से थके, उत्सुकता के बोझ से दबे, आज कई दिनों के बाद, वह गम्भीर निद्रा में मग्न हुए। वह बहुत अधिक देर तक सोते रहे। जब वे जागे तो स्नान-भोजन की सभी सामग्री तैयार थी। वे शौचादि से निवृत्त हुए। जलपान किया, और फिर शहर में टहलने के लिये निकल पड़े।

सारी सड़कें भरी हुई थीं। अधिकांश लोग क्रीड़ा-प्राङ्गण की ओर जा रहे थे। चारों ओर एक विचित्र आवेग, एक विचित्र खलबली अथवा जोश भरा हुआ था। लोग आपस में हँसी ठट्ठा कर रहे थे। इन सब बातों को देख कर एक अपरिचित परदेशी भी कह सकता था कि आज कोई महान् पर्व है।

वृहस्पति लौट कर अपने वासस्थान पर आये, उनका हृदय मारे व्यथा के विदीर्ण हो रहा था। आने वाली घटना उन्हें विह्वल कर रही थी। पिछले सायंकाल को उन्होंने अपने साथियों से मिलने के लिये आज्ञा माँगी थी, किन्तु; वह न मिली। यह समझा गया, कि वह आपे से बाहर हो जायँगे, वह अपने साथियों को छुड़ाने का प्रयत्न करेंगे। पाली ने एक दूत भेजकर कहा, कि मैं चाहता हूँ, कि बन्दी अकेले रहें, क्योंकि ऐसा होने से मैं अच्छी प्रकार से अपने हेप्नाटिक प्रभाव में उन्हें ला सकूंगा।

यह उनके लिये सन्तोषप्रद न था। वह फर्श पर अकेले बैठे हुए थे। उनके दोनों हाथ गालों पर थे। वह इस प्रकार कितनी देर तक विचारों में लीन रहे। अन्त में एक सन्देशवाहक ने आकर कहा—'बादशाह तुरन्त आपको बुला रहे हैं।'

वृहस्पति उठ कर गुफा-प्रासाद की ओर चले। जान पड़ता था वे स्वप्न में हैं। पाली ने कुछ वाक्य वृहस्पति से कहे किन्तु; वृहस्पति को वह

सुनाई न पड़े, वे चिन्तामग्न थे। उनका मन नरेन्द्र और सत्य के पास था। कुछ ही क्षण के बाद उन्होंने अपने आपको शाही जुलूस के साथ पाया जो सड़कों पर से होकर अखाड़े की ओर जा रहा था। वह पाली के पीछे चल रहे थे और आगे-आगे झंडा था।

क्रीड़ा-प्रांगण पर पहुँचने के बाद वह दाहिनी ओर घूमे और अखाड़े के पश्चिमी भाग पर गये। बादशाह ने अपना सिंहासन ग्रहण किया और बृहस्पति को अपनी दाहिनी तरफ बैठने को कहा।

'तुम बड़े व्यथित हो ज्ञानी ?'

वृहस्पति ने कोई उत्तर न दिया किन्तु पहिली बार उन्होंने अपनी आँखों को ऊपर उठाया और अपने चारों ओर नजर डाली। वह अखाड़े के तल से तीस हाथ ऊपर थे। दूसरे बगल की गैलरी आदमियों से भरी, कोयले की महाराशि सी जान पड़ती थी। मध्य भाग जनशून्य था। बायें वाले पीतल के दरवाजे पर बीस आदमी तैयार थे। ये शाही शिकारी थे, जिनके अधिकार में वह भयंकर जन्तु था। दूसरी ओर के पीतल के द्वार के सामने एक आदमी खड़ा था इसका काम उन दोनों अभागे मनुष्य सन्तानों को दरवाजा खोल कर अखाड़े में छोड़ना था। वृहस्पति जब इस सारे दृश्य को देख चुके तो एकाएक उन्हें अनुभव होने लगा कि उनके शरीर की एक-एक नस थर-थर काँप रही है।

तुंगाला लोगों के यहाँ कार्य आरम्भ से पहिले वैसी कोई धार्मिक या सामाजिक रस्म नहीं अदा होती थी जैसी कि प्राचीन रोमकों और आधुनिक स्पेनवाले साँड़ युद्ध में। सभी लोग उस खूनी युद्ध को देखने के लिये आये थे और जितना ही जल्द आरम्भ हो उतना ही अच्छा।

यह सब होने पर भी लोगों में असन्तोष का लक्षण न दिखलाई देता था। सारी जनता बड़े नियमपूर्वक शान्त बैठी थी। इतनी भारी भीड़ में लोगों की धीमी-धीमी काना-फूसी भी नीरवता ही के समान थी। अकस्मात् दाहिने वाला दरवाजा खुल गया।

तुरन्त ही अखाड़े में सत्यव्रत और नरेन्द्र आ खड़े हुए। दोनों ही तुंगाला

की जातीय पोशाक में थे। एक चमड़े की लुङ्गी उनके कमर से लिपटी थी। उसके अतिरिक्त उनके शरीर पर कुछ न था। उनके पास बड़े तेज धारवाले लम्बे भाले थे, उनकी धार धूप में चमचम कर रही थी।

जैसे ही दोनों आदमी चमकीले मुलायम बालू पर आये, फाटक फिर बन्द हो गया। अब वहाँ उस असंख्य जनता से परिवेष्टित दो निस्सहाय मरणोन्मुख मनुष्य खड़े थे।

तब भी उनका शिर उठा हुआ था जैसा कि मृत्यु के द्वार पर जाने वाले वीरों को होना चाहिये। वह उस जगह निश्चल कितनी ही देर तक— जो शायद कुछ सेकेण्ड से पाँच मिनट तक हो सकती है—खड़े रहे। एकाएक वृहस्पति पर जैसे भूत चढ़ आया। उन्होंने घूम कर झट अपने पीछे खड़े हुए रक्षकों में से एक का भाला छीन लिया और एक ही क्षण के बाद, कुछ कूदते और कुछ फिसलते वह अखाड़े में नीचे पहुँच गये। उसी समय पाली खड़ा हो गया और जब वृहस्पति बालू पर से होकर अपने मित्रों के पास दौड़े जा रहे थे उसने अपने बायें हाथ को पश्चिमी फाटक की ओर फैला कर बड़े जोर से चिल्ला कर कहा—'द्वार बन्द रखो। जब तक यह आदमी सुरक्षित जगह पर नहीं आ जाता, जानवर को मत निकलने दो।'

उसकी आवाज बहुत दूर तक पहुँच गयी। दरवाजे पर शिकारियों ने भी उसे सुन लिया।

इस पर जनता ने चिल्ला कर कहा—'बलिदान! महान् देवता अमरोकी एक और बलि चाहता है।'

पाली चकित हो गया। उसने चिल्ला कर कहा—मूर्खो! सुनो, जो सुन सकते हो—अपने बादशाह की बात को सुनो। यह मनुष्य मेरा रक्तभाई है। हम दोनों एक दूसरे से एक अत्यन्त मजबूत बन्धन से बँधे हुए हैं। माता, भ्राता और ज्येष्ठपुत्र भी रक्तभाई के सम्मुख कुछ नहीं है। क्या यह तुंगाला का नियम तुम्हें भूल गया?'

जनता—'बलिदान! बलिदान!'

बादशाह थोड़ी देर चुप रहा; और फिर बोला—'तुम्हें खूब मालूम

है, कि तुंगाला के रक्तभाईपने की शपथ क्या मतलब रखती है। जहाँ यह आदमी जाता है, मुझे भी वहाँ अवश्य जाना है। उसका अभ्युदय मेरा अभ्युदय है, और उसकी विपत्ति मेरी विपत्ति। न मनुष्य, न भाग्य और न गढ़े हुए देवता की मजाल है, कि हम दोनों के बीच में आवे।'

इस समय अधिकांश जनता चुप थी, तो भी कितनी ही आवाजें आ रही थीं, कि ज्ञानी भी अमरोकी पर बलि चढ़ाया जाय। इस पर बिना जरा देर किये बादशाह अखाड़े की दक्खिन ओर गैलरी पर पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही सारे मनुष्य एक साथ खड़े हो गये, और थोड़ी देर के लिये सन्नाटा छा गया। किसी को भी इसका जरा भी पता न था कि क्या होने वाला है।

और तब सबको चकित करते हुए पाली अखाड़े में कूद गया। उसके शरीर पर वही बाघम्बर और सिर पर मोरपंख था। पैर उसका नंगा था। उसके एक हाथ में एक भाला था, जिसकी लाठी रत्न और सुर्वण से जटित थी। एक मिनट के अन्दर-अन्दर वह वृहस्पति के पास पहुँच गया। उसने शान्ति पूर्वक कहा:—'मेरे रक्तभाई, चूंकि तुम घबराहट के मारे यहाँ चले आये इसलिये मैं भी आया हूँ कि यह बताऊँ, मेरे सम्मुख रक्तभाईपने की शपथ जिन्दगी से भी बढ़कर हैं।'

वृहस्पति ने एक बार उधर घूम कर उसके चेहरे पर देखा और फिर पूछा—'क्या सचमुच तुम तब तक यहाँ रहना चाहते हो, जब तक कि जानवर छोड़ा न जाय?'

बादशाह—'हाँ, ऐसा ही, यदि तुम मेरे साथ सुरक्षित स्थान पर नहीं चलते।'

वृहस्पति—'मैं, नहीं समझ सकता, इसका क्या अर्थ है। यहाँ तुम्हारे सैनिक मौजूद हैं, जो तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकते। तुम्हारे हुक्म की देरी है, और एक मिनट ही में उनमें से बीस मुझे पकड़ कर बाहर घसीट ले जा सकते हैं। तब भी तुमने स्वयं अखाड़े में उतरना पसन्द किया!'

पाली—'बिना मतलब के मैं कुछ नहीं करता। तुमको अवसर ने पागल बनाकर यहाँ भेज दिया, किन्तु; मैं बिना खास प्रयोजन के यहाँ नहीं आ सका

था। अब हम चार आदमी हैं, जिनमें मैं और तुम सबसे बलिष्ठ हैं। यह लोग अपने राजा का कितना सम्मान करेंगे, यदि वह अपने हाथ से इस भयंकर जन्तु का वध करे!—यह असम्भव नहीं है। और यदि हम मर जायँ तो भी क्या परवाह? मैं कभी यहाँ तुमारे पास न आता, यदि मेरे हृदय में जरा भी मृत्यु का डर होता। तुम्हें जानना चाहिये, मुझे वह शक्ति मिली है, जिससे मैं भविष्य को देख सकता, और अनुच्चारित को सुन सकता हूँ। रात मैंने भविष्य पर थोड़ी देर ध्यान किया, मैंने स्पष्ट देखा कि तुम्हारे साथी बच जायँगे। कैसे यह पता लगा यह मुझे मालूम नहीं किन्तु; जब मैंने तुम्हें हाथ में भाला लिये हुए अखाड़े में उतरते देखा, तो मेरे मस्तिष्क में एकदम बैठ गया, कि तुम निया को भी वैसे ही मार सकोगे, जैसे कि लोगों के सम्मुख तुमने उस जन्तु को मारा था। इसीलिये मेरे रक्तभाई, मैं यहाँ तुम्हारी सहायता के लिये आया हूँ।'

यह सारी बात उसने धीरे से कही थी। अब वह वहाँ से थोड़ी दूर हट कर बड़े जोर से बोला—'जानवर को आने दो, खोलो दरवाजा। देखो, अपने बादशाह—तुंगाल के योग्य योद्धा को'।

फाटक वाले अफसर ने खोलने से हिचकिचाहट दिखलाई, लोग भी बड़ी घबराहट में थे।

पाली—खोलो! क्या कभी और भी तुमने मेरी हुक्मउदूली की'?

अफसर ने अब और देर न की। उसने फाटक का कुंडा खोल दिया और जरा सी मेहनत से फाटक खुल गया। शायद ही उन हजारों दर्शकों में से किसी ने उस समय साँस लेने का साहस किया हो। धीरे-धीरे कई सेकेंड बीत गये और फिर कई मिनट। लेकिन कुछ न हुआ और इसी समय बड़े धीरे से भीषण शरट अखाड़े की ओर चला।

उसी समय लोगों ने गम्भीर करतल-ध्वनि की। पाली ने अपने भाले को हवा में फेंक कर पकड़ लिया, और उसी समय वह खिल-खिलाकर हँस पड़ा।

अन्तिम क्षण

शरभ अपने पिछले पैरों और पूंछ के सहारे आगे बढ़ा। उस समय उसका महान् शरीर कुछ आगे की ओर झुका हुआ था। मेगथेनियम से इसके चलने का ढंग और ही था। मेगेथेनियम जान पड़ता था, देर तक अपने आपको केवल पिछले पैरों के सहारे नहीं रोक सकता था, इसीलिये प्रत्येक छलांग में उसे अगले पैरों को जमीन पर रखना पड़ता था। किन्तु, भीषण शरट बिना अगले हाथों के प्रयोग के आगे चलने में समर्थ था। इसकी चाल बत्तख की तरह थी। आगे बढ़ने में कदम-कदम पर अपने पैरों को बहुत ऊपर तक उठाता था। इस चाल में उसका शरीर अगल-बगल में बहुत हिलता डुलता चलता था। चलते वक्त उसका अत्यन्त भारी शरीर सीधा न होकर ४५ अंश कोण पर रहता था। उसके अत्यन्त वजनी शरीर को बराबर रखने के लिये उसकी पूंछ भी बहुत वजनी थी, उसकी प्रकांड छाती की नसें बहुत ही मोटी-मोटी और मजबूत थीं। आज-कल उसके बीसवें हिस्से के बराबर भारी भी कोई ऐसा जानवर नहीं है, जो अपने पिछले पैर पर चल सकता हो, और शरभ तो अफ्रीका के हाथी से कहीं अधिक भारी था।

पाली ने अपने भाले को भूमि में फेंक कर जनता के ध्यान को अपनी ओर आकृष्ट किया। उस समय लोग नीरव और अचल बैठे थे। सारी आँखें उसी वक्त महान् जन्तु से जादूगर बादशाह पर पड़ीं। तब वह नरेन्द्र की ओर फिरा और मेस्मेरेजिष्टों की भांति अपने दाहिने हाथ को उसके ऊपर घुमाया। नरेन्द्र ने कुछ नहीं कहा। फिर उसने उसी प्रकार सत्य के ऊपर भी किया। और तब वृहस्पति से बोला:—

'मैं इन्हें लड़ने की वह शक्ति दे रहा हूँ, जो कि इनमें कभी न थी। और तुम्हारे लिये मेरे रक्तभाई, यदि मैं चाहूँ भी तब भी तुम्हारी बुद्धि या शक्ति को बढ़ा नहीं सकता। सच कहूँ, मुझे तुम्हारी अपेक्षा अपने ही से भय है। याद रखो, आज सूर्यास्त तक, या तो अमतुंगाली में शासन

करने के लिये राजा ही न रहेगा, अथवा पाली की कीर्ति, जब तक तुंगाला जाति है, तब तक के लिये अमर हो जायगी।'

अब वह वहाँ से घूमा, और उसने अपने भाले को भूमि पर से उठा लिया। एक बार फिर उसने लीला से भाले को आकाश में फेंक कर पकड़ लिया, वह उस समय उसकी धार को सूर्य के प्रकाश में चमकते ही देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ।

जान पड़ता था, जानवर ने अभी उन्हें नहीं देखा था। वह अब भी अखाड़े के दूसरे छोर पर था। वह धीरे-धीरे अखाड़े के बीच में आया, और यहाँ पहिले-पहिल उसे अपने आस-पास की भीड़ का ज्ञान हुआ। कुछ देर तक भीषण शरट बहुत ही भयभीत हो गया। उतने अधिक मनुष्यों की भीड़ को देख कर वह घबड़ा गया।

इस विषय में भीषण शरट मेगेथेनियम से भिन्नता रखता था, क्योंकि मेगेथेनियम बृहस्पति को सामने देख कर अत्यन्त क्रुद्ध हो गया था, डरा नहीं था। असल बात यह है कि भीषण शरट, मेगेथेनियम की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान जन्तु था। उसके पास यह सोचने के लिये काफ़ी दिमाग था, कि यह असाधारण जनसंघ कुछ अर्थ रखता है, और यदि उसे अवसर मिला होता, तो वह चुपचाप वहाँ से भाग गया होता।

इसके बाद, वह जल्दी से दीवार के किनारे-किनारे दक्षिण की ओर बढ़ने लगा, जान पड़ता था, वह भागने का रास्ता ढूंढ रहा है। कुछ ही मिनटों में वह पीतलवाले फाटक के पास पहुँच गया। वहाँ उसने पाली और उसके साथियों को देखा, वे उससे पचास गज से अधिक दूरी पर न थे। थोड़ी देर के लिये वह निश्चल खड़ा हो गया। उस समय उसकी आँखें उन पर थीं और खुले हुए मुंह में लम्बी-लम्बी दाढ़ें दिखलाई दे रही थीं। एक बार फिर दीवार के किनारे-किनारे सारे घिरावे की पूरी परिक्रमा करके, वह फिर पूर्वी पीतल के फाटक के पास आ पहुँचा।

इस दर्शन से सभी दर्शक आनन्दित थे, क्योंकि अब उनमें से प्रत्येक आदमी उसे अच्छी तरह देख सका था। वह देखने में बहुत धीरे-धीरे चल

रहा था, तथापि अपने लम्बे-चौड़े शरीर के कारण इतना चल रहा था, जितना कोई आदमी दौड़ कर जा सकता है। उसकी सभी चाल विचित्र थी। उसने पिछले पैरों को झुका दिया, और शरीर को इतना नीचा किया कि पेट और शिर पृथ्वी पर पहुँच गये। वह इस समय ठीक बिल्ली की भांति चिपक कर बैठा था। उसके दोनों अगले पैर उसकी आँखों से मिले थे। वहाँ वह भयंकर शरभ, जिसका शरीर हिप्पोपटमस् की भांति मोटा था, पड़ा रहा।

पाली ने फिर वृहस्पति से कहा—'मेरी ओर देखो, बिलकुल तैयार खड़े रहो। यह जादूगर बादशाह के लिये अवसर है, वह आप लोगों को दिखा दे, कि वह कहाँ तक भय से निर्मुक्त है।'

यह कह कर वह आगे बढ़ते-बढ़ते जानवर के करीब बिलकुल बीस क़दम पर पहुँच गया। उसने उसी समय भाले को जोर से फेंका, उसका निशाना इतना ठीक था, कि वह दोनों आँखों के मध्य में जाकर लगा। उसी समय जनसंघ से एक आवाज आयी, जिसमें आश्चर्य के साथ सम्मान भी मिश्रित था। तब फिर वहाँ पहिले से भी अधिक सन्नाटा छा गया।

पाली के भाले की अपेक्षा इस जनरव ने जानवर को अधिक आतंक में डाल दिया। वह एक बार फिर अपने पिछले पैरों पर खड़ा हुआ। जान पड़ता था, भाला उसकी सामने वाली हड्डी में लगा था, क्योंकि वह वहाँ से उछल कर दूर गिर पड़ा, जैसे वह पत्थर पर फेंका गया हो। भाला उसके मुंह से चार हाथ से कम ही की दूरी पर पड़ा था, तो भी एकदम पाली कूद पड़ा, और एक ही क्षण में उसे उठा कर दूर चला आया।

फिर, दर्शक आश्चर्य से चिल्ला उठे। इस समय उनकी चिल्लाहट बीच ही में रुक गई। क्योंकि भीषण शरट ने एक नया ही कांड रचा। एक बार फिर वह आगे को झुका, किन्तु अब की बार उसका शिर पृथ्वी से छः हाथ ऊपर था। और तब बड़ी बीभत्सता के साथ वह हवा में उछला।

इस प्रकार की नटों का सा तमाशा, एक कई टन वजन वाले जन्तु द्वारा किया जाना बड़ा भयानक था और बहुत मुश्किल से विश्वास करने

योग्य था। उसके कूदने का ढंग विचित्र था। वह अपने पिछले पैरों और पूंछ से अपने शरीर को धक्का दे कंगारू की भांति उछला था। जिस वक्त वह जमीन पर आया, तो कुछ क्षण के लिये उसके अगले पैर जमीन पर पहुँचे, किन्तु; फिर थोड़ी ही देर में वह अपने पिछले पैरों पर खड़ा हो गया। यहाँ वह मेगेथेनियम के समान था, दोनों ही जानवरों के अगले पैर और शरीर का अगला भाग पिछले की अपेक्षा छोटा और हलका था। इसमें सन्देह नहीं कि शरभ, मेगेथेनियम की अपेक्षा बहुत फुर्तीला था।

अब जान पड़ता था, जानवर ने निश्चय कर लिया, कि अखाड़े में के चारों आदमियों को किसी तरह समाप्त करना है। वह भयंकर हैं या नहीं, इस पर शायद अब उसका ध्यान न था।

अब वह ऊँचा खड़ा हो गया और उसका बिल्ली का सा शिर उनके ऊपर खड़ा था, उसके जबड़े खुले थे, और वह धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था। वृहस्पति ने उस भयंकर स्थिति में भी, बड़े ध्यान पूर्वक एक प्रकृतिशास्त्री की आँखों से उसकी ओर देखा और तुरन्त ही तुंगाला भाषा में जिसमें तीनों समझ सकें, कहा– जो कुछ मैं देख सकता हूँ, उससे जान पड़ता है कि जानवर का एक ही मर्म स्थान है–पेट। आखिरकार यह है भी तो आदिम शरट या छिपकली, इसीलिये सभी अन्य शरटों की भांति इसके पेट पर का चमड़ा पीठ पर की अपेक्षा अत्यन्त मुलायम है।'

पालीने हँसते हुए कहा–'ज्ञानी बिलकुल ठीक कहते हैं। ऐसे घोर समय में भी जो शान्त चित्त से विचार कर सकता है, उसका हृदय मेरे जैसा है। मेरे रक्तभाई, मैं तुम्हें बहुत प्रेम करता हूँ। अन्यथा यहाँ इस आफ़त में न आता।'

इस समय जानवर और नजदीक आ गया था; जादूगर बादशाह ने आगे झुक कर अपने भाले को जोर से चलाया। भाला जानवर के अगले पैरों के बीच में से होकर ठठरी के चमड़े में लगा। इस पर शरभ आगे बढ़ा, और भाला जमीन पर छूट गया।

उसकी चाल भयानक थी। इसमें सन्देह नहीं, कि उन जख्मों ने उसके

क्रोध को बढ़ाने के अतिरिक्त और कुछ न किया । शरभ के जबड़े, पैर और पूंछ तीनों इस समय बड़े चंचल थे । वह बहुत जल्दी से दाहिने-बायें हिलता, और बीच-बीच में कूदता था । इसके दाँत कटकटाते थे, उसकी पूंछ ऐसे जोर से जमीन पर आ पड़ती थी, कि कितना बालू गर्द की भांति ऊपर उड़ जाता था । उसकी गति इतनी तीव्र थी कि, इन लोगों को भाला फेंकने का मौका ही हाथ न आया ।

पाली की अज्ञानुसार चारों आदमी जानवर के चारों कोने पर खड़े थे, वे आशा करते थे, कि इस प्रकार कोख में मारने का मौका मिल सकेगा । किन्तु जानवर इतनी जल्द घूम रहा था, कि उन्हें इसके लिये अवसर न मिला, और इसी समय पाली चोट खाकर भूमि पर गिर गया ।

पाली इस अभिप्राय से बहुत नजदीक चला गया था, कि मौका पाकर अपने भाले को जानवर के हृदय-प्रदेश में मारे, किन्तु, उसी समय उसकी पूंछ का ऐसा झटका लगा, कि वह जमीन पर आ पड़ा । वास्तव में उसके सामने पाली का पैर एक तिनका सा था । सौभाग्य से जानवर का ध्यान उस समय सत्यव्रत पर था इसलिये उसे पता न लगा कि मैंने क्या किया । यदि पाली उसी समय खड़ा हो सका होता तो फिर भय की बात ही हट जाती । किन्तु; उसको चोट इतनी ज्यादा आई थी कि उसके पैर की हड्डी टूट गयी थी । इसलिये वह कुछ देर तक न उठ सका ।

जानवर ने उसे देख लिया और उधर लपका । अब एक ही सेकेंड में जादूगर बादशाह का खातमा था, किन्तु; वृहस्पति ने उसी क्षण अपनी जान पर खेल कर आगे बढ़ने का साहस किया । बिलकुल जानवर की दाहिनी ओर कूद कर उसके खुले हुए मुंह में जो कि उस समय भूमि के पास था, खूब तान कर उन्होंने अपने जोर भर भाला मारा ।

जानवर एकदम ठनक और गर्ज मिली हुई आवाज से चिल्ला उठा । जान पड़ता था, उसकी जीभ बहुत अधिक कट गई थी, क्योंकि उसके दोनों तरफ के ओठों से खून बह निकला । क्रोध से अन्धा और व्यथा से पागल, उसके जबड़े बन्द हो गये । वृहस्पति उसी समय उछल कर अलग हो गये ।

उनके हाथ में भाले की आधी लकड़ी थी। पाली उस समय खड़ा हो गया था, वह खतरे से बाहर था। उसने कहा—'शाबाश, मेरे रक्तभाई! शाबाश! हम अपने जीवन भर इस दिन को स्मरण रखेंगे।'

तब वह उस दीवार की जड़ में चला गया, जहाँ ऊपर उसके प्रधान अफ़सर एकत्रित हुए थे। उसने चिल्ला कर कहा—'दूसरा भाला, जल्दी गिराओ। हम अपने हाथों से निया के साथ नहीं लड़ सकते। जल्दी।'

सरुना स्वयं अपने दोनों हाथों में एक-एक भाला लिये हुए नीचे उतरा। उनमें से एक को उसने वृहस्पति को दिया और दूसरे को लिये जब वह वहीं खड़ा रहा तो पाली ने उसके कन्धे पर हाथ रख कर कहा—'तुम भी यहाँ रहोगे?'

शरीर-रक्षक कप्तान ने उत्तर दिया कि मेरा कर्त्तव्य है, बादशाह की दाहिनी ओर खड़ा रहना। किन्तु; पाली ने शिर हिलाते हुए कहा—

'मैं तुम्हारी सहायता को खुशी से स्वीकार कर लेता, लेकिन यह बात यहीं तक न रहेगी। यदि तुम यहाँ ठहरे तो देखादेखी चन्द मिनटों में शरीर-रक्षक सेना का प्रत्येक आदमी यहाँ चला आयेगा। हम अच्छी तरह जानते हैं, एक मनुष्य-सेना बड़ी आसानी से निया को मार सकती है। सिर्फ एक दो आदमियों को वह नुकसान पहुँचा सकता है।'

उनकी बात और आगे न बढ़ने पाई, क्योंकि जानवर उन दोनों की ओर लपक रहा था। पाली ने लौटते हुए कप्तान से कहा—'जल्दी, अखाड़े से बाहर! हम चारों इस समस्या को पूर्ण करेंगे अथवा प्रयत्न में नष्ट हो जायेंगे।'

इस कठिन समय में भी सरुना पाली की आज्ञा का उल्लंघन न कर सका। उदासीनता के साथ वह नातिशीघ्रता से दीवार की जड़ में आया। वहाँ से रस्से की सीढ़ी द्वारा उसे ऊपर उठा लिया गया।

इस बीच में वृहस्पति बेकार न थे। नये भाले को लिये हुए, वह जानवर के करीब चले गये और उसकी दाहिनी बगल में कन्धे की हड्डी के नीचे तीसरा वार किया।

भीषण शरट इस समय क्रोध और व्यथा से व्याकुल हो गया था। उसके चारों प्रतिपक्षी इतनी फुर्ती से इधर-उधर हट रहे थे किए क क्षण भी वे एक जगह न ठहरते थे। जानवर अपनी चेष्टा में बेखबर था। उसके अगले छोटे-छोटे पैर हवा में इस तरह हिल या नाच रहे थे कि किसी दूसरे समय वह देखने में बड़ा मनोरंजक मालूम होता।

सत्यव्रत ने प्रायः पाँच गज के अन्तर से अपने भाले को जानवर की बाईं कोख पर मारा। किन्तु; सत्यव्रत को भालेबाजी का कुछ भी अभ्यास न रहने के कारण, वह ऊपर ठठरी में जाकर लगा। सौभाग्य से भाले का फल दो ठठरियों के बीच वाले हिस्से में जाकर लगा। सत्यव्रत ने अपने पूरे जोर से भाला चलाया था, इसलिये उसका सारा फल भीतर घुस गया, किन्तु; तो भी वह उसके मोटे चमड़े को पार न कर सका था। इतने प्रयत्न के बाद सत्य ने देखा कि मैं निःशस्त्र हूँ और जानवर को मामूली काँटा गड़ने के सिवाय कुछ नहीं हुआ।

तब वृहस्पति ने बड़ी हिम्मत से काम लिया। उन्होंने अपने भाले को सत्य के हाथ में दे दिया और दौड़ कर उस गड़े हुए भाले को पकड़ कर बाहर निकालना चाहा।

थोड़ी देर तक काम असम्भव सा जान पड़ा क्योंकि भाला मोटे चमड़े और हड्डियों के बीच में धँस गया था, जहाँ से उसका हिलाना मुश्किल था। जानवर उनकी ओर बिल्ली की भांति घूमा, उसका जबड़ा उनके सिर के बिलकुल पास था। उसी समय वृहस्पति को उसके हिलते हुए अगले पैर का धक्का लगा और वह बेहोश होकर भूमि पर गिर पड़े।

वह उसके सम्मुख, बाज के सामने चुहिया की तरह थे। यदि वह सचेत भी होते तो भी उनके लिये हिलना कठिन था। जानवर ने उसी समय अपने शिर को नीचे पकड़ने के लिये झुकाया। उसे इसका स्मरण न रहा कि उसके और भी प्रतिपक्षी हैं।

सत्यव्रत और नरेन्द्र दोनों वृहस्पति की रक्षा के लिये दौड़े। पाली एक क्षण तक निश्चल रहा। सत्यव्रत जानवर के एक पक्ष में और नरेन्द्र

दूसरे में थे। सत्यव्रत एक कदम जानवर के भीतर भी बढ़ गया था। पाली ने उसी समय पागल की भांति जानवर के सिर में, जो कि वृहस्पति के शरीर से जरा ही ऊपर था, भाला मारा।

अपनी सारी शक्ति लगा कर पाली ने सम्पूर्ण भाले को निया की थूथन में ढकेल दिया। इस पर जानवर बहुत ऊँचा खड़ा हो गया और दर्द के मारे चिल्ला उठा। इस समय पाली को वह मौका हाथ लगा, जिसकी वह प्रतीक्षा कर रहा था। जान की कुछ भी परवाह न करते हुए वह वृहस्पति के शरीर पर से उछल करके जानवर के पेट के नीचे चला गया और बड़े जोर से अपने भाले को उठा कर तुंगाला के युद्धघोष के साथ उसने सारे ही भाले को अपनी मुट्ठी तक जानवर के पेट में ढकेल दिया।

यदि जानवर को वह घाव तुरन्त मार देने वाला होता तो अवश्य उसके गिरने के साथ ही पाली भी नीचे पिस कर खतम हो जाता। यद्यपि भीषण शरट का घाव पीछे प्राणान्तक ही सिद्ध हुआ, किन्तु ऐसे जानवर मरते भी जल्दी नहीं हैं। शरभ के मरण समय की व्यथा और चेष्टा देखने में भी बहुत भीषण थी।

वह कभी लुढ़कता था, कभी पछाड़ खा बगल में गिर पड़ता था। उसी समय उसने पाली को अपने अगले दोनों हाथों से पकड़ लिया। पाली बेबस था। उसने समझ लिया होगा कि मेरा अन्तिम समय आ गया है। तथापि न वह चिल्लाया, न किसी प्रकार की घबराहट या भय का चिह्न उसने अपने चेहरे पर आने दिया। नरेन्द्र और सत्य दोनों ही उसे छुड़ाने के लिये दौड़े। दोनों ने अपने-अपने भालों को जानवर के शरीर में घुसा दिया। किन्तु; यह सब कुछ भी जानवर की अन्तिम झोंक को रोकने के लिये पर्याप्त न था। उसने दस हाथ ऊपर उठा कर पाली को जमीन पर बड़े वेग से पटक दिया और पाली वहीं निश्चल, संज्ञाशून्य—मृत पड़ रहा।

वृहस्पति जिस समय अपने पैरों पर खड़े हुए, उस समय जानवर ने अपनी रक्तस्राविणी नाक को ऊपर आकाश में उठाया और एक बार सबके कलेजों को पानी करती, सारे पर्वत को गुंजाती उसकी भयानक गर्ज

सुनायी दी। तब वह भयंकर प्राणधारी गिर पड़ा और डूबते हुए जहाज की भांति बालू में मग्न होने लगा। पहिले वह अपने पिछले पैरों पर बैठ गया और शरीर का ऊपरी भाग फिर आगे की ओर गिर गया, इस प्रकार वह लम्बा पड़ गया। उसका बड़ा सिर दोनों अगले पैरों के बीच में था।

एक क्षण के बाद सारी जनता उठ खड़ी हुई। सभी ने एक आवाज से अपने बादशाह—जिसे कि वह ईश्वर की भांति पूजते थे—का नाम लेकर पुकारा—'पाली ! तेरी प्रजा तुझे पुकारती है !'

नरेन्द्र ने जल्दी से आगे बढ़ कर पाली के निश्चल शरीर को उठा कर देखा। उसका मुंह बृहस्पति की ओर हुआ। वह मानो सफेद कागज का ताव था।

नरेन्द्र ने बड़ी व्याकुलता के साथ कहा—'वह मुर्दा है, बिलकुल ठंडा, उसका फ़ेफ़ड़ा निश्चल है।'

लोग फिर चिल्लाये—'पाली ! पाली ! तुंगाला के कानों में बोलो !'

बृहस्पति उधर मुंह कर अपनी सारी शक्ति लगा कर बड़े जोर से बोले, कि जिसमें सब लोग सुन सकें।

'जादूगर बादशाह, मर गया। महान् पाली संसार से उठ गया।' सारी जनता में खलबली मच गयी, उनकी उद्विग्नतापूर्ण चिल्लाहट मालूम होती थी, पिंजड़े में बन्द सैकड़ों शेरों की निर्बल गर्जना है। उसी समय अनेक आदमी अखाड़े की ओर दौड़े; किन्तु; दक्षिण ओर शाही सिंहासन के पास से प्रबन्ध मंत्री ने खड़ा हो चिल्लाकर कहा—

'ठहरो ! यह अयुक्त है, जैसा कि सभी लोग जानते हैं। अखाड़े के भीतर प्रधान अधिकारी ही जा सकते हैं, क्योंकि यह अमरोकी का पवित्र स्थान है।'

लोग चिल्ला उठे—'बादशाह मर गया, पाली मार डाला गया। अमरोकी बदला चाहता है।'

कोलाहल इतना जोर का था कि मंत्री अपनी बात को नहीं सुना सकता था।

लोग—'बदला। एक बड़े बादशाह की मृत्यु का बदला अवश्य लेना चाहिये। मन्दिर को, भारतीयों के साथ! अमरोकी के अग्निकुंड में। इन्हीं भारतीयों के लिये पाली ने जान दी। हम चाहते हैं कि गोरे आदमी बलि चढ़ाये जायँ।'

वृहस्पति और उनके दोनों साथी अखाड़े के बीच में भौचक से खड़े थे। मारे व्याकुलता के पर्यटक की दोनों भौंहें मिल गयी थीं। वह लोगों की ओर देखने लगे। उन्होंने बड़ी उदासीनता से कहा—'बस हमारा खातमा है, यह सभी दुःख और क्रोध से पागल हो गये हैं। यह हमारा बध चाहते हैं, और अब यहाँ कोई बाधक नहीं है।

लोग—'मन्दिर को! मन्दिर को!'

नरेन्द्र—क्या अब कोई उपाय नहीं है?

वृहस्पति—'एक भी नहीं, तैयार हो जाओ मृत्यु के लिये, बस यह अन्तिम क्षण है।'

सत्यव्रत ने अपनी आँखों को विस्तीर्ण चमकते आकाश की ओर किया। उसने वृहस्पति की बात की सत्यता अनुभव की। शोकाकुल क्रोधान्ध जन-समूह की इच्छा रोकी नहीं जा सकती। इसी समय आकाश में उसे एक काला विन्दु दिखलाई पड़ा, जो बहुत ऊपर ऊँचे उसके शिर पर था। यह विन्दु घूम रहा था। जान पड़ता था, वह एक भारी चक्र बाँध कर पृथ्वी की ओर आ रहा है। जैसे ही जैसे वह घूमता था, वैसे ही वैसे उसका आकार बढ़ता जाता था। अन्त में वह क्या है, यह स्पष्ट मालूम होने लगा; वह एक वायुयान था, जिसका इंजन नीरव था, और जो अमतुंगाली शहर पर मंडराता हुआ नीचे आ रहा था।

उपसंहार

शंकर सिंह को अपने काम के कारण, जितने दिन तक ठहरने का विचार था उससे अधिक रह जाना पड़ा। वह अपने कार्य में बहुत सफल रहे। उन्होंने अपनी 'पुष्पक फैक्टरी' का कारबार जार्जटाउन, रायो-दि-जेनेरो और ब्युनस-आयरस में खोलने का सब प्रबन्ध कर लिया।

शंकर सिंह एक तरुण सज्जन हैं। उसने अपनी इस थोड़ी सी अवस्था में जैसे उड़ने में कमाल कर दिया, वैसे ही व्यवसाय में भी अपने आपको कुशल सिद्ध किया। उसके चाचा राजा रुद्रप्रताप सिंह बड़े अच्छे वैज्ञानिक और व्यवसायी पुरुष थे। उन्होंने रंगयुक्त चित्र ग्रहण करने वाला केमरा तथा हवा में वायुयान को रोक कर खड़ा रखनेवाली मशीन आविष्कृत की थी। अभी थोड़े ही दिन हुए थे कि वह परलोकवासी हुए और उनकी सारी सम्पति का अधिकारी शंकर सिंह हुआ। इसके अतिरिक्त शंकर ने संयुक्त-समाचार-पत्र-समिति का पन्द्रह लाख का इनाम भी प्राप्त किया, जिसे कि समिति ने सर्वप्रथम पृथ्वी-परिक्रामक के लिये रखा था।

नवयुवक ने अपनी इस सम्पत्ति का उपयोग बहुत अच्छी तरह किया। उड़ने और वायुयान के अतिरिक्त उसके लिये और कोई कार्य न था। वह प्रकृत इंजीनियर था। बहुत जल्दी उसने अपनी 'पुष्पक फैक्टरी' को सर्व प्रसिद्ध बना दिया। शंकर के पेटेण्ट वायुयान 'पुष्पक' में बहुत सी विशेषताएं थीं। जिससे बहुत दिन नहीं बीतने पाया कि उसकी ख्याति सारे भारत, चीन, जापान, काबुल, और टर्की में हो गयी। उसने अपने कारबार को एशिया भर ही तक रख कर सन्तोष नहीं करना चाहा। उसने इससे पहिले ही अपने कारबार के सम्बन्ध में युरोप और उत्तरी अमेरिका की यात्रा की थी, जिसमें उसे पूरी सफलता हुई।

दक्षिणी अमेरिका में अपने काम को समाप्त कर, जार्जटाउन (बृटिश गायना) से वह अपने देश-बन्धुओं की अर्पण की हुई प्रेममयी पुष्पमाला

ग कर भारत को लौटा। जिस समय वह बोमा में उतरा, तो उसे और सत्यव्रत की विपत्ति का पता लगा। मालूम हुआ कि, साथ गये रे अफ्रीकन लौट आये हैं, और वह लोग घोर जंगल में असहाय छूट गये हैं। शंकर सिंह अपने मित्रों के इस कष्ट को सुन कर अत्यंत शोकाकुल हुआ। कुमार नरेन्द्र उसके बाल-मित्र थे, और सत्यव्रत को वह बहुत छोटेपन से जानता था। उसने यह सुनकर निश्चय किया कि जैसे हो सके, वैसे, अपने मित्रों की सहायता का प्रयत्न करना चाहिये।

यद्यपि, वह समझ रहा था कि हजारों कोस के लम्बे-चौड़े घोर जंगल में दो आदमियों का पता लगाना वैसा ही है, जैसा भूसे के ढेर में सूई का खोजना। उसने निश्चय किया, जहाँ तक हो सके पृथ्वी से नजदीक होकर उड़ना चाहिये। आते के साथ ही अफ्रीका के एक वृहत् मानचित्र को उसने लेकर देखना आरम्भ किया। बोमा से पूर्व दिशा की ओर चल कर उसने कसई और काँगो के संगम को देखा। उसने निश्चय किया यहाँ से दक्षिण-पश्चिम कहीं अरुंगा उपत्यका होगी। उसे इंजन के पेट्रोल के विषय में कोई फिक्र न थी, क्योंकि 'पुष्पक' में उसका पर्याप्त खजाना था, उसके पास सभी सामान एक सप्ताह तक उड़ने के लिये मौजूद था। उड़ाके के अतिरिक्त उसमें तीन यात्रियों के आराम से बैठने का स्थान था। उसने निश्चय किया कि तीन दिन तक इस घोर जंगल की पड़ताल करनी चाहिये, यदि इस पर भी भेंट न हुई तो मजबूरी है। फिर वहाँ से नैरोबी उतरना होगा। वहाँ के देश-बन्धुओं ने मुम्बासा में ही लौटने के वक्त आने के लिये वचन लिया है।

अपने प्रोग्राम के अनुसार वह महारण्य की सीमा पर, सूर्यास्त से एक घंटा पूर्व पहुँचा। आकाश के निरभ्र होने से पृथ्वी पर आवरण न था। सभी चीजें साफ़ दिखाई दे रही थीं। शंकर बीच-बीच में अपनी दूरबीन का भी उपयोग करता रहता था। जंगल अनंत दूर तक फैला मालूम देता था। सारा प्रदेश बहुत घने और सुन्दर वनस्पतियों के वस्त्र से ढका हुआ था। एक अन्त रहित हरा कालीन पृथ्वीतल पर बिछा हुआ है, जिस कालीन

के किनारों पर नदियों का रुपहला गोटा चढ़ा हुआ है। यह गोटा एक के साथ एक मिला हुआ समुद्र की ओर बढ़ रहा है। इन नदियों पर बसे हुए गाँव, मालूम होते थे, बहुत से कबूतरों के घर हैं।

सूर्य के रक्तवर्ण होते ही, सारे आकाश में अरुणिमा छा गयी। जंगल अब काला जान पड़ने लगा। यह काला जंगल उत्तर, पूर्व और पश्चिम की ओर बढ़ता ही जा रहा था। वहाँ जहाँ तक दृष्टि डालो, जंगल ही जंगल।

यह जानकर, कि रात अब तुरन्त ही आना चाहती है, और चन्द्रमा भी देर से उगेगा, शंकर पाँच सौ हाथ की ऊँचाई से पाँच हजार हाथ ऊपर उठ गया। सूर्य की लौटती हुई किरणों से वह देख सकता था, कि उसके सम्मुख लम्बी पार्वतीय श्रेणी है, जो उत्तरी क्षितिज पर दीवार की भांति खड़ी है; देखने के साथ ही वह फिर दो हजार हाथ ऊँचे उठा। अब वह सात हजार हाथ—अर्थात् साढ़े दस हजार फुट—ऊँचे पर था।

उसके खयाल में आया इन्हीं पहाड़ों के उस पार कहीं अरुंगा उपत्यका होगी। वह अपने भाग्य को कोस रहा था, कि आया भी तो इस समय, रात को जब कि कुछ पता लगाना कठिन है। उसी समय एक पर्वत पृष्ठ पर उसे एक धीमी सी लाल आग जलती दिखाई दी। उसे देखने के लिये वह आगे बढ़कर ठीक उसके ऊपर आया। उसे मालूम हुआ, कि यह आग कुछ सौ हाथ ही नीचे होगी, अतः यह पर्वत बहुत ऊँचा होगा। उसने विचार किया, यदि यहाँ आदमी हैं, तो अवश्य उन्होंने मेरे इंजन की आवाज को सुनी होगी। चाहे उन्होंने वायुयान न भी देखा हो, तो भी कौतूहलवश जरूर इधर देखने के लिये उत्सुक होंगे। मनुष्य की विद्यमानता के बारे में, शंकर को बहुत देर तक अँधेरे में न रहना पड़ा। क्योंकि जब आग धीरे-धीरे बुझ चली, तो एकाएक उसका प्रकाश अधिक हो पड़ा। सबसे विशेष बात यह देखने में आई, कि आग लाल थी।

वैमानिक को इसी समय वोमा में, नरेन्द्र के साथ की हुई बात याद आ गयी। नरेन्द्र और सत्यव्रत ने कहा था, कि खतरे के समय हम लाल बाण फेंक कर सूचना देंगे। उन्होंने इसी अभिप्राय से उनका एक बक्स अपने

.थ भी ले लिया था। यद्यपि यह लाल बाण नहीं हैं, तो भी उसके बाद जो दूसरी चीज हो सकती है, वही यह है, क्योंकि इसकी रोशनी लाल है और पर्वत के शिखर पर जल रही है। शंकर ने आग की ओर बराबर दृष्टि लगाये रखी।

अन्धकार में, स्थान का पता न होने से वह रात को उतर न सकता था। तथापि उषादेवी के आगमन तक उसने बराबर अपनी दृष्टि को उसी पहाड़ पर रखा। वह इस सारे समय, चील की भांति, कभी अधिक ऊँचाई पर, कभी कम ऊँचाई पर चक्कर काटता रहा। अथवा कभी थोड़ी देर तक आग के ठीक ऊपर खड़ा हो जाता था। जैसे ही पर्याप्त उजाला हुआ, और नीचे की भूमि स्पष्ट दिखायी देने लगी वह पर्वत-शिखर के करीब उतर आया। उसने वहाँ एक काले रंग के आदमी को देखा, जो वैमानिककी दृष्टि को आकृष्ट करने के लिये तरह-तरह की चेष्टाएँ कर रहा था—कभी हाथ हिलाता था, कभी नाचता था, कभी दोनों हाथोंको सिर पर रख कर नमस्कार सा करता था। शंकर ने उसकी सारी ही चेष्टाओं को अपनी दूरबीन द्वारा इतनी स्पष्टता से देखा, जैसे वह कुछ ही हाथ दूरी पर हो। अब उसे निश्चय हो गया, कि इस लाल आग का अवश्य मुझसे कुछ सम्बन्ध है।

शंकर अब फिर ऊपर उठा कि, उतरने के योग्य कोई स्थान ढूंढे। उसी समय एक विचित्र दृश्य को देखकर वह चकित हो गया। क्योंकि कुछ ही मील की दूरी पर एक भारी शहर दिखाई पड़ा, वह जहाँ तक देख सकता था, सड़कें एक प्रकार की सीधी, चौक वगैरह से सुसज्जित थीं। उन सड़कों के किनारे चट्टानों में कटे हुए द्वारों को भी वह स्पष्ट देख रहा था। वह बड़ी आसानी से थोड़ी दूर हट कर एक मैदान में उतरा। वहाँ वह उस व्यक्ति की प्रतीक्षा में कितनी देर तक बैठा रहा। यद्यपि उसकी घड़ी इस सारे समय को तीन घंटे का बतला रही थी, किन्तु; उसे इससे कहीं अधिक जान पड़ा। खैर, इतने समय में उसने शौच फरागत, मुंह हाथ धोकर छुट्टी पा ली। थोड़ा जलपान भी कर लिया। अब उसने देखा, कि वह आदमी उसकी ओर हाथ हिलाते दौड़ा आ रहा है।

शंकर को खयाल न था, कि उसने बोमा में इस आदमी को देखा था। वास्तव में वहाँ उसे ऐसे अनेक आदमी देखने में आये थे। उस आदमी के लिये एक और भी कठिनाई थी; पहिले तो उसे हिन्दी के दस पाँच ही शब्द मालूम थे, दूसरे दौड़ते-दौड़ते उसका दम फूल रहा था, वह स्पष्ट बोल नहीं सकता था। तो भी उसने अपनी छाती की ओर इशारा करके कहा—

'नरसिंह', और फिर शहर की ओर इशारा करके बोला—'बाबू सत्य, बाबू नरेन्द्र, पंडित वृहस्पति—वहाँ!'

फिर नरसिंह ने 'जल्दी, जल्दी', कहकर इशारा किया कि शहर की ओर चलना चाहिये, और अन्त में फिर 'सत्य', नरेन्द्र' कह कर अपने गले पर रेतने का इशारा किया।

शंकर बड़ा मेधावी नवयुवक था, उसके लिये इतना इशारा ही काफी था। चाहे उसे उसके सभी इशारे न भी मालूम हुए हों, किन्तु इतनी बात निस्सन्देह जान पड़ी, कि नरेन्द्र और सत्य दोनों और कोई तीसरा पं० वृहस्पति भी वहाँ, उस शहर में हैं, और वे किसी भारी संकट में हैं, वहाँ शीघ्र चलने की आवश्यकता है।

उसने झट नरसिंह को एक आसन पर बैठाकर फीते से बाँध दिया, और फिर आप भी सवार हो कर विमान को आकाश में चढ़ाया। जरा ही देर में उसे फिर वह शहर दिखलाई देने लगा। नरसिंह, दूसरा समय होता तो कभी विमान पर बैठना न पसन्द करता। जैसे ही वह हवा में कुछ सौ हाथ ऊपर उठा, उसने अगल-बगल देखना बन्द कर दिया।

शंकर ने यद्यपि खतरे की बात समझ कर जल्दी पहुँचने का संकल्प कर लिया था, किन्तु वह जल्दी से, मतलब सेकेण्डों की भी देर न हो, यह न समझता था। उसे यह पता न था, कि वहाँ जीवन मरण में पलों और अनुपलों का अन्तर है। ऊपर होते ही शंकर ने ९० कोस घंटे की चाल पर इंजन को खोल दिया। नरसिंह हवा के धक्के और सर्दी के मारे और भी सिकुड़ गया। चन्द मिनटों ही में शंकर असतुंगाली के ऊपर था। उसने जो कुछ देखा, उससे बड़ा आश्चर्यान्वित हुआ। सड़कें बड़ी-बड़ी थीं। गुफा

के मकान सभी बाकायदा थे, किन्तु; वहाँ किसी आदमी का पता न था। सारी सड़कों को देख डाला, किन्तु; उसने कहीं एक आदमी भी न पाया। यही बात मन्दिरवाले पर्वत की भी थी; किन्तु; ज्यों ही वह शहर के दूसरे छोर पर पहुँचा, उसने तुंगाला के उस बड़े प्राकृतिक क्रीड़ा-प्राङ्गण को देखा।

वहाँ हजारों आदमी एकत्रित थे। सारी पैंडियाँ आदमियों के मारे काली हो रही थीं। बीच में एक विस्तृत अंडाकार निम्न स्थल था, जिसमें दो या तीन पुरुष चुपचाप खड़े थे। शंकर ने कुछ और नीचे आकर दूरबीन लगाई, देखकर उसका हृदय काँप उठा। उसने बहुत जल्दी-जल्दी चक्कर काट कर अखाड़े में उतरना चाहा, उस उतरने में उसने बड़ी सफाई से आस-पास के वृक्षों के धक्के से अपने विमान को बचाया।

तुंगाला लोगों के भय की उस समय सीमा न थी। वह प्राग्-ऐतिहासिक महाजन्तुओं से खूब परिचित थे, उन्होंने महाकाय जोलाहा—फतिंगे को भी देखा था, जिन्हें कि और किसी भी आधुनिक मनुष्य ने नहीं देखा। किन्तु; उन्हें अब तक इस प्रकार का महाकाय पक्षी नहीं दिखाई दिया था। जिस समय विमान उनके ऊपर चक्कर काटने लगा, वह सिकुड़ गये उन्होंने रक्षा के लिये, अपने सिरों पर हाथ रख लिया और इंजन की भनभनाहट को सुनते ही कानों में अंगुली डाल दी। जिस वक्त अखाड़े के ऊपर विमान दिखाई दिया, उसी समय कुछ सैनिक अखाड़े में उतर कर बन्दियों को गिरफ्तार करना ही चाहते थे। किन्तु; उसकी आकृति देखते और भनभनाहट को सुनते ही, उनके होश उड़ गये। वह सभी कायदा कानून भूल गये। और वह जहाँ-तहाँ भाग कर चट्टानों की आड़ में छिप गये।

शंकर ने पहिले पहिचान लिया था, कि तीनों आदमी भारतीय हैं। यद्यपि इस जल्दी में दूरबीन का उपयोग न करने से, वह अब भी उन्हें पहिचान न सका था। इस समय तक नरसिंह भी होश में आ गया था। वह बराबर नीचे की ओर इशारा कर रहा था।

अखाड़े की धरातल मेज की भांति बराबर और दूर तक विस्तृत थी, इसलिये उतरने के लिये किसी और स्थान के ढूंढ़ने की जरूरत न पड़ी।

पश्चिमी पीतल के द्वार से पचास गज पर विमान उतरा, और फिर वहाँ से पहिये पर चलकर वह अखाड़े के दूसरे अन्तर पर पहुँचा। अब विमान भीषण शरट के प्रकांड शव के पास था। वहाँ एक ओर प्राचीन जगत का एक अद्भुत महाकाय जन्तु था, और दूसरी ओर था आधुनिक मनुष्य की उत्कृष्ट बुद्धि का नमूना—वायुयान। हैपंयुगीन सरीसृप भयंकर और मांसाहारी था, और आधुनिक वायुयान वायु से भारी, इंजन द्वारा उड़नेवाला।

शंकर को सारे दृश्य को भली प्रकार देखने का अभी अवसर न मिला था। अभी वह एक बार सरसरी निगाह से उस भीषण मृत शरीर को देखकर आश्चर्य से चीत्कार छोड़ना ही चाहता था, कि इतने ही में नरेन्द्र ने आकर उसे अपनी छाती से लगा लिया।

नरेन्द्र—'प्यारे भाई, ठीक अन्तिम क्षण में तुम यहाँ पहुँच गये। एक ही मिनट और देर होती, तो फ़िर हम फ़भी भफ़्मफ़ात् हो गये रहते। जल्दी हमें लेकर यहाँ फ़े निकल चलो, एक मिनट भी देर करना अच्छा नहीं है।'

शंकर—'अभी ?'

नरेन्द्र—'इफ़ी क्षण। क्या विमान हम तीनों को तथा नरफ़िंह को भी ले चल फ़कता है ?'

शंकर—'हाँ, इसमें सन्देह करने की आवश्यकता नहीं।'

अब जब कि तुंगाला सैनिकों ने देखा, इस विचित्र चीज ने नीचे उतर कर भी भारतीयों को नुकसान नहीं पहुँचाया तो उन्हें भी हिम्मत हुई, और इकट्ठे होकर वह आगे बढ़े।

वृहस्पति—'चलो, जल्दी, यदि देर हुई, तो हममें से एक भी बच न सकेगा।'

एक-एक करके सब वायुयान पर चढ़ गये, यद्यपि उसमें चार ही आद-

मियों के लिये स्थान था। तुंगाला सैनिक इस समय भाला फेंकने भर की दूरी पर आ गये थे, किन्तु; जैसे ही विमान आगे को भनभनाता जमीन पर सरका, वैसे ही वे फिर भाग कर दीवारों के किनारे सट गये।

बृहस्पति ने आखिर में अपना स्थान ग्रहण किया, चढ़ने से पहिले एक बार उन्होंने शान्त, चुपचाप सोई हुई पाली की मूर्ति को देखा। उन्होंने बड़ी कोमलता से—जान पड़ता था जैसे अपने लिये—कहा, किन्तु; आश्चर्य था। भाषा तुंगाला थी—

'अल्विदा, मेरे रक्तभाई, अल्विदा। तुम एक वीर और महान् पुरुष थे, तुम इस घोर जंगल, इस असभ्य जाति में गुदड़ी के लाल थे। तुमने मेरे लिये अपने प्राण गँवाये। मैं कभी तुम्हें नहीं भूल सकता। पाली, मेरे प्यारे भाई, अल्विदा।'

यह कह कर आँखों से आँसू पोंछते बृहस्पति अपने आसन पर आ बैठे। विमान अखाड़े की लम्बाई भर दौड़कर हवा में उठा। अब अमतुंगाली उनके नीचे थी।

शंकर ने जल्द ही पर्वत छोड़ दिया। अब ऊपर साफ़ सफेद बादल की चादर उस झील पर दिखाई दे रही थी, जिसमें वे प्राग्-ऐतिहासिक महाजन्तु रहते थे। थोड़ी देर बाद अब वे विस्तृत अनन्त जंगल के ऊपर थे। इधर रात भी होने को आई, अँधेरे के साथ सर्दी ने भी जोर पकड़ा और जरा ही देर में चारों अर्द्धनग्न आदमी सर्दी से ठिठुर कर दाँत बजाने लगे।

शंकर ने कहा—'आज रात भर आप लोगों को यह कष्ट सहना होगा, क्योंकि यहाँ उतरना असम्भव है।'

इस सारी ही रात विमान पूर्व की ओर जा रहा था। सूर्योदय के साथ ही, सर्दी भी हट गई। अब चारों ओर का दृश्य दिखाई देने लगा। जरा ही देर में उनके नीचे एक समुद्र सा दिखाई पड़ा। बृहस्पति ने बताया, यदि हम दो घंटे में इसे पार कर गये, तो यह अवश्य तुंगायनका झील है। सचमुच बात वैसी ही हुई, और निश्चय हो गया कि अब हम पुराने जर्मन पूर्व

अफ्रीका में आ गये। अब यहाँ से विमान पूर्वोत्तर दिशा की ओर नौरोबी की तरफ चला। शंकर ने कहा, कि वहाँ हमारे बहुत से देश-बन्धुओं ने बुलाया भी है, और वही सबसे अच्छा, यहाँ से नजदीक स्थान है।

दस बजते-बजते लोग नौरोबी के मैदान में पहुँचे। भारतीयों ने खबर पाते ही आकर स्वागत किया। उन्हें आराम के साथ ठहराया। नंगे भारतीयों को पहिले वस्त्र दिया गया। संध्या समय स्वागत सभा होने वाली थी। बृहस्पति ने अपने साथियों को मना कर दिया, कि वह तुंगाला की अद्भुत कथा को न वर्णन करेंगे, नहीं तो विश्वास तो कोई करेगा नहीं, उलटे लोग इसे झूठ समझ कर कुछ और मन में ठहरावेंगे। सायंकाल को नौरोबी के भारतीय भवन में सभा हुई, स्वागत हुआ, और जंगलों का वर्णन भी हुआ, किन्तु; जादू के मुल्क का किसी ने भी नाम न लिया।

नरसिंह को बोमा भेजने के लिये खर्चा देकर रवाना कर दिया गया। शंकर और नरेन्द्र भारत को लौटे। बृहस्पति अपने धर्मपुत्र सत्यव्रत को साथ ले दक्षिणी अफ्रीका को लौट गये।

सारा ही वृत्तान्त असम्भव मालूम होगा, क्योंकि किसी ने इस दृश्य को अपनी आँखों से न देखा, और जिन्होंने देखा, वह वहाँ से फोटो या कोई प्रमाण नहीं लाये; तो भी इसमें असंभव क्या है? हेप्नाटिज्म ठीक है, भूगर्भ-शास्त्र ठीक है, और वायुयान भी ठीक ही है, तो क्यों ये तीनों वस्तुएं एक जगह इकट्ठी नहीं हो सकतीं?

॥ बस ॥